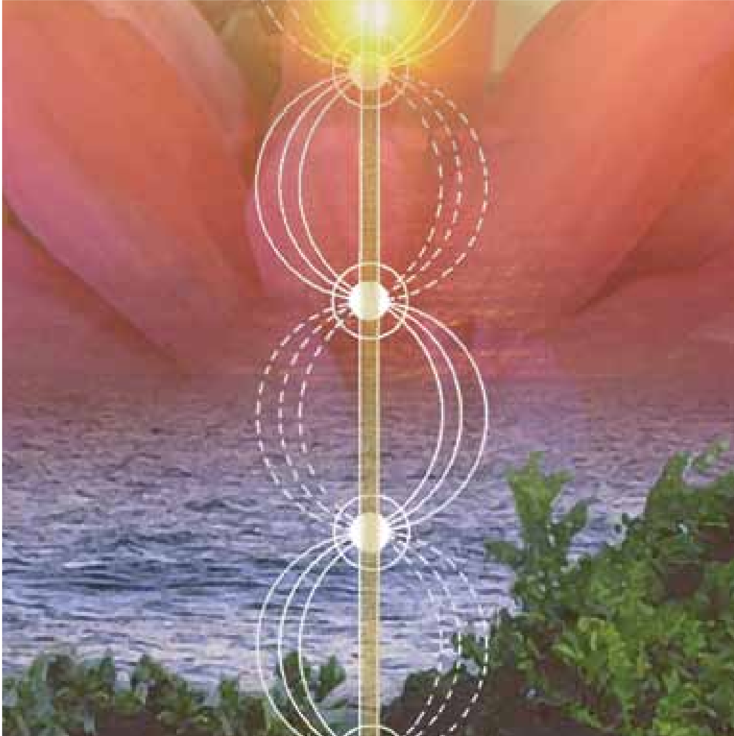
BIHAR YOGA®

प्राण विद्या

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

द्वारा दिये गये प्रशिक्षण



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

प्राण विद्या

ॐ, प्रेम, मंगलम्

स्वामी निरंजन

प्राण विद्या

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

द्वारा दिये गये प्रशिक्षण



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

प्राण विद्या

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित
प्रथम संस्करण 2022

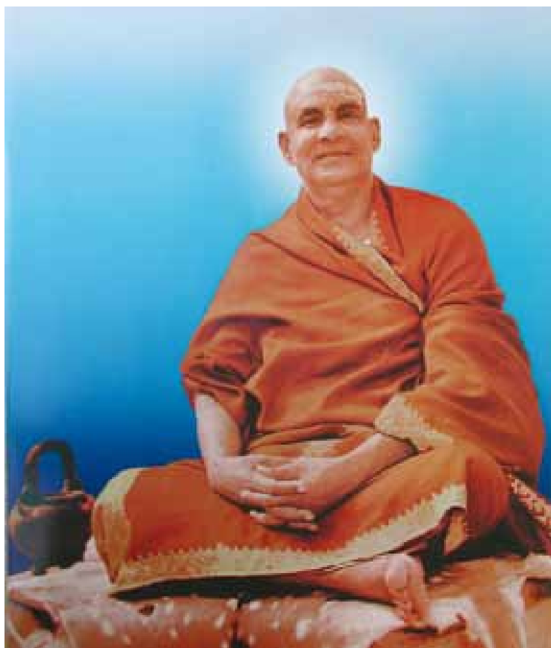
प्रकाशक एवं वितरक—योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु,
पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार

मुद्रक—थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड, नई दिल्ली

ISBN: 978-81-949328-0-2

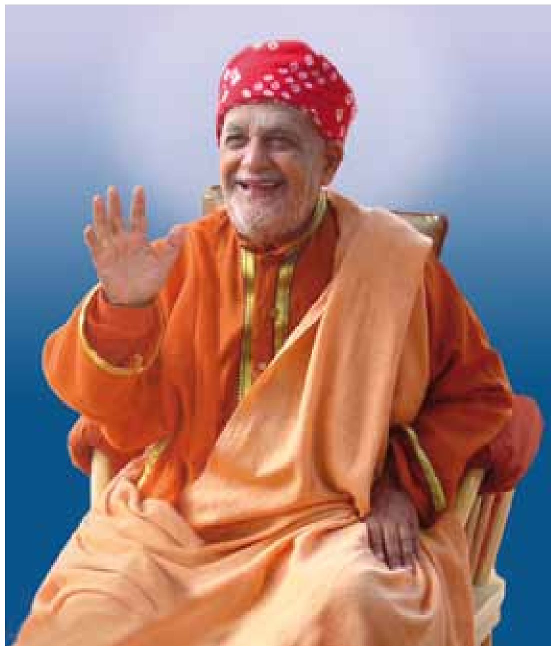
वेबसाइट: www.biharyoga.net
www.satyamyogaprasad.net

इस पुस्तक का उद्देश्य योगाभ्यासों की प्रासंगिक जानकारी उपलब्ध कराना है; यह अभ्यास-पुस्तक नहीं है और इसका प्रयोग स्वयं या दूसरों को सिखाने के लिए नहीं किया जाना चाहिए। योग का प्रशिक्षण कुशल मार्गदर्शन में लिया जाना चाहिए, जिसने इन अभ्यासों में दक्षता प्राप्त कर ली हो। शिक्षक और शिक्षण विधि के चयन का दायित्व अभ्यासी का है। बिहार योग विद्यालय किसी प्रकार भी अभ्यासी के चयन के लिए उत्तरदायी नहीं है।



सविनय समर्पण

स्वामी शिवानन्द सरस्वती के चरणों में
जिन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को योग के रहस्यों की शिक्षा दी



नमो नारायण

योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन-पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीनकाल में सुखी, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते थे। जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ, तभी से भारतवासी गरीब, दुःखी और अस्वस्थ हैं। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शान्ति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वास्थ्य। भारत में सुख, समृद्धि, शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ, 2005

विषय सूची

भूमिका

'प्राण विद्या' प्राचीन काल से ही सभी आध्यात्मिक परम्पराओं का अंग रही है। प्रत्येक साधक अपने अन्दर और अंतरिक्ष में निहित शक्ति को प्राप्त करने का प्रयास करता है। शब्दावली भिन्न है, पद्धतियों में अन्तर है, किन्तु रूपान्तरण तभी होता है जब प्राण शक्ति को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से समुचित दिशा प्रदान की जाती है। भारतीय परम्परा में ऋषियों ने इस प्रक्रिया के ज्ञान के लिए एक विशेष शब्द का प्रयोग किया, 'प्राण विद्या'।

प्राण विद्या का उल्लेख ईसा के 500 वर्ष पूर्व के उपनिषदों से लेकर योग वाशिष्ठ जैसे बाद के ग्रन्थों में भी पाया जाता है। प्रासंगिक श्लोकों से ज्ञात होता है कि वैदिक काल से साधकों द्वारा प्राण विद्या के सिद्धान्त का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता था। यद्यपि ग्रंथों में विशेष निर्देश या मार्गदर्शन नहीं दिया गया है; उस अवधारणा की व्याख्या गुरु अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर करते और अपने सुयोग्य विद्यार्थियों को वह ज्ञान प्रदान किया करते थे। इसके अतिरिक्त, प्राण विद्या का क्षेत्र अधिक व्यापक है, जबकि प्राणायाम की लगभग एक मानक पद्धति है। इसलिए अलग-अलग गुरुओं ने विभिन्न मार्गों को अपनाया, जिनके द्वारा साधक अपनी छुपी हुई शक्ति तक पहुँच कर उसे उपयुक्त दिशा प्रदान कर सके। उदाहरण के लिए, तांत्रिक परम्परा में जो पद्धति विकसित हुई उसमें शक्ति को जाग्रत करने के लिए चक्रों एवं नाड़ियों का प्रयोग किया गया।

बीसवीं सदी में सिद्ध गुरु स्वामी सत्यानन्द सरस्वती ने प्राचीन शास्त्रों में निहित विभिन्न प्रकार के गूढ़ अभ्यासों का निचोड़ निकाल कर उनके प्रयोग में साधकों का मार्गदर्शन किया। योग के अपने गहन ज्ञान के द्वारा उन्होंने अभ्यासों को निश्चित रूपरेखा प्रदान की, जिसके माध्यम से साधक क्रमबद्ध

विधि से गहन अनुभव प्राप्त कर सकता है। इसके अन्तर्गत उन्होंने योग निद्रा, प्राणायाम, अजपा जप, अन्तर्मौन, पवन मुक्तासन, शंखप्रक्षालन के अतिरिक्त प्राण विद्या का भी समावेश किया।

स्वामी सत्यानन्द ने तंत्र के आधार पर प्राण विद्या का प्रतिपादन किया। उन्होंने शरीर के अन्दर ऊर्जा के स्वरूप को पहचानने तथा उसे प्रभावित करने के लिए चक्र, नाड़ी एवं मंत्र विज्ञान का प्रयोग किया है। इससे एक स्तर पर अत्यधिक स्फूर्ति आयेगी, उपचार होगा और मानसिक स्वरूप में परिवर्तन आयेगा। धीरे-धीरे साधक को प्राण का अनुभव उस विशुद्ध प्रकाश के रूप में होगा जो उसे जीवन के स्रोत और चेतना से जोड़ेगा। अभ्यास की अंतिम अवस्था 'महाप्राण', अर्थात् ब्रह्माण्डीय ऊर्जा में विलय का मार्ग प्रशस्त करती है।

स्वामी सत्यानन्द द्वारा प्रतिपादित प्राण विद्या की मूल शिक्षा 'प्राण विद्या' नामक पुस्तक में संकलित थी, जिसका प्रकाशन वर्ष 1976 में हुआ था। पंद्रह वर्ष बाद सन् 1994 में स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती ने मूल शिक्षा का विस्तार करते हुए निर्णय लिया कि इस शिक्षा को दो खण्डों में प्रस्तुत किया जाये– 1. प्राण एवं प्राणायाम, और 2. प्राण विद्या।

'प्राण एवं प्राणायाम' का प्रकाशन वर्ष 2009 में हुआ था। इसमें प्राण के यौगिक और वैज्ञानिक, दोनों सिद्धान्तों के महत्त्वपूर्ण पक्षों को प्रस्तुत किया गया है। इसके अन्तर्गत बिहार योग विद्यालय की सत्यानन्द योग परम्परा में वर्णित प्राणायाम के अभ्यासों के एक-एक स्तर को क्रमिक ढंग से सम्मिलित किया गया है। 'प्राण विद्या' इसका उत्तरांश है, जिसमें प्राण के व्यापक आयाम का अन्वेषण किया गया है।

दो खण्डों में विभाजन यह संकेत देता है कि साधक को सर्वप्रथम प्राण को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए और प्राण विद्या का उन्नत अभ्यास आरम्भ करने से पूर्व एक अनुभवी शिक्षक के मार्गदर्शन में प्राणायाम में निपुणता प्राप्त कर लेनी चाहिए। इसलिए इस पुस्तक में दिये गये अभ्यासों को करने से पहले 'प्राण एवं प्राणायाम' पुस्तक को अच्छी तरह पढ़ लेना चाहिए और उसमें दिये गये अभ्यासों में निपुणता प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। इसके बाद भी साधक प्राण विद्या की साधना के लिए तैयार है या नहीं, इसका निर्णय गुरु द्वारा ही लिया जा सकता है।

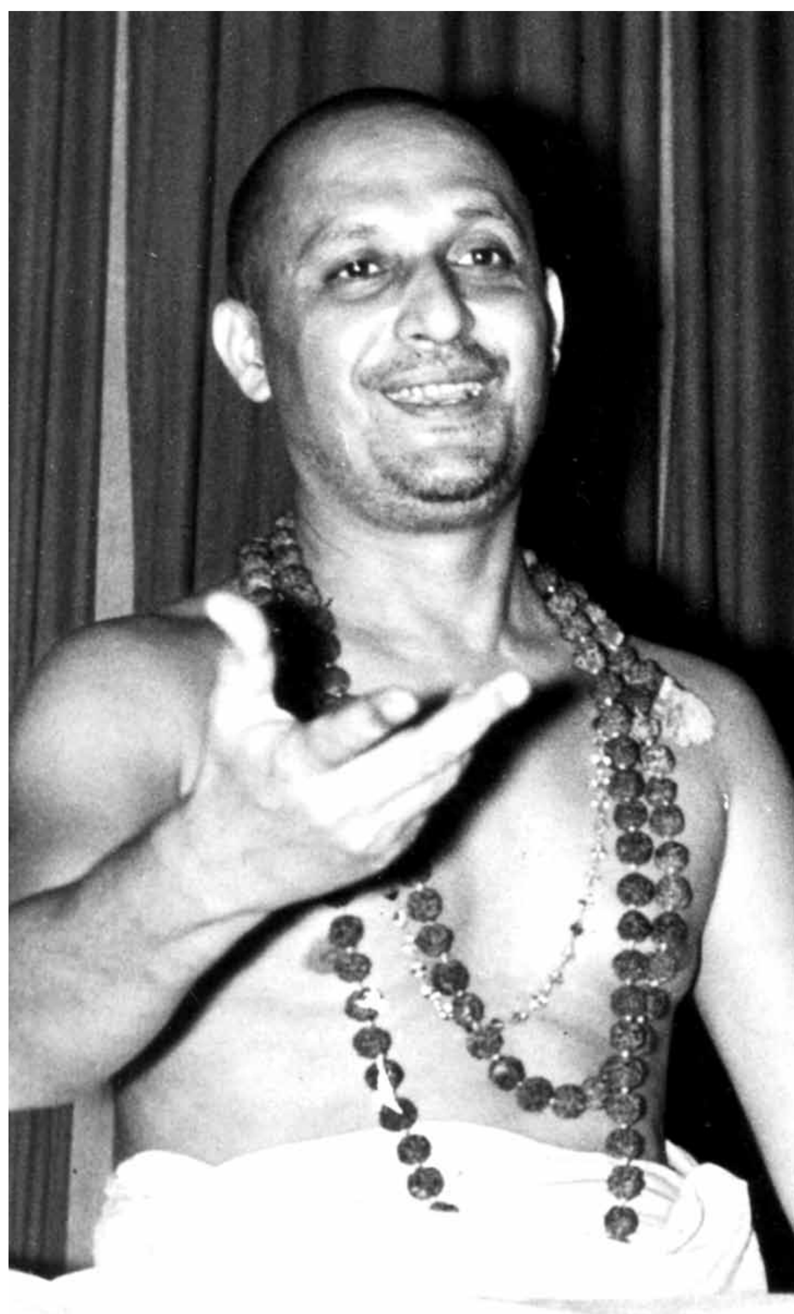
'प्राण विद्या' के विषय को दो भागों में विभक्त किया गया है। पहले भाग में प्राण विद्या के सिद्धान्तों पर विचार किया गया है, जिसमें इसे ध्यान की

एक विधि, प्राण के ज्ञान को प्राप्त करने के एक साधन, उपचार की कला और विज्ञान, प्राण को नियंत्रित और प्रभावित करने के कौशल इत्यादि के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें विश्व के सुविख्यात वैज्ञानिकों द्वारा किये गये शोध भी सम्मिलित हैं जो उन योगियों तथा उपचारकों की अवधारणा को मान्यता प्रदान करते हैं जिनकी प्राचीन विद्या सदियों से लोगों को प्रेरित करती आयी है।

भाग दो में अभ्यास दिये गये हैं। अध्याय 7 से 10 में प्राण विद्या के लिए शरीर, मन और प्राणों को तैयार कर उसी स्थिति में बनाये रखने के लिए विभिन्न अभ्यासों का वर्णन है। अध्याय 11 से 16 में प्राण विद्या की अवस्थाओं को क्रमिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। अन्त के दो अध्यायों में उन अभ्यासों को सम्मिलित किया गया है जिनमें अपने और दूसरों के उपचार के लिए प्राण को सजगता के साथ उपयुक्त दिशा में प्रेषित किया जाता है। अंतिम अध्याय में क्रमश: स्वामी सत्यानन्द एवं स्वामी निरंजनानन्द द्वारा संचालित की गयी उच्च प्राण विद्या की कक्षाओं का प्रतिलेखन प्रस्तुत किया गया है।

प्राण विद्या की पहली अवस्था के अभ्यास प्राण को जाग्रत करते हैं। अगली अवस्था के अभ्यास जाग्रत प्राण को बढ़ाते और उन्हें संचित करते हैं। अधिक उन्नत अभ्यास आन्तरिक रूप से सम्पूर्ण शरीर में तथा बाह्य रूप से आस-पास के वातावरण में प्राण के विस्तार और वितरण को सुगम बनाते हैं। आगे की प्रत्येक अवस्था के अभ्यासों का उद्देश्य उत्तरोत्तर प्राणिक सजगता, संवेदनशीलता और नियंत्रण का विकास करना होता है। अगली अवस्था में जाने के पूर्व प्रत्येक अवस्था में निपुणता प्राप्त करना आवश्यक है; इसमें एक महीना, एक वर्ष या उससे भी अधिक समय लग सकता है। आगे बढ़ने के लिए शीघ्रता नहीं करनी चाहिए।

साधक जैसे-जैसे अभ्यास में आगे बढ़ता है, अतीन्द्रिय अनुभव होने लगते हैं और प्राय: मार्गदर्शन आवश्यक हो जाता है। अत: प्राण विद्या में सफलता के लिए नियमित अभ्यास, धैर्य और गुरु के निर्देशों के प्रति निष्ठा आवश्यक है। यदि साधक इस मार्ग पर दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ता है तो अंतत: उसे ध्यान तथा समाधि का अनुभव होगा।



सिद्धान्त

1

प्राण विद्या– परिचय

ब्रह्माण्ड के दो मूल सिद्धान्त हैं–प्राण शक्ति एवं चित्त शक्ति। द्वैत जगत् में इनका पृथक् अस्तित्व है, तथापि ये एक ही सिद्धान्त के दो विपरीत ध्रुव हैं। इस प्रकार प्राण के स्तर में परिवर्तन लाकर चेतना की अवस्था में परिवर्तन लाया जा सकता है और इसके विपरीत क्रिया भी हो सकती है ('प्राण एवं प्राणायाम' पुस्तक के पृष्ठ संख्या 2 से 4 और 9 से 11 को देखें)।

तंत्र में इस सिद्धान्त की मान्यता है कि चेतना का विस्तार विशेष रूप से ऊर्जा के मुक्त होने के कारण होता है। इसलिए यदि एक हजार वर्ष तक भी ध्यान किया जाये और ऊर्जा मुक्त न हो तो चेतना का विकास संभव नहीं है। यद्यपि आधुनिक मनोविज्ञान इस प्रक्रिया की व्याख्या नहीं कर सकता, तथापि तंत्र विज्ञान हमेशा इस तथ्य से परिचित रहा है कि प्राण के जागरण या ऊर्जा के मुक्त होने से ही पराचेतना की अवस्था प्राप्त होती है। अब प्रश्न यह उठता है कि पदार्थ में निहित यह ऊर्जा किस प्रकार मुक्त होती है। शरीर के अन्दर अद्भुत् शक्ति है, परन्तु उसे किस प्रकार प्रकट किया जाये? यह सर्वविदित है कि वैज्ञानिकों ने स्थूल पदार्थ में से नाभिकीय ऊर्जा को मुक्त किया है। इसीप्रकार, शरीर में स्थित प्राण शक्ति को मुक्त करने की प्रक्रियाओं का विकास करना तंत्र और प्राणविद्या का उद्देश्य है।

प्राण विद्या का विज्ञान

व्यक्तिगत स्तर पर शरीर के अन्दर प्रवाहित होने वाली प्राण शक्ति प्रत्येक अंग को जीवित और क्रियाशील रखती है। यह वैयक्तिक प्राण शक्ति उसी प्रकार ब्रह्माण्डीय प्राण का अंग है जिस प्रकार वैयक्तिक चेतना ब्रह्माण्डीय चेतना का

अंग है। 'विद्या' का अर्थ है ध्यान या ज्ञान। इस प्रकार प्राण विद्या का अर्थ है प्राण शक्ति का ज्ञान, प्राण शक्ति पर ध्यान या प्राण शक्ति की अनुभूति – पहले वैयक्तिक स्तर पर और अन्तत: ब्रह्माण्डीय स्तर पर।

प्राण शरीर एवं मन को उसी प्रकार शक्ति प्रदान करता है जिस प्रकार विद्युत धारा यंत्रों को शक्ति प्रदान करती है। योग वाशिष्ठ (3:17) में कहा गया है–

बहुनाऽत्र किमुक्तेन सर्वमेव शरीरके।
करोति भगवांवायुर्यंत्रेहामिव यांत्रिक: ॥

दिव्य प्राण वायु शरीर के अन्दर उसी प्रकार सभी क्रियायें करती है, जिस प्रकार मशीन चालक मशीन से कार्य करता है।

जिस प्रकार बिजली के वोल्टेज को बढ़ाया जा सकता है उसी प्रकार शरीर में प्राण के भंडार में वृद्धि की जा सकती है। बिजली के कम वोल्टेज से छोटी मशीनें, बिजली के बल्ब, हीटर इत्यादि चलाये जा सकते हैं। लेकिन उसी विद्युत धारा को यदि आर्मेचर, घुमावदार या घूर्णी कुण्डलों से बहुत बार परिसंचरित किया जाए तो उसकी शक्ति अत्यधिक बढ़ सकती है। वह 10,000 वोल्ट की बिजली उत्पन्न कर सकती है और बड़े-बड़े जेनरेटरों को चलाने तथा पूरे शहर को प्रकाशित करने की क्षमता रखती है। इसी बिजली को विशेष तकनीकों के द्वारा अत्यन्त शक्तिशाली लेज़र किरणों के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। लेज़र किरणों में जो शक्ति और क्षमता होती है, वह सामान्य बिजली की ही उच्चतर अवस्था है।

प्राण विद्या में इसी प्रकार की विधि का उपयोग किया जाता है। गहन एकाग्रता, एकाग्र सजगता और मानसदर्शन का प्रयोग करते हुए अतीन्द्रिय ऊर्जा को शरीर के अन्दर स्थित विशेष नाड़ियों में संचारित किया जाता है। कुछ समय पश्चात् इस प्रक्रिया द्वारा अत्यधिक प्राण शक्ति उत्पन्न होती है। वास्तव में प्राण विद्या धीरे-धीरे प्राण के क्षेत्र में इतनी व्यापक सजगता और नियंत्रण का विकास कर देती है कि व्यक्ति के अन्दर सुप्त प्रबल ऊर्जा जाग्रत हो जाती है। योग याज्ञवल्क्य (7:20-21) में कहा गया है–

स्थानेष्वेतेषु मनसा वायुमारोप्य धारयेत् ॥
स्थानात्स्थानात्समाकृष्य प्रत्याहारं प्रकुर्वत: ।
सर्वे रोगा विनश्यन्ति योगा: सिद्ध्यंति तस्य वै ॥

व्यक्ति को मन की सहायता से प्राण को महत्त्वपूर्ण बिंदुओं पर रोक कर रखना चाहिए। जो प्रत्याहार के द्वारा प्राण को एक बिंदु से दूसरे बिंदु पर ले जाता है, उसके सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। उसका योग सफल हो जाता है।

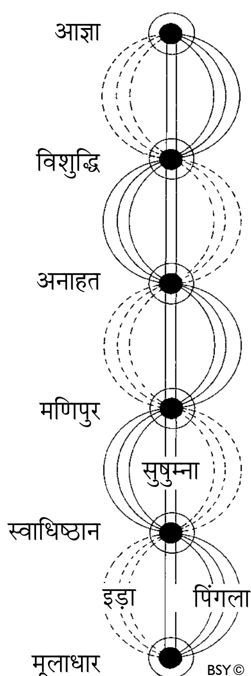
इस पुस्तक में प्राण विद्या को इस प्रकार क्रमिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है कि इसके अभ्यास उत्तरोत्तर स्पष्ट होते जाते हैं। प्रत्येक अध्याय में प्राण विद्या के एक आवश्यक चरण को रखा गया है और उसमें प्रासंगिक अभ्यास श्रेणीबद्ध ढंग से दिये गये हैं। अभ्यासों का चयन इस प्रकार किया गया है कि प्राण विद्या के प्रत्येक पक्ष का अनुभव और बोध अच्छी तरह हो जाये। यद्यपि यह स्मरण रखना चाहिए कि इस पुस्तक में दिये गये अभ्यास प्राण विद्या के व्यापक क्षेत्र का एक नमूना मात्र हैं।

प्राणमय कोश

योग के अनुसार, मनुष्य अस्तित्व के पाँच आयामों का अनुभव करने में सक्षम है, जिन्हें 'पंच कोश' कहा जाता है। ये पंच कोश हैं–1) अन्नमय कोश 2) प्राणमय कोश 3) मनोमय कोश 4) विज्ञानमय कोश और 5) आनन्दमय कोश।

प्राण विद्या का सम्बन्ध प्राणमय कोश से है, जिसमें चक्र और नाड़ियाँ आती हैं। छः चक्र होते हैं– मूलाधार (पुरुषों में जननांग और गुदा के बीच) और (स्त्रियों में गर्भाशय ग्रीवा के पीछे), स्वाधिष्ठान अनुत्रिक (कॉक्सिक्स) पर, मणिपुर नाभि के पीछे, अनाहत उरोस्थि के पीछे हृदय के स्तर पर, विशुद्धि कण्ठकूप के पीछे और आज्ञा भ्रूमध्य के पीछे स्थित है। दो अन्य चक्र होते हैं, जिन्हें उपर्युक्त चक्रों के समूह में ही रखा जाता है, वे हैं– बिन्दु, सिर के पीछे सबसे ऊपरी भाग में और सहस्रार, सिर के शीर्ष पर।

नाड़ियों की संख्या 72,000 या इससे भी अधिक होती है। इनमें से तीन प्रमुख हैं, जिनका उपयोग प्रायः तांत्रिक अभ्यासों में किया जाता है। ये तीनों नाड़ियाँ मेरुदण्ड के अन्दर स्थित होती हैं और इनके नाम हैं इड़ा, पिंगला एवं सुषुम्ना। सुषुम्ना नाड़ी केन्द्र में होती है और इसका सम्बन्ध आध्यात्मिक ऊर्जा से होता है। इड़ा नाड़ी एवं पिंगला नाड़ी सुषुम्ना के दोनों ओर से कुण्डलित होती हुई मूलाधार से आज्ञा तक प्रत्येक चक्र पर एक-दूसरे को काटती हुई



आगे बढ़ती हैं। ये दोनों क्रमशः मनस् एवं प्राण शक्ति की द्योतक हैं। आज्ञा चक्र पर दोनों आपस में मिलती हैं और एक साथ सहस्रार तक जाती हैं। ('प्राण एवं प्राणायाम' पुस्तक की पृष्ठ संख्या 20 से 58 को देखें)

ऐसी अनेक विधियाँ हैं जो प्राण की अनुभूति को सुगम एवं व्यापक बनाती हैं। प्रारंभ में सूक्ष्म अनुभूतियाँ होती हैं, जो भौतिक शरीर के विभिन्न अंगों में या प्राणिक शरीर के विभिन्न क्षेत्रों में प्राण के विद्यमान होने का संकेत देती हैं, जैसे गर्मी या झुनझुनी की अनुभूति। जैसे-जैसे साधक प्राण विद्या में अधिक निपुण होता जाता है, उसमें प्राणों की सजगता अत्यन्त सूक्ष्म होती जाती है और उसे नाड़ियों में प्राण के प्रवाह का अनुभव ऊर्जा की धारा तथा प्रकाश कणों के रूप में होने लगता है। जब प्राणिक शरीर का यह बोध पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है, तब प्रकाशमान शरीर दिखायी देने लगता है, जिसमें हजारों जाल जैसी संरचनाओं में प्रवाहित होती शक्ति को देखा जा सकता है। ये नाड़ियाँ हैं। स्थूल शरीर के अन्दर हजारों नाड़ियाँ हैं जो प्रत्येक अणु तक चेतना एवं प्राण का वितरण करती हैं। योग वाशिष्ठ (3:19) में नाड़ियों की सूक्ष्म संरचना का वर्णन है जिनसे देदीप्यमान प्राणिक शरीर की रचना होती है–

सहस्रविनिकृत्ताङ्गाद्बिसंततुलवादपि ।
दुर्लक्ष्या विद्यमानाऽपि गतिः सूक्ष्मतराऽनयोः ।।

हजार भागों में कटे हुए कमल के रेशे को देखने से कहीं अधिक कठिन है नाड़ियों को देख पाना, और उससे भी अधिक कठिन है उसमें प्रवाहित होने वाले प्राण का अनुभव करना, क्योंकि वह अत्यन्त सूक्ष्म है।

कभी-कभी प्रकाश की ये किरणें वास्तव में दिखायी पड़ती हैं, और कभी केवल इस प्रकाश की स्मृति रह जाती है। स्मृति में, स्वप्न में, विचार में, मानसदर्शन में या कल्पना में इन प्रकाश मार्गों की खोज प्राण की ही खोज है।

अभ्यास के आधार

प्राण विद्या एक अत्यन्त सूक्ष्म, किन्तु शक्तिशाली अभ्यास है जिसमें धैर्य, गहन एकाग्रता और सूक्ष्म बोध की आवश्यकता होती है। यह उन विधियों से आरम्भ होता है जो प्राणिक शरीर में सुप्त प्राण को जाग्रत करती हैं। प्राण का आधार मूलाधार है; मणिपुर में यह संचित होता है और आज्ञा चक्र इसका वितरण केन्द्र है। सामान्यत: प्राण विद्या के अभ्यासों द्वारा मूलाधार चक्र से प्राण को जाग्रत किया जाता है। मूलाधार से प्राण को जाग्रत कर आरोहण करते हुए आज्ञा चक्र में ले जाया जाता है, जहाँ यह अस्थायी रूप से संचित रहता है और वितरण केन्द्र बनता है। जब पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न हो कर आज्ञा में संचित हो जाती है तब शरीर के विभिन्न भागों में इसका वितरण किया जाता है। प्राण का विस्तार शरीर के बाहर के वातावरण को प्रभावित करने और दूसरों के उपचार तथा उनकी सहायता के लिए भी हो सकता है। अभ्यास समाप्त करने के पूर्व जाग्रत ऊर्जा को उसके मूल स्रोत, मूलाधार में वापस ले जाना आवश्यक होता है।

मूलाधार से प्राण का आरोहण एक प्राणिक मार्ग से किया जाता है। इसके लिए किस मार्ग का उपयोग किया जाये और इस अवस्था में 'क्या किया जाये या न किया जाये' के सम्बन्ध मे कभी-कभी भ्रम उत्पन्न हो जाता है। प्राण विद्या में प्राण के आरोहण के लिए मुख्य रूप से पिंगला नाड़ी का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि प्राणिक शरीर में यह अधिक बहिर्मुखी प्राणिक ऊर्जा की प्रतीक है। पिंगला के माध्यम से प्राणों का संचरण इस सौर ऊर्जा को जाग्रत करता है और इसका विस्तार करता है। इसलिए साधक को अभ्यास द्वारा उन विधियों में निपुणता प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए जिनमें पिंगला नाड़ी का प्रयोग होता है। प्रशिक्षक के निर्देशों के अनुसार प्रारम्भिक अथवा उच्च अभ्यास के रूप में सुषुम्ना नाड़ी का भी प्रयोग किया जा सकता है। तथापि साधक को प्रारम्भ में प्राण के आरोहण के लिए इड़ा नाड़ी का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि यह मानसिक एवं चन्द्र ऊर्जाओं के अन्तर्मुखी प्रवाह का वहन करती है। यदि प्रारम्भिक अवस्था में ही इड़ा नाड़ी का प्रयोग किया जाता है तो मानसिक शक्तियों के प्रबल होने और इनके द्वारा प्राणिक ऊर्जा के क्षीण होने का भय रहता है। यह शारीरिक एवं मानसिक अस्थिरता का भी कारण बन सकता है। जब अभ्यास के अन्त में प्राण को मूलाधार में लौटाया जाता है तब सामान्यत: सुषुम्ना नाड़ी का प्रयोग किया जाता है; विशेष अवस्थाओं में ही इड़ा या पिंगला का प्रयोग किया जाता है।

प्राण विद्या का अभ्यास आरम्भ करने से पूर्व इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना के प्रवाहों को सही ढंग से समझ लेना आवश्यक होता है। अन्त में यह स्मरण रखना चाहिए कि प्राण विद्या का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है, इसलिए गुरु को ही यह निर्णय लेना चाहिए कि साधक को किस प्रकार इसका अभ्यास करना चाहिए।

प्राणायाम से प्राण विद्या

प्राणायाम स्वाभाविक रूप से प्राण विद्या के अभ्यास के लिए एक सोपान का कार्य करता है। प्राणायाम की असंख्य विधियाँ उपलब्ध हैं, जो श्वास पर नियंत्रण एवं श्वास के प्रति सजगता का विकास करती हैं जिससे अप्रत्यक्ष रूप से प्राण का जागरण और विस्तार होता है। प्राणायाम के क्रम में सम्पूर्ण शरीर में कुछ रचनात्मक शक्ति उत्पन्न होती है जो पहले से विद्यमान प्राण को प्रभावित करती है। 'योग सूत्र' में महर्षि पतंजलि ने कहा है कि प्राणायाम चक्रों को सक्रिय कर देता है और मस्तिष्क में ऐसी अवस्था उत्पन्न कर देता है जिससे अंतर्निहित आत्मिक क्षमताएँ प्रकट हो जाती हैं। परिणामत: मन एकाग्रता के लिए तैयार हो जाता है।

नियमित अभ्यास द्वारा प्राणायाम श्वास को गहरा एवं लम्बा करता है और बिना किसी प्रयास के श्वास को रोक कर रखने की क्षमता प्रदान करता है। प्राण विद्या के लिए इस प्रकार की श्वास आवश्यक है, क्योंकि श्वास एवं प्राण एक शक्ति के रूप में धीरे-धीरे अतीन्द्रिय पथों और नाड़ियों में ऊपर-नीचे प्रवाहित होते हैं। प्राण को आज्ञा चक्र में संचित करने के लिए पूरक के अंत में कुम्भक करना होता है। श्वास प्रवाह और कुम्भक को प्रयासरहित होना चाहिए ताकि सजगता पूरी तरह प्राण पर ही केन्द्रित रहे।

प्राण विद्या के पूरे अभ्यास के दौरान उज्जायी प्राणायाम प्रशान्तक प्राणायाम के रूप में कार्य करता है। प्राण की क्षमता में वृद्धि करने और मन, शरीर एवं प्राण की अंतर्क्रियाओं पर चेतन रूप से नियंत्रण का विकास करने के साथ-साथ प्रशान्तक प्राणायाम शरीर तथा मन को शांत करता है। उज्जायी प्राणायाम को अतीन्द्रिय श्वसन के रूप में जाना जाता है, क्योंकि यह मन एवं आत्मिक संवेदनशीलता की बहुत सूक्ष्म अवस्थाओं की ओर ले जाता है। यह प्राण विद्या का एक अनिवार्य पक्ष है और इसका अभ्यास किसी भी अवस्था में किया जा सकता है– खड़े होकर, बैठ कर या लेट कर। जब ध्यान में उज्जायी का प्रयोग किया जाता है तब दोनों नासिकाओं से पूरक एवं रेचक किया जाता है, और

कुम्भक नहीं करते हैं। ('प्राण एवं प्राणायाम' पुस्तक की पृष्ठ संख्या 59 से 60 और 245 से 250 को देखें)

प्रारम्भ में शरीर के सभी भागों में प्राण को, जीवनी शक्ति को अनुभव करने के लिए श्वास का प्रयोग एक माध्यम के रूप में किया जा सकता है। सजगता एवं श्वास को शरीर के विभिन्न भागों में क्रमबद्ध ढंग से ले जाने पर मन धीरे-धीरे ऊर्जा के प्रवाह के प्रति संवेदनशील हो जाता है। जिस क्षण ऐसा होता है, श्वास की सजगता प्राण की सजगता में रूपान्तरित हो जाती है।

शरीर का प्रतिचित्रण

प्राण के प्रवाह को पूरी तरह समझने और दिशा प्रदान करने के लिए शरीर की आंतरिक क्रियाओं का ज्ञान होना आवश्यक है। यदि किसी मार्ग विशेष का विस्तृत ज्ञान हो तो प्राण को उस निश्चित मार्ग पर ले जाया जा सकता है (उदाहरणार्थ पाचन नली)। उसके बाद प्राण को कल्पना शक्ति के द्वारा दिशा प्रदान की जा सकती है। एक अन्य उदाहरणस्वरूप, यदि साधक को शरीर की आंतरिक संरचना का ज्ञान हो तो प्राण को शरीर की किसी भी हड्डी में ले जाया जा सकता है।

प्राण विद्या के सफल अभ्यास के लिए शरीर का विस्तृत ज्ञान होना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, यदि किसी को मानसिक रूप से वृक्क का स्पर्श करने के लिए कहा जाये तो संभवत: उसे ढूँढ पाना अत्यंत कठिन होगा। इसलिए प्राण विद्या का अभ्यास आरंभ करने के पहले वृक्क, मूत्राशय, हड्डियों, रक्त नलिकाओं तथा शरीर के अन्य महत्त्वपूर्ण अंगों की स्थिति का मानसदर्शन और पूर्ण सजगता के साथ मानसिक रूप से उनका स्पर्श किया जाना चाहिए। शरीर की पूरी जानकारी के अभाव में भी प्राण विद्या का अभ्यास किया जा सकता है, किन्तु वह अभ्यास उतना सफल नहीं हो पायेगा।

इस दृष्टि से प्राण विद्या के अभ्यास की तैयारी के लिए योग निद्रा का अभ्यास उपयोगी होगा। वस्तुत: शरीर के आंतरिक अंगों की सजगता का विकास करने के लिए विशेष योग निद्रा का अभ्यास किया जा सकता है (अध्याय 9 देखें)।

लाभ

प्राण विद्या के अभ्यास से व्यक्ति के अंदर धीरे-धीरे प्राण की मात्रा बढ़ती जाती है। यह विस्तार आंतरिक और बाह्य, दोनों स्तरों पर होता है। व्यक्ति

में प्राण की सजगता और क्षमता में वृद्धि उसके बढ़ते हुए प्रभाव के माध्यम से दृष्टिगोचर होती है। इसके अतिरिक्त नाड़ियों में प्राण के आरोहण एवं अवरोहण से ऊर्जा के अवरोध समाप्त हो जाते हैं। जब ऊर्जा मुक्त होती है तब वह वितरण के लिए उपलब्ध हो जाती है, और उससे अंगों, पेशियों, हड्डियों, कोशिकाओं और अणुओं का पोषण होता है। जीवन दायिनी ऊर्जा की अधिकता से और तनाव के कम होने से शरीर की विभिन्न प्रणालियों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है और उनमें परस्पर सामंजस्य स्थापित हो जाता है।

जब प्राण प्रचुर मात्रा में निर्बाध प्रवाहित होता है तब मन की नकारात्मकता और भावनात्मक तनाव दूर हो जाते हैं। मानसिक स्थिति शरीर के भीतर प्राण की वर्तमान स्थिति को दर्शाती है, और इस प्रकार प्राण के प्रवाह को उपयुक्त दिशा प्रदान करने पर मन शांत एवं स्थिर हो जाता है। जब मन स्थिर और शांत हो जाता है तब एकाग्र होने की क्षमता का विकास होता है तथा धारणा एवं ध्यान की अवस्थाओं का अनुभव किया जा सकता है।

प्राण विद्या के माध्यम से प्राण एवं जीवन के संदर्भ में गहरी समझ और उच्च स्तर की चेतना उभरती है। समुचित ज्ञान तथा समझ के साथ प्राण का उपयोग अपने और दूसरों के उपचार के लिए किया जा सकता है। प्राण में सर्वोच्च दक्षता प्राप्त करके, जैसी कि गुरु में होती है, किसी वस्तु या उपासना स्थल में प्राण प्रतिष्ठा द्वारा प्राण को दिशान्तरित किया जा सकता है (अध्याय 5 देखें)।

स्वामी सत्यानन्द ने कहा है कि प्राण विद्या के पूर्ण लाभ का अनुभव तभी प्राप्त होता है जब प्राण के प्रवाह का पूरा ज्ञान हो जाता है। जब ऐसा होता है तब सम्पूर्ण शरीर और मन को ऐसी नयी शक्ति प्राप्त हो जाती है कि नया जन्म होने जैसा अनुभव होता है। स्वामी सत्यानन्द ने इसकी तुलना हारमोनियम या पियानो जैसे संगीत वाद्यों से की है। यदि दो ऐसे स्वरों को बजाया जाये जिनमें सामंजस्य नहीं हो तो वे बेसुर लगने लगते हैं। यदि अनेक स्वर बिना समस्वरता के बजने लगें तो भयंकर कर्णकटुता उत्पन्न होगी। प्राण विद्या सम्पूर्ण शरीर में सामंजस्य उत्पन्न कर देती है जिससे जीवन के मधुर संगीत का आनन्द उठाया जा सकता है।

2

ध्यान एवं प्राण विद्या

मन शक्ति के एक विशाल भण्डार से जुड़ा हुआ है; तथापि प्राण का यह भण्डार सामान्यत: तनाव, कुण्ठाओं और अतीत के अनुभवों की स्मृतियों के कारण अवरुद्ध रहता है। ये सब इसकी अधिकांश ऊर्जा का अपव्यय कर देते हैं और मन की शक्ति बिखर जाती है। इसके अतिरिक्त आधुनिक जीवन अनेक प्रकार से मन को भटका देता है जिससे व्यक्तित्व में प्राण का सामंजस्य प्रभावित होता है। इसके फलस्वरूप प्राण शक्ति सामान्यत: उत्तेजित अवस्था में रहती है। प्राण की यह अंतर्निहित अवस्था मानसिक और शारीरिक अवस्थाओं में प्रतिबिम्बित होती है। जब प्राण अव्यवस्थित हो जाता है तब विचारों, भावनाओं और सम्बन्धों का भी प्रभावित होना स्वाभाविक ही है।

पतंजलि के योग सूत्रों के अष्टांग मार्ग में इस चंचलता को शांत करने के लिए उपाय बताये गये हैं ताकि ध्यान लगाना संभव हो। प्रथम चार अवस्थाएँ शरीर, मन और प्राणों की चंचलता को शांत करती हैं, इन्हें बहिरंग शाखा के अन्तर्गत रखा गया है। एक बार जब शरीर और मन का शुद्धिकरण हो जाता है तब अंतिम चार अवस्थाएँ, जिनका सम्बन्ध ध्यान के क्रमश: उत्तरोत्तर स्तरों से होता है, वे मन के अधिक सूक्ष्म स्तरों को प्रकट करती हैं, उन्हें अंतरंग शाखा के अन्तर्गत रखा गया है।

ध्यान का अभ्यास निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जो मानसिक तनावों को दूर करती है और अवरुद्ध ऊर्जा को मुक्त करती है। यह प्रक्रिया ऐसी है कि मन जितना अधिक शुद्ध होता जाता है, साधक उतना ही ध्यान की ओर अग्रसर होता जाता है; उसके लिए ध्यान की अवस्था को प्राप्त करना व कायम रखना सुगम होता है तथा वह गहराई में दबी हुई कुण्ठाओं को दूर करने में सक्षम हो

जाता है। जैसे-जैसे साधक मन में दबी हुई कुण्ठाओं को दूर करने में सक्षम होता जाता है, उसे अधिक ऊर्जा प्राप्त होने लगती है। इसके फलस्वरूप मन सशक्त, अधिक विश्रान्त और एकाग्र हो जाता है, तथा इसमें अवचेतन एवं अचेतन स्तरों में प्रवेश करने की क्षमता आ जाती है।

ध्यान की अवस्थाएँ

महर्षि पतंजलि का राज योग मुख्य रूप से आठ अवस्थाओं में निहित है– यम (सामाजिक आचार-व्यवहार), नियम (वैयक्तिक आचार-व्यवहार), आसन, प्राणायाम (श्वास का नियंत्रण या विस्तार), प्रत्याहार (इन्द्रियों का निग्रह), धारणा (एकाग्रता), ध्यान एवं समाधि। पहली चार अवस्थाएँ बहिरंग कहलाती हैं। इन प्रारंभिक अवस्थाओं में अन्नमय, मनोमय और प्राणमय कोशों को व्यवस्थित और समन्वित करने का प्रयास किया जाता है ताकि स्थिरता एवं शांति प्राप्त हो सके। अंतिम चार अवस्थाएँ अंतरंग होती हैं, जो कि ध्यान की क्रमिक अवस्थाएँ हैं।

ध्यान प्रत्याहार से आरंभ होता है। प्रत्याहार में मन के अंदर ऐसी अवस्था उत्पन्न करने की विधियाँ सम्मिलित होती हैं जिनके द्वारा सजगता को बाह्य जगत् से हटा कर अंतर्मुख कर लिया जाता है। मनुष्य गंध, स्वाद, दृष्टि, स्पर्श और ध्वनि के माध्यम से बाह्य जगत् के सम्पर्क में रहता है। प्रत्याहार के विशिष्ट अभ्यासों का प्रयोग कर इंद्रियों को बाह्य संवेदनाओं से अलग कर अंतर्मुख कर लिया जाता है। प्रारंभ में प्रत्याहार के अभ्यास के दौरान मन आसानी से चंचल हो जाता है और निष्क्रिय या मंद अवस्था में रहता है। हालांकि नियमित अभ्यास के द्वारा तनाव धीरे-धीरे दूर होने लगते हैं और प्राण बाहरी संवेदनाओं से अलग होकर अंदर की ओर सिमटने लगता है। समय के साथ सजगता एवं प्राण अंतर्मुख होने लगते हैं, जिसके फलस्वरूप प्रत्याहार की अवस्था उत्पन्न होती है।

ध्यान में जब मन सफलतापूर्वक इंद्रियों के बाह्य जगत् से मुक्त हो जाता है तब केवल तीन बातों की सजगता शेष रह जाती है– ध्यानकर्ता, ध्यान की वस्तु और ध्यान की प्रक्रिया। किसी भी चौथे प्रकार का अनुभव नहीं होता है, न कोई चंचलता होती है, न कोई विक्षेप और न ही समय या स्थान का ज्ञान या अनुभव होता है। प्रत्याहार के ऐसे अनेक अभ्यास हैं जिनके माध्यम से इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए प्रयास किये जाते हैं, जैसे, योग निद्रा, प्राण निद्रा, अंतर्मौन,

त्राटक, नाद योग, जप एवं कीर्तन, इत्यादि। ये अभ्यास मन को इंद्रियों के बाह्य जगत् से विमुख कर आंतरिक जगत् के प्रति सजग बनने का प्रशिक्षण देते हैं। प्राण विद्या के संदर्भ में प्राण निद्रा एक ऐसा अद्‌भुत् अभ्यास है जिससे दो उद्‌देश्यों की पूर्ति होती है– पहला, प्रत्याहार की अवस्था आती है और दूसरा, साधक प्राण के अनुभव के प्रति संवेदनशील हो जाता है (अध्याय 10 देखें)।

प्रत्याहार ध्यान की आधारभूत अवस्था है। जब प्रत्याहार की अवस्था का अनुभव होता है और इंद्रियगत सजगता का अपेक्षाकृत अभाव होता है तब मन एकाग्र हो जाता है और मानसिक सजगता गहरी हो जाती है। इसके पश्चात् धारणा की अवस्था आती है, जिसका वर्णन योग सूत्र (3:1) में किया गया है– *"देशबन्धश्चित्तस्य धारणा"* अर्थात् "एकाग्रता मन को एक स्थान पर बाँध देती है।" यह स्थान कुछ भी हो सकता है– मानसिक या शारीरिक, कोई वस्तु या बिंदु। जब मन इस प्रकार एकाग्र हो जाता है तब धारणा गहन हो जाती है।

धारणा के अनेक अभ्यास होते हैं और एकाग्रता के लिए किसी भी वस्तु का उपयोग किया जा सकता है। प्राण विद्या में सजगता को प्राण पर एकाग्र किया जाता है। धारणा के सभी अभ्यासों का सामान्य उद्‌देश्य मन को चुनी हुई वस्तु पर एकाग्र होने के लिए प्रशिक्षित करना होता है ताकि एक विशेष अवधि के बाद मन उस वस्तु या स्वरूप के साथ एकाकार होने लगे। धारणा के ऐसे अभ्यास ऊपरी स्तर पर नहीं किये जाते हैं; इनमें मन और चेतना के गहरे आयामों में उतरने की आवश्यकता होती है। योग सूत्र (1:39) में महर्षि पतंजलि ने यह माना है कि अच्छी लगने वाली किसी वस्तु पर ध्यान करने पर मन निश्चित रूप से स्थिर, नियंत्रित और शांत होता है– *"यथाभिमतध्यानाद् वा"*– "अथवा इच्छित वस्तु पर ध्यान कर मन को स्थिर किया जा सकता है।" इसलिए साधक को ऐसी वस्तु का चयन करना चाहिए जो उसे प्रेरित करती हो या जिसके प्रति वह आकृष्ट होता हो।

एकाग्रता के विकास के लिए अभ्यास की नियमितता एक अन्य आवश्यक तत्त्व है। महर्षि पतंजलि ने अभ्यास की आवश्यकता पर बल दिया है। अभ्यास श्रद्धा और विश्वास के साथ लम्बे समय तक नियमित रूप से निर्बाध चलना चाहिए। नियमित अभ्यास की अवधि के दौरान मन स्थिरता और चंचलता के बीच झूलता रहता है। जब गहरे तनाव धीरे-धीरे दूर होने लगते हैं तब मन और प्राण अधिक एकाग्र होते जाते हैं। जब प्राण एकाग्र हो जाते हैं और बिना किसी मानसिक चंचलता के सजगता ध्यान की वस्तु पर केन्द्रित हो जाती है

तब धारणा संभव होती है। जब मन ध्यान की वस्तु या स्वरूप पर लम्बे समय तक स्थिर रह पाता है तब अहंकार स्वयं को अंदर समेट लेता है और तब ध्यान की अवस्था प्राप्त होती है।

महर्षि पतंजलि ध्यान की व्याख्या चेतना के अबाधित प्रवाह के रूप में करते हैं। योग सूत्र (3:2) में कहा गया है– *"तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानं"*, अर्थात् चेतना का अबाधित प्रवाह ध्यान है। अटूट एकाग्रता ध्यान है। मूलत: इसका अर्थ है– "अद्वैत, पूर्ण सजगता।" यह मन की ऐसी विस्तृत और सूक्ष्म अवस्था है जिसमें सजगता गहरी हो जाती है तथा आपको गहन एवं लम्बे समय तक स्थिर रहने वाली एकाग्रता का अनुभव होता है। इस अवस्था में सभी मानसिक एवं प्राणिक शक्तियाँ एक ही दिशा में प्रवाहित होती हैं। ध्यान मन एवं चेतना की वह अवस्था है जिसमें सतर्कता, क्रियाशीलता, इंद्रियों से मन का अलगाव और पूर्ण एकाग्रता बनी रहती है। इस अवस्था में आंतरिक जगत् इतना व्यापक और असीमित हो जाता है कि बाह्य अनुभव भी आंतरिक जगत् के अंग प्रतीत होने लगते हैं। जैसे-जैसे ध्यान का आंतरिक अनुभव गहरा होता जाता है, जीवन की सुंदरता और उसके उद्देश्य के मूल्यांकन का विकास भी व्यापक होता जाता है।

ध्यान के बाद एक बार जब पूर्ण सजगता प्राप्त हो जाती है तब समाधि का क्षेत्र प्रारंभ होता है। जब ध्यानकर्ता, ध्येय और ध्यान की क्रिया, इन तीनों का अनुभव विखण्डित हो जाता है, तब सभी सीमाएँ टूट जाती हैं और उसी समय वैयक्तिक अस्तित्व का बोध भी समाप्त हो जाता है। यही उच्चतम अवस्था है जिसे समाधि, निर्वाण या मोक्ष कहते हैं। इसका कोई नाम नहीं है, फिर भी इसे कोई भी संज्ञा दी जा सकती है। हठ योग प्रदीपिका के अनुसार समाधि सजगता का एक क्षेत्र है, जिसे परम चेतना कहते हैं। यह मन की पूर्ण एकाग्रता और चेतना के लौकिक से ब्रह्माण्डीय सजगता की ओर विस्तार के परिणामस्वरूप प्राप्त होने वाली अवस्था है। यह प्रत्येक मनुष्य के लिए चरम अनुभूति है, जिसकी ओर हम सब विकासोन्मुख हैं। प्राण विद्या जैसे यौगिक एवं तांत्रिक अभ्यासों के द्वारा विकास की इस प्रक्रिया में तीव्रता लायी जा सकती है।

प्राण विद्या

प्राण विद्या शरीर के अंदर प्राण पर किया जाने वाला ध्यान का अभ्यास है। यह एक शक्तिशाली अभ्यास है, स्वयं में एक पूर्ण साधना है और इसमें साधक को

प्रत्याहार से ध्यान की गहरी अवस्था में ले जाने की क्षमता है। प्राण विद्या प्राणों में सामंजस्य स्थापित करती है, मन की भ्रांतियों को नियंत्रित करती है, प्राणों की क्षमता में वृद्धि करती है, प्राणों को नियंत्रित करने की क्षमता का विकास करती है और इन सबके फलस्वरूप साधक की सजगता को अंदर गहन क्षेत्रों की ओर दिशान्तरित करती है।

सामान्यत: आंतरिक या आध्यात्मिक ज्ञान या विज्ञान को विद्या कहा जाता है। उपनिषद् काल में विद्या का उल्लेख ध्यान के अभ्यास के रूप में भी होता था, जैसे, मंत्र विद्या और आत्म विद्या। छांदोग्य उपनिषद् में ध्यान की प्रक्रिया या अभ्यास के वर्णन में कहा गया है कि यह अंतत: वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति कराता है, अर्थात् यह अनुभूति कराता है कि प्राण ही सर्वव्यापी जीवनी शक्ति है। इस प्रकार 'विद्या' शब्द एक प्रक्रिया, ध्यान की विधि और उससे प्राप्त प्राण के ज्ञान की व्याख्या करता है।

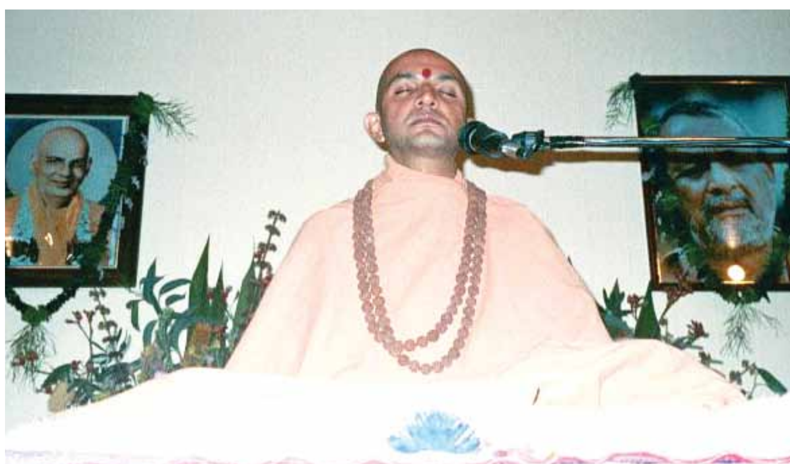
प्राण विद्या की प्रत्येक उत्तरोत्तर अवस्था में प्राण का अनुभव अधिक सूक्ष्म और परिष्कृत होता जाता है। इसके अभ्यास प्राण के जागरण और उसके आरोहण की प्रक्रिया से आरंभ होते हैं। इस प्रक्रिया को तब तक दोहराया जाता है जब तक यह बिना प्रयास के न होने लगे। इसका अभ्यास करते रहना अत्यावश्यक है। तनावमुक्त होने, प्राणों में सामंजस्य स्थापित करने और मन को प्रशिक्षित करने के लिए अभ्यास करना पड़ता है, जिसमें समय लगता है। यद्यपि एक बार जब प्राण क्रियाशील हो जाते हैं तब मन की गहराई में, उसके सूक्ष्म स्तरों में उतरना सहज हो जाता है।

प्राण विद्या की अगली अवस्थाओं में प्राणों के विस्तार, संकुचन, उसे एक स्थान पर सीमित करने और उसके मानसदर्शन के अभ्यास कराये जाते हैं। प्राण विद्या सजगता तथा प्राणों में परिवर्तन के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से मन को प्रभावित करती है, क्योंकि प्राण और चेतना एक ही शक्ति के दो विपरीत ध्रुव हैं। उदाहरण के लिए, प्राण के संकुचन से मन की चंचल प्रवृत्तियाँ शांत होती हैं। यह मन को एकाग्र करता है और आंतरिक कोलाहल को शांत करता है। प्राण के विस्तार से मन उत्प्रेरित और जाग्रत होता है। जब प्राण को सीमित किया जाता है, अर्थात् जब उसे शरीर के अंदर किसी क्षेत्र विशेष में प्रेषित किया जाता है तब मन केन्द्रित हो जाता है और उसकी शक्ति बढ़ती है।

प्राण का मानसदर्शन प्रत्येक अभ्यास के प्रभाव में वृद्धि कर देता है और यह प्राण विद्या का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है। मानस-दर्शन एक ऐसी

विधि है जिसमें एक काल्पनिक दृश्य उत्पन्न करने के लिए कल्पनाशक्ति, एकाग्रता और इच्छाशक्ति की आवश्यकता होती है, इसके फलस्वरूप सूक्ष्म अनुभूतियों में वृद्धि होती है। इसका उपयोग प्राण शक्ति को एकत्र कर बाँधने के लिए किया जाता है। उसके बाद उसे मानसिक शक्ति के द्वारा नियंत्रित कर उपचार में या किसी अन्य कार्य में लगाया जाता है। प्राणिक उपचार में शरीर के साथ-साथ प्राण के मानसदर्शन से उपचार के प्रभाव में वृद्धि होती है। अभ्यासों के दौरान प्राणों का मानसदर्शन नाड़ियों में प्रवाहित हो रही प्रकाश कणों की धारा के रूप में किया जाता है। प्रारंभ में कल्पना का प्रयोग किया जाता है; हालाँकि अंततः प्राण शक्ति का अनुभव दीप्त ज्योति पुंज के रूप में होने लगता है और प्राण का ज्ञान उत्पन्न होता है। स्वामी सत्यानन्द के अनुसार मानसदर्शन की कला में योग निद्रा के द्वारा सबसे अच्छी तरह निपुणता प्राप्त की जा सकती है। (अभ्यासों की विस्तृत जानकारी के लिए योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित स्वामी सत्यानन्द सरस्वती की पुस्तक 'योग निद्रा' को देखें।)

प्राण पर ध्यान एक प्रभावशाली अभ्यास है, यह स्वयं में एक पूर्ण साधना है। प्राण की ऐसी गहन सजगता न केवल प्राणिक शरीर को शुद्ध करती, उसका विस्तार करती और उनमें सामंजस्य लाती है, बल्कि चेतना को भी जाग्रत करती है और अंततः ध्यान तथा उसके आगे के अनुभवों की ओर अग्रसर करती है।



3

रोग एवं प्राणिक उपचार

भौतिक शरीर प्राणिक ऊर्जा का भण्डार है। शरीर का एक-एक तंतु नाड़ियों के जटिल जाल द्वारा प्राण से जुड़ा होता है। इड़ा, पिंगला एवं सुषुम्ना तीन प्रमुख नाड़ियाँ हैं। छः प्रमुख चक्र उन स्थानों पर स्थित हैं जहाँ असंख्य नाड़ियाँ, जिनमें इड़ा, पिंगला एवं सुषुम्ना भी सम्मिलित हैं, आकर मिलती हैं। परिशिष्ट 'ग' में चक्रों की स्थितियों को दर्शाया गया है। प्रत्येक चक्र शरीर के किसी विशिष्ट क्षेत्र को नियंत्रित करता है तथा वहाँ प्राणों का वितरण करता है। शरीर के प्रत्येक अंग और कोशिका में प्राण का वितरण चक्रों से निकलने वाली सहस्त्रों नाड़ियों के द्वारा होता है। इस प्रकार भौतिक शरीर के क्रिया-कलाप का सीधा सम्बन्ध प्राणिक शरीर में प्रवाहित होने वाली ऊर्जा के स्तर और उसकी मात्रा से होता है।

प्राणमय कोश और नाड़ियों की तुलना एक विद्युत् प्रणाली से की जा सकती है जो विद्युत उत्पन्न करने वाले संयंत्र से ऊर्जा का वितरण प्रत्येक घर में करती है। रोग की तुलना दोषपूर्ण विद्युत प्रणाली से की जा सकती है। अपर्याप्त वोल्टेज के कारण प्रकाश मंद हो जाता है। शॉर्ट सर्किट होने से बिजली पूरी तरह बंद हो जाती है। विद्युत प्रवाह के बाधित होने पर बिजली नहीं रहती। प्राण के साथ भी ऐसा ही होता है। जब कहीं पर प्राण ऊर्जा अवरुद्ध हो जाती है तब शारीरिक और मानसिक शक्ति क्षीण होने लगती है और जहाँ प्राण नहीं होता वहाँ जीवन भी नहीं होता है। प्राण में विक्षोभ की अवस्था को प्रचलित भाषा में बिजली का उदाहरण देकर समझाया जा सकता है, जैसे, किसी का 'फ्यूज उड़ गया', 'बैटरी खतम हो गयी', 'जल गयी' अथवा 'चिंगारी नहीं रही'।

रोग की उत्पत्ति

प्राचीन योग शास्त्रों के अनुसार स्वास्थ्य और आरोग्य के लिए अन्नमय कोश, अर्थात् भौतिक शरीर प्राण पर निर्भर रहता है। भोजन, जल और वायु के रूप में स्थूल प्राण की आवश्यकता होती है। प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश एवं आनन्दमय कोश जैसे सूक्ष्म शरीरों से सूक्ष्म ऊर्जा प्राप्त करने की भी आवश्यकता होती है। ये कोश आपस में जुड़े हुए होते हैं और प्राणमय कोश भौतिक शरीर में सीधे प्राण का संचार करता है। प्राण शरीर के अंदर और उसके चारों ओर प्रवाहित होता है जिससे शरीर की सभी प्रणालियाँ, सभी अंग और कोशिकाएँ जीवित और क्रियाशील रहती हैं।

शरीर में प्रवाहित होने वाले प्राणों को पंच प्राण के रूप में विभक्त किया गया है–प्राण, अपान, समान, व्यान एवं उदान। उनका वर्गीकरण शरीर में ऊर्जा की स्थिति और क्रिया के आधार पर किया गया है। उदाहरणार्थ, समान का प्रवाह नाभि और मध्यपट के बीच उदर क्षेत्र में दोनों बगल की ओर होता है। यह सम्पूर्ण पाचन प्रणाली को नियमित और नियंत्रित रखता है। ('प्राण एवं प्राणायाम' पुस्तक की पृष्ठ संख्या 47 से 58 को देखें।)

भौतिक शरीर प्राण पर आश्रित और उसके द्वारा संपोषित होकर निरंतर संतुलन की स्थिति बनाये रखने के लिए प्रयासरत रहता है। शरीर और मन बाहरी वातावरण से लगातार उद्दीपनों को ग्रहण करते रहते हैं, चाहे वह भोजन के माध्यम से हो या जल, वायु, ध्वनि अथवा पारस्पिरिक क्रियाओं के माध्यम से। वस्तुत: छ: इन्द्रियों–आँख, कान, नाक, जीभ, त्वचा और मन के द्वारा जो भी उपभोग किया जाता है, वह प्राण का ही भोजन होता है। इस प्रकार प्राण को अखण्ड बनाये रखने के लिए निरंतर उसका ख़याल रखने की आवश्यकता होती है। जब प्राणिक शरीर ऊर्जावान रहता है तब शरीर और मन में ऊर्जा रहती है, उनका संपोषण होता है और उनका संतुलन बना रहता है। इसके विपरीत, जब ऊर्जा क्षीण हो जाती है तब शरीर और मन प्रभावित होते हैं, और असंतुलन आ जाता है।

योग वाशिष्ठ (श्लोक 712-720) में वर्णित है कि असंतुलित प्राण के कारण अपूर्ण पाचन से भौतिक शरीर में रोग उत्पन्न होते हैं। यदि प्राण बाधित हो जाता है, क्षीण हो जाता है या उसकी मात्रा अत्यधिक हो जाती है तब पाचन पर उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, पोषक तत्त्वों का अवशोषण और वितरण समुचित ढंग से नहीं हो पाता है। मन के विचलित होने से भी प्राण

असंतुलित हो सकते हैं, जिसके कारण भी पाचन सम्बन्धी समस्या उत्पन्न हो जाती है। जब इस प्रकार पाचन क्रिया में व्यवधान आता है तब भौतिक शरीर दुर्बल होकर रोगग्रस्त हो जाता है। जब प्राण नाड़ियों में संतुलित ढंग से प्रवाहित होता है तब वह पेशियों, कोशिकाओं, अंगों तथा शरीर के अन्य भागों का सम्पोषण करता है।

ऐसे रोग जिनकी उत्पत्ति मन में होती है, किन्तु लक्षण शरीर में प्रकट होते हैं, उन्हें मनोकायिक रोग कहा जाता है। जो रोग पहले शरीर में उत्पन्न होकर फिर मन को प्रभावित करता है, उसे कायिकमनो रोग कहते हैं। हठ योग एवं तंत्र में इन दोनों प्रकार के रोगों के विवरण के साथ इनके उपचार की विधियों का वर्णन किया गया है। ये विज्ञान शरीर और उसमें जीवनी शक्ति के रूप में निहित प्राण के बीच के अंतर को बतलाते हैं। इनके बीच का अंतर यह इंगित करता है कि शरीर और मन का स्वास्थ्य और प्रसन्नता प्राण पर निर्भर रहती है। योग में यह अनुमान लगाया जाता है कि भौतिक शरीर में प्राण का समुचित वितरण नहीं होने के कारण ही सभी रोग उत्पन्न होते हैं। जिन रोगों को मनोवैज्ञानिक प्रकृति का माना जाता है, उनकी उत्पत्ति भी प्राण के असंतुलित वितरण के कारण ही होती है।

नीचे कुछ शारीरिक रोगों के उदाहरण दिये जा रहे हैं जो चक्रों में प्राण के असंतुलन से उत्पन्न होते हैं–

- विशुद्धि चक्र वितरण का एक प्रमुख केन्द्र है। भौतिक शरीर में इस चक्र पर एकाग्रता का केन्द्रबिन्दु गर्दन और धड़ के संधि-स्थल पर स्थित है। विशुद्धि से आँख, नाक, गले, थायरॉयड, पैराथायरॉयड, थाइमस और इस क्षेत्र के अन्य अंगों तथा ग्रंथियों में प्राण का वितरण होता है। यदि थायरॉयड में प्राण का समुचित वितरण नहीं होता है तो भावना-जन्य लक्षण प्रकट होते हैं। अनेक भावनात्मक समस्याओं तथा कुण्ठाओं का सीधा सम्बन्ध हाइपो या हाइपरथायरॉयड से होता है, भले ही रोग का कोई स्पष्ट चिकित्सात्मक लक्षण न दिखायी दे।
- मणिपुर चक्र नाभि के पीछे मेरुदण्ड में स्थित है। यह पाचन प्रणाली और ऐड्रिनलीन हॉरमोन उत्पन्न करने वाली ऐड्रिनलीन ग्रंथियों में प्राण के वितरण का मुख्य केन्द्र है। मणिपुर चक्र से ऐड्रिनलीन ग्रंथि में प्राण के दोषपूर्ण वितरण से भय का भाव उत्पन्न हो सकता है, इसके अतिरिक्त आँत और यकृत के रोग भी हो सकते हैं, जैसे कोलाइटिस और हेपेटाइटिस।

- स्वाधिष्ठान चक्र मेरुदण्ड की सबसे निचली हड्डी, अनुत्रिक पर स्थित होता है और यह मूत्र एवं प्रजनन अंगों में प्राण के वितरण का केन्द्र है; इन अंगों में गर्भाशय, अंडाशय, वृक्क और मूत्राशय भी सम्मिलित हैं। इन अंगों में दोषपूर्ण या आवश्यकता से अधिक प्राण के वितरण से यौन सम्बन्ध के प्रति अरुचि या नपुंसकता उत्पन्न हो सकती है। यद्यपि चिकित्सा विज्ञान पूर्ण रूप से इसे बाल्यकाल के अनुभवों से जुड़ी मनोवैज्ञानिक समस्याएँ मान सकता है, लेकिन शरीर और मन के साथ प्राण के सम्बन्ध को ध्यान में रखना आवश्यक है। हो सकता है बाल्यकाल के अनुभवों ने प्राण के प्रवाह को अव्यवस्थित कर दिया हो जिसके फलस्वरूप मनो-वैज्ञानिक और शारीरिक समस्याएँ उत्पन्न हुई हों।

प्राणिक उपचार

"जिस प्रकार धातुओं की अशुद्धियों को अग्नि जला देती है, उसी प्रकार अंगों की असामान्यताएँ प्राण के नियंत्रण के द्वारा दूर हो जाती हैं।"

– *(बृहद्योगी याज्ञयवल्क्य स्मृति 8:30)*

प्राण की प्रकृति की समझ और भौतिक शरीर के उपचार की सर्वांगीण पद्धति अनेक प्राचीन सभ्यताओं में उपलब्ध है। पारम्परिक प्राच्य चिकित्सा एक ऐसी उपचार पद्धति है जिसमें प्राणिक शरीर का पूर्ण ज्ञान और भौतिक शरीर के साथ उसका अंतर्सम्बन्ध परिलक्षित होता है।

प्राणिक उपचार, जो ऊर्जा के द्वारा उपचार करने का विज्ञान और कला है, उपचार की एक अन्य पद्धति है। इसका उपयोग हजारों वर्षों से होता आया है। मूलत: प्राणिक उपचार का ज्ञान केवल योगियों, शमनों, चिकित्सकों तथा पारम्परिक उपचारकों के पास ही हुआ करता था और वे ही इसका उपयोग करते थे। यह ज्ञान और कला सीधे गुरुओं के द्वारा शिष्यों को संप्रेषित होती थी, इसके अंतर्गत शृंखलाबद्ध दीक्षा हुआ करती थी या शक्तिपात होता था, और यही कारण है कि प्राणिक उपचार रहस्यों से घिरा रहा है। तथापि वर्तमान समय में प्राणिक उपचार अधिक सुगम्य हो गया है। इसका उपयोग व्यापक रूप से सम्पूर्ण विश्व में गुह्य एवं आध्यात्मिक समूहों तथा निजी उपचारकों द्वारा किया जाता है।

सन् 1970 के दशक के उत्तरार्ध में रूस, बुलगारिया और यूगोस्लाविया आदि देशों में प्राणिक उपचार के क्षेत्र में व्यापक स्तर पर शोध किये गये थे। इन शोधों के अधिकांश भाग को 'साइकिक डिस्कवरी बिहाइंड द आयरन कर्टेन' नामक पुस्तक में संकलित किया गया है। आधुनिक शोध प्राणिक उपचार के प्रभाव को वैज्ञानिक स्तर पर प्रमाणित कर रहे हैं; इन शोधों को अध्याय 6 में प्रस्तुत किया गया है। प्राणिक उपचार ने चिकित्सा जगत् के अग्रगण्य व्यक्तियों एवं संस्थानों का ध्यान भी आकृष्ट किया है और आधुनिक चिकित्सा के क्षेत्र में इसकी उपयोगिता का आकलन करने के लिए जाँच की जा रही है। यह सर्वविदित है कि भारत, तिब्बत और चीन में प्राणिक उपचार करने वाले चिकित्सा व्यवसाय के अभिन्न अंग हैं। उदाहरण के लिए, कोलकाता के अपोलो ग्लेनीग्ल अस्पताल में प्राणिक उपचार कैंसर के उपचार में सर्वांगीण पद्धति का एक अंग है। स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता के लिए आधुनिक चिकित्सा के अत्यावश्यक संपूरक के साथ-साथ एक मनोवैज्ञानिक आधार के रूप में इसका प्रयोग किया जाता है।

प्राणिक उपचार के तत्त्व

प्राणिक उपचार के अनेक नाम हैं–प्राण विद्या, किगौंग (व्यायाम और श्वास नियंत्रण की एक चीनी पद्धति), आत्मिक उपचार, रेकी, उपचारात्मक स्पर्श, चुम्बक से उपचार, विश्वास से उपचार और चमत्कारिक उपचार इत्यादि प्रसिद्ध हैं। किसी भी वास्तविक उपचार में पद्धति में अंतर होने के बावजूद समान ऊर्जा और शक्ति का प्रयोग किया जाता है। उपचार का विज्ञान शरीर के प्राकृतिक नियमों पर आधारित है, जिनका पालन स्वास्थ्य कायम रखने के लिए और अस्वस्थ होने पर पुन: स्वास्थ्य लाभ करने के लिए किया जाना चाहिए। इन प्राकृतिक नियमों में पोषण, उत्सर्जन, श्वसन इत्यादि सम्मिलित हैं और ये सभी प्राणिक शरीर में प्राण के सूक्ष्म प्रवाह के द्वारा प्रभावित होते हैं तथा उसे प्रभावित करते हैं। सभी उपचारक केवल अभिव्यक्ति का माध्यम होते हैं जिनके द्वारा प्राकृतिक शक्ति और ऊर्जा प्रवाहित होती है।

प्रत्येक उपचार पद्धति की अपनी विशेष तकनीक होती है, जिसका विकास प्रचलित स्थानीय संस्कृति और दर्शन से हुआ है। जैसे, योग दर्शन के संदर्भ में प्राणिक शरीर का तात्पर्य कोशों, चक्रों और नाड़ियों से है। प्राण विद्या का अभ्यास, जो पूरे शरीर में समुचित रूप से प्राण का संचार करता है, इस योग दर्शन को प्रतिबिम्बित करता है।

फिलिपीन्स के उपचारक प्राणिक शरीर के लिए 'प्रभामंडल' शब्द का प्रयोग करते हैं। वे प्राणिक शरीर उसे कहते हैं जो भौतिक शरीर के चारों ओर दो स्तरों में रहता है– आंतरिक और बाह्य प्रभामंडल के रूप में। आंतरिक प्रभामंडल का वर्णन जैवद्रवीय (बायोप्लाज़्मिक) किरणों के रूप में किया गया है जो भौतिक शरीर से लम्बवत् निकलती हैं। ऐसा माना जाता है कि विषाणु, अपशेष, जीवाणु और रोगयुक्त ऊर्जा इन्हीं किरणों से मुख्य रूप से रोम छिद्रों के द्वारा उत्सर्जित होती हैं। ऊर्जा के क्षीण होने से यदि व्यक्ति दुर्बल हो जाता है तो किरणें झुक जाती हैं और आंशिक रूप से आपस में उलझ जाती हैं। पूरे शरीर को रोगाणुओं के द्वारा संक्रमित होने की आशंका रहती है, क्योंकि विषाणुओं को उत्सर्जित करने की क्षमता कम हो जाती है। बाह्य प्रभामंडल आंतरिक ऊर्जा क्षेत्र के बाहर होता है। यह सूक्ष्म ऊर्जा के लिए एक पात्र का कार्य करता है और प्राणिक ऊर्जा को बाहर रिसने से रोकता है। पुन: स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करने की उपचारात्मक तकनीकों का उपयोग इस प्राणिक शरीर के ज्ञान को दर्शाता है।

प्राणिक उपचारकों में सूक्ष्म स्तर पर प्राण को अनुभव करने और उपचार के लिए उसे प्रभावित करने की क्षमता होती है। प्राण का बोध और प्राण को दिशान्तरित करना रोग की पहचान और उसके उपचार के लिए निर्णायक हैं। प्राणिक उपचार इस सिद्धान्त पर आधारित है कि यदि प्राण अव्यवस्थित, अर्थात् क्षीण या अत्यधिक या संकुलित होता है तो स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

प्राणिक उपचारक रोग की जानकारी प्राप्त करने के लिए सामान्यत: रोगी के शरीर के ऊपर हाथों को फेरते हैं ताकि प्राणिक असंतुलन के क्षेत्र का पता चल सके जिसके परिणामस्वरूप रोग उत्पन्न हुआ है और उपचार के लिए सूक्ष्म प्राण को उस क्षेत्र में संप्रेषित किया जा सके। तकनीक चाहे कोई भी हो, उपचार के लिए उस क्षेत्र में ऊर्जा प्रदान की जाती है जहाँ प्राण की कमी रहती है, उस क्षेत्र को स्वच्छ किया जाता है जहाँ प्राण की अधिकता होती है और यदि आवश्यक होता है तो प्राण के अवरोधों को दूर किया जाता है।

शरीर या क्षेत्र विशेष को ऊर्जा प्रदान करने का अर्थ होता है वहाँ प्राण को संप्रेषित करना। इस प्राण का स्रोत ब्रह्माण्ड हो सकता है जैसा 'रेकी' में होता है, आत्मा हो सकती है जैसा कि आध्यात्मिक उपचार में होता है या प्राण विद्या जैसी तकनीकों के द्वारा प्राण को जाग्रत कर दिशान्तरित किया जा सकता है। प्राणिक उपचारक उपचार के लिए उपकरण के रूप में विभिन्न

प्रकार के प्रतीकों, मानसदर्शन, प्राणायाम एवं श्वसन के विशेष अभ्यासों, मुद्राओं और ध्वनियों का प्रयोग करते हैं ताकि ऊर्जा के प्रवाह को सुगम और सघन बनाया जा सके।

स्वच्छ करने का अर्थ है शुद्ध करना और दूषित ऊर्जा को बाहर निकलना। ऐसा अनेक प्रकार से किया जा सकता है। प्राय: प्राणिक उपचारक इस प्रक्रिया को सुगम बनाने के लिए किसी भौतिक वस्तु की सहायता लेते हैं। दूषित ऊर्जा को अवशोषित करने, प्रभामंडल को स्वच्छ करने या किसी भौतिक स्थान को शुद्ध करने के लिए ताजे पानी, लवण मिश्रित पानी, बालू और विशिष्ट जड़ी-बूटियों से बनी दागने वाली छड़ियों का प्रयोग किया जाता है। कुछ प्राचीन परम्पराओं में रोगग्रस्त ऊर्जा को मुँह के द्वारा खींचा जाता है या वृक्ष की टहनी से हटाया जाता है।

जब उपचार पूरा हो जाता है तब उपचार की प्रक्रिया को प्रबल बनाने के लिए प्राय: शारीरिक व्यायाम और श्वसन के अभ्यास करने का सुझाव दिया जाता है। इस प्रकार के अभ्यास प्राणिक उपचार के संपूरक होते हैं, क्योंकि इनसे प्राणिक शरीर में ऊर्जा की मात्रा में वृद्धि होती है और ये शरीर एवं मन के अंदर प्राण के प्रवाह में संतुलन बनाये रखने में सहायक होते हैं।

रेकी

शिंगौन सम्प्रदाय के बौद्ध पुजारी एवं चिकित्सक डॉ. मिकाओ उसुई को सन् 1822 में अपनी आध्यात्मिक यात्रा में ईसा मसीह तथा भगवान बुद्ध के चमत्कारी उपचारों के रहस्य को उद्घाटित करने की अंत:प्रेरणा मिली। अपनी खोज के दौरान उन्हें प्राचीन उपचार की कला का विवरण 1100 वर्ष पुरानी बौद्ध पाण्डुलिपि में मिला, जिसका विषय था– "द तंत्र ऑफ द लाइट्निंग फ्लैश दैट हील्स द बॉडी एण्ड इल्युमिन्स द माइंड"। उस प्राचीन स्रोत से डॉ. उसुई ने सात स्तरों वाली तांत्रिक शिक्षण पद्धति का विकास किया, जो आधुनिक समय में 'रेकी' नामक उपचार पद्धति के रूप में प्रचलित है। जापानी शब्द 'रे' का अर्थ होता है 'विश्वव्यापी' और 'की' का अर्थ है 'जीवनदायिनी ऊर्जा'; दोनों मिलकर उपचार के स्रोत को वर्णित करते हैं– ब्रह्माण्डीय जीवनदायिनी ऊर्जा।

रेकी के दो अनिवार्य पक्ष हैं। पहला है पद्धति की सरलता। उपचारक उपचार सत्र आरंभ करने से पूर्व निष्ठा एवं शुद्ध मन से ब्रह्माण्डीय जीवनदायिनी ऊर्जा

के साथ जुड़ता है और उसका माध्यम बन जाता है। तत्पश्चात् जिस व्यक्ति को उपचार की आवश्यकता होती है, उसके शरीर पर हाथों को रखा जाता है। यह एक विशेष क्रम में किया जाता है जिसे डॉ.उसुई ने तैयार किया है। ब्रह्माण्ड से प्राण शक्ति उपचारक के माध्यम से उपचार किये जा रहे व्यक्ति की ओर प्रवाहित होती है। रेकी का एक सिद्धान्त यह है कि शरीर अपने प्राकृतिक ज्ञान का उपयोग कर वह ग्रहण कर लेता है जिसकी उसे आवश्यकता होती है। रेकी से शरीर और मन की प्राण शक्ति में वृद्धि होती है और वह संतुलित होती है। इसके द्वारा शरीर और मन अत्यधिक उच्च आवृत्ति वाली ऊर्जा के सम्पर्क में आ जाते हैं जिससे ऊर्जा के अवरोधों को बेध कर समाप्त किया जा सकता है। रेकी की अपनी कोई शैली या पद्धति नहीं है और ऊर्जा को जान-बूझ कर प्रेषित नहीं किया जाता है। रेकी उपचारक केवल ब्रह्माण्डीय जीवनदायिनी ऊर्जा के संप्रेषण का एक माध्यम होता है जिससे उपचार की प्रक्रिया सुगम हो सके। रेकी का दूसरा अनिवार्य पक्ष है समस्वरकों का उपयोग करना ताकि ब्रह्माण्डीय जीवनदायिनी ऊर्जा का मार्ग खुल सके। डॉ. उसुई के अनुसार उनका उपचारक बुद्ध से सम्बद्ध ऊर्जा के संप्रेषणों या सशक्तिकरण से गहरा सम्बन्ध रहता है। पारम्परिक रेकी की शिक्षा डॉ. उसुई के सिद्धान्तों पर ही आधारित है और यह गुरु द्वारा शिष्य को प्रदान की जाती है। जब शिष्य गुरु के मार्गदर्शन में रेकी की कला में निपुण हो जाता है तब वह अतिरिक्त समस्वरकों के साथ दूसरों को इस कला की दीक्षा प्रदान करने का अधिकारी बन सकता है। रेकी की उन्नत अवस्थाओं में दूर-उपचार और रेकी के अन्य अभ्यासों के लिए भी उपचारक ऊर्जा को सबल बनाने हेतु प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है।

आरोग्यकर स्पर्श

न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय में नर्सिंग एजुकेशन के प्रोफेसर डॉ. क्रीगर के सर्वेक्षण में अमेरिका में एक प्रयोग का संचालन हुआ, जिसके अंतर्गत चौंसठ रोगियों को दो समूहों में विभाजित किया गया। नर्सों के द्वारा दिन में दो बार हथेलियों के स्पर्श से एक समूह का 'स्पर्श उपचार' किया गया। नियंत्रित समूह को केवल सामान्य उपचर्या प्राप्त हुई। पहले दिन के बाद से ही स्पर्श उपचार पाने वाले रोगियों के रक्त में हीमोग्लोबीन के स्तर में पर्याप्त वृद्धि दिखलाई देने लगी। नियंत्रित समूह के रोगियों में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं पाया गया।

अथर्ववेद (4:13, 6-7) में स्पर्श एवं शब्दों की शक्ति का वर्णन किया गया है–

अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तर: ।
अयं मे विष्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शन: ॥

मेरा बायाँ हाथ उपयुक्त है, और उससे भी अधिक उपयुक्त है मेरा दायाँ हाथ। इस हाथ में सभी उपचारक गुण समाये हुए हैं; इसका कोमल स्पर्श शांतिप्रद और कल्याणकारी होता है।

हस्ताभ्यां दशशाखाभ्यां जिह्वा वाच: पुरोगवी ।
अनामयित्नुभ्यां हस्ताभ्यां ताभ्यां त्वाभि मृशामसि ॥

दस अंगुलियों के साथ हमारे हाथ, वाणी प्रदान करने वाली जिह्वा; इन दो रोगोपचारकों के कोमल स्पर्श से हम तुम्हें सहलाते हैं।

मलेशिया का प्राणिक उपचार

'हाथों के स्पर्श' से प्राणिक उपचार करना एक सरल और प्रभावकारी विधि है। विभिन्न संस्कृतियों में भिन्न-भिन्न विधियों का उपयोग किया जाता है। मानव-विज्ञानी कैरोल लैडरमैन ने मलेशिया में प्राणिक उपचार का अध्ययन किया जिसमें ओझा ध्यान की स्थिति उत्पन्न करने के लिए संगीत एवं मंत्रोच्चारण का उपयोग करते हैं। अपने शोध में प्रारम्भ में उन्होंने पूरी तरह तटस्थ रहने का प्रयास किया, लेकिन बाद में वे स्वयं बीस मिनट के ध्यान उपचार के लिए तैयार हो गयीं। उन्होंने उस अनुभव का वर्णन इस प्रकार किया है– "जैसे ही संगीत की ध्वनि तीव्र होने लगी मेरा मुँह खुल गया और अनियंत्रित ढंग से थरथराने लगा। मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा कि मेरी छाती के अंदर ठण्ढी हवायें चल रही हैं, संगीत की तीव्रता के साथ हवा की भी तीव्रता बढ़ती गयी और यह इतनी बढ़ गयी कि मुझे अपने हृदय में चक्रवात जैसी भयंकर तीव्रता का अनुभव होने लगा।"

मलेशियाई परम्परा में, जहाँ यौगिक अवधारणाएँ प्रतिबिम्बित होती हैं, मानसिक प्रक्रियाओं, प्रतिभाओं, इच्छाओं आदि का वर्गीकरण 'वायु' या अंतर्वायुओं' के रूप में किया गया है। जब इनका दमन किया जाता है या इन्हें प्रकट नहीं होने दिया जाता, नकारा जाता है या बाधा डाली जाती है तो

ये खतरनाक होकर 'वायु रोग' उत्पन्न कर देती हैं। ओझा दबी हुई वायु को तितर-बितर करने के लिए अपनी विधियों का उपयोग करते हैं। चेतना की अवस्थाओं में परिवर्तन लाने की अनेक विधियाँ हैं जिनमें स्नायुओं को या तो बिल्कुल सुन्न कर दिया जाता है या उनमें अत्यधिक उद्दीपन उत्पन्न किया जाता है। सबसे अधिक प्रयुक्त होने वाली विधियों में एक है संगीत, विशेष रूप से एक समान चार थाप वाले ताल वाद्यों का संगीत। इस ताल से एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आ जाता है, इससे एक परा-अवस्था उत्पन्न हो जाती है और इसका प्रभाव गहरे ध्यान में मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाली 'थीटा' तरंगों के समान होता है। यह दर्द का निवारण करने योग्य अनुकूलतम आवृत्ति होती है और इसलिए इसका प्रयोग उपचार की एक अन्य विधि, विद्युतीय उद्दीपन द्वारा एक्यूपंक्चर में भी किया जाता है।

ऊर्जा का संप्रेषण

प्राण का संप्रेषण हमारे जीवन की एक स्वाभाविक घटना है और यह निरंतर चलती रहती है, भले ही हम इस प्रक्रिया के प्रति सजग हों या नहीं। प्रत्येक व्यक्ति से, प्रत्येक वस्तु से स्पंदन या ऊर्जा का विकिरण निरंतर होता रहता है। कुछ लोगों से प्राण का लम्बा, प्रबल विकिरण होता है, जबकि अन्य लोगों से छोटा और दुर्बल विकिरण होता है। किर्लियन फोटोग्राफी के द्वारा किये गये शोधों ने प्राणिक ऊर्जा के विकिरण की परिकल्पना को जीवन के एक स्वाभाविक अंग के रूप में प्रमाणित किया है।

प्राण अत्यंत शक्तिशाली है, फिर भी यह इतना सूक्ष्म है कि इसे सामान्य सजगता के साथ समझ पाना कठिन होता है। तथापि जो लोग ऊर्जा के प्रति संवेदनशील हैं, वे प्राण का अनुभव कर सकते हैं और उसे देख सकते हैं। सामान्यत: ऐसे लोगों में यह क्षमता जन्मजात होती है और वे जन्मजात प्राणिक उपचारक होते हैं जो रोगियों का उपचार करने में सक्षम होते हैं। उन्होंने यह विद्या किसी व्यक्ति या पुस्तक से नहीं सीखी होती है। प्राय: वे स्वयं अपनी इस उपचारक क्षमता पर आश्चर्यचकित हो जाते हैं और सोचते हैं कि यह उन्हें कहाँ से प्राप्त हो गयी तथा यह किस प्रकार कार्य करती है।

कम लोग ही जन्मजात उपचारक होते हैं, लेकिन हममें से अधिकतर लोगों में प्राण विद्या के अभ्यास के द्वारा एक सीमा तक इस प्रतिभा का विकास करने की क्षमता है। यह पद्धति न केवल हमें मानव शरीर में अंतर्निहित ऊर्जा के

बृहत् भंडार के प्रति सजग बनाती है, बल्कि हमें यह भी सिखाती है कि स्वयं अपने और दूसरों के स्वास्थ्य में सुधार के लिए सजगतापूर्वक प्राण का उपयोग किस प्रकार करें।

वैदिक शिक्षा

अथर्व वेद चौथा वेद है जिसमें तंत्र सम्बन्धी धारणायें हैं। इसमें मंत्रों का संकलन है और देवताओं के आवाहन की कला का वर्णन है। यह वैदिक शिक्षा और आध्यात्मिक दीक्षा के माध्यम से चेतना की इस परम अवस्था की ओर जाने का मार्ग दिखाता है। इसमें उन दो मुख्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन है जो वैदिक शिक्षा के आधार हैं और प्राणिक उपचार के दार्शनिक आधार को प्रतिबिम्बित करते हैं। पहला सिद्धान्त यह है कि अनंत ऊर्जा, प्रकृति या महाप्राण, सारे ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। दूसरा सिद्धान्त यह है कि भौतिक जगत् और भौतिक शरीर इस ऊर्जा को ग्रहण करने के आधार हैं।

वैदिक शिक्षा पूर्ण स्वास्थ्य और कल्याण के लिए प्राणिक सजगता के तीन पक्षों का वर्णन करती है–ब्रह्माण्डीय ऊर्जाओं को शरीर में किस प्रकार प्रकट किया जाये, इन ऊर्जाओं को धारण किए रखने की क्षमता में किस प्रकार वृद्धि की जाये, और इन ऊर्जाओं को प्रकट करने से रोकने वाली बाधाओं को शरीर से किस प्रकार दूर किया जाये। इस प्रकार प्राण को नियंत्रित करके मनुष्य ईश्वर से जुड़ा रह सकता है और जीवन में आनन्द का अनुभव कर सकता है।



4

भारत में पारम्परिक प्राणिक उपचार

पिछले कुछ वर्षों में शारीरिक एवं मानसिक रोगों के निदान और रोकथाम के लिए पारम्परिक उपचार पद्धतियों के प्रति पुन: रुचि उत्पन्न हुई है। मनोदैहिक रोगों में वृद्धि के कारण तथा समग्र स्वास्थ्य हेतु अधिक पद्धतियों की खोज के कारण लोगों का ध्यान उपचार की प्राचीन कलाओं की ओर जा रहा है जो समय की कसौटी पर खरी उतरी हैं। भारत इसका अपवाद नहीं है। विविधताओं से भरे इस देश में प्राचीन प्रथाएँ आधुनिक जीवन का अंग बनी हुई हैं और पारम्परिक उपचार विधियाँ समाज के सभी वर्गों में प्रचलित हैं। अनेक लोगों को ये पद्धतियाँ अंधविश्वास लग सकती हैं, और यह सच भी है कि कभी-कभी ये वैसा रूप ले भी लेती हैं। तथापि मुख्य बात यह है कि उनमें एक प्राकृतिक नियम निहित है जो तर्कबुद्धि के परे है, और उनकी उपयोगिता समय-समय पर प्रमाणित होती रही है।

स्वामी सत्यानन्द अपनी युवावस्था की एक घटना का प्राय: उल्लेख करते थे। उन्होंने एक पारम्परिक उपचारक को उपचार करते हुए देखा था, उस घटना की स्मृति सदा उनके साथ बनी रही और समय के साथ उन्होंने उससे जुड़े सिद्धान्त को समझा, जो प्राण साधना का एक स्वरूप था। वास्तव में यह अनुभव प्राण विद्या की पद्धति के निरूपण के लिए प्रथम प्रेरक बिन्दु था। इस अध्याय में वर्णित पद्धतियों को इसी संदर्भ में देखा जा सकता है।

पारम्परिक प्राणिक उपचार

अनेक देशों के समान भारत में भी विभिन्न प्रकार की उपचार विधियाँ उपलब्ध हैं। पारम्परिक उपचारकों को 'ओझा' कहा जाता है। वे अपनी गहन मानसिक

एवं प्राणिक क्षमताओं के द्वारा रोगों की पहचान और उनका उपचार करते हैं। वे अपनी संवेदनशीलता के द्वारा शरीर में रोग उत्पन्न करने वाली अस्तव्यस्त ऊर्जा की जाँच बारीकी से करते हैं। जब उसकी पहचान हो जाती है तब वे सूक्ष्म ऊर्जा का उपयोग कर प्राणिक शरीर को शुद्ध करते हैं, उसे क्रियाशील करते हैं और सही दिशा में लाते हैं।

उपचार करने के लिए ऊर्जा को अतीन्द्रिय स्तर पर अनुभव करने और प्रभावित करने के लिए केवल हाथों का उपयोग किया जा सकता है। उपचारक प्राय: उपचार में वातावरण बनाने के लिए कुछ विशिष्ट तकनीकों अथवा कर्म-काण्ड का प्रयोग भी करते हैं, जैसे अगरबत्ती जलाना, पवित्र जल छिड़कना, ढोल बजाना, मंत्रोच्चार करना, दिव्य प्रतीकों का उपयोग करना, धीमा श्वसन करना या तालबद्ध नृत्य करना। ऊर्जा से आविष्ट वातावरण रोगी को परिवर्तित और ग्रहणशील अवस्था में ले जाता है, जो उपचार की प्रक्रिया के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए, राजस्थान में भोपा के द्वारा उपचार की प्रक्रिया के दौरान गोलाकार पंक्ति में खड़े होकर ढोल के दो थाप वाले ताल पर उछल-उछल कर नृत्य करते हैं। ढोलक की थाप और नृत्य के ताल से शरीर में गति की अनुभूति होती है जिससे चेतन मन शांत होकर अचेतन मन को उपचारकों द्वारा प्रयोग किये जा रहे सकारात्मक प्रतीकों के प्रति अधिक ग्रहणशील बना देता है।

भारतीय संस्कृति की एक भिन्न विशेषता यह है कि इसमें धार्मिक मान्यताओं की भूमिका उपचार की प्रक्रिया में परिलक्षित होती है। धार्मिक मान्यताओं के असंख्य स्वरूपों का प्रयोग रोगी के अंदर और बाहर की शक्तिशाली आत्मिक ऊर्जा को सक्रिय बनाने के लिए किया जाता है। उपचार करने वाले जिन कर्म-काण्डों का प्रयोग करते हैं उनमें स्थानीय प्रथाओं एवं परम्पराओं की अधिकता रहती है। इनमें से कुछ तो उपचारक या उपचार के स्थान से सम्बन्धित दंतकथाओं पर आधारित हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश में देवी माँ के अनेक मंदिरों में यह प्रथा है कि जो व्यक्ति अपना उपचार कराना चाहता है वह चढ़ावे के रूप में सुनहरी किनारे वाली लाल चुनरी चढ़ाये। स्थानीय दन्तकथाओं को समर्थन प्रदान करने के लिए राजस्थान के चित्तौड़ में रोगियों को घुटनों के बल चलते हुए माँ काली के मंदिर में प्रवेश करना होता है। प्राणिक उपचार की सूक्ष्म प्रकृति के कारण हो सकता है रोगी उन कर्म-काण्डों या विधियों को नहीं भी समझ पाये। इसके बावजूद सफल उपचार के लिए

रोगी को उपचारक और उपचार करने की उसकी क्षमता पर पूरा विश्वास होना चाहिए। यदि विश्वास नहीं होता है तो सामान्यत: प्राणिक उपचार करने वाले उपचार नहीं करते हैं। वे जानते हैं कि बिना श्रद्धा और विश्वास के उपचार नहीं हो सकता है।

कुश घास की विधि

जब बच्चे को ज्वर होता है तो पारम्परिक रूप से पंडित को यह देखने के लिए बुलाया जाता है कि यह बीमारी शारीरिक है, मनोवैज्ञानिक है या प्राणिक है। यह प्रथा गाँव, शहर, धनी और गरीब समुदायों में समान रूप से प्रचलित है। यदि ऐसा प्रतीत होता है रोग केवल शारीरिक नहीं है तो बच्चे को प्राणिक उपचारक के पास ले जाया जाता है।

उपचार की प्रक्रिया में रोग की पहचान से लेकर उपचार तक स्थानीय प्रथाओं का पालन करना आवश्यक होता है। उदाहरण के लिए एक प्रथा यह है कि बीमार बच्चे को उसके माता-पिता ही गोद में उठाकर उपचारक के घर तक ले जायें, कोई अन्य व्यक्ति नहीं। यहाँ तक कि धनवान को भी इस परम्परा का अनुसरण करना आवश्यक होता है, इसलिए उपचारक को अपने घर लिवा लाने के लिए मोटर गाड़ी भेजने का तो प्रश्न ही नहीं उठता है। कुछ उपचारक माता-पिता से उपचार के लिए नारियल लाने के लिए कहते हैं, जबकि कुछ अन्य पान के पत्ते में सुपारी डाल कर उसे लाल धागे से बाँध कर लाने के लिए कहते हैं। जब सभी रीति-रिवाज़ पूरे हो जाते हैं तब बच्चे को उपचारक के निकट रख दिया जाता है ताकि वह उसके रोग को समझ कर अस्वस्थ अंग की पहचान कर सके।

एक प्रचलित विधि के अंतर्गत कुश घास का उपयोग किया जाता है। यह भारत में पायी जाने वाली एक प्रकार की चुम्बकीय प्रकृति की घास है जिसका प्रयोग प्राय: आध्यात्मिक एवं गुह्य अनुष्ठानों में किया जाता है। कुश घास के माध्यम से उपचारक अपने प्राण के द्वारा बच्चे के अतीन्द्रिय रोग तक पहुँच पाता है। कुश घास को शरीर के ऊपर सिर से पैर तक घुमाया जाता है। इस प्रक्रिया को बच्चे के बायीं और दायीं ओर तब तक दोहराया जाता है जब तक कुश घास प्रत्यक्ष रूप से स्वयं रोगयुक्त क्षेत्र के ऊपर रुक नहीं जाती है। इस प्रकार कुश को घुमाते हुए उपचारक आत्मिक रूप से रोग को देख या अनुभव कर सकता है।

बुरी नज़र

यद्यपि बहुत से आधुनिक समाजों में 'बुरी नज़र' को नहीं मानते हैं, फिर भी अनेक स्वदेशी संस्कृतियों में इसे सामान्य रूप से रोग का कारण माना जाता है। जिस प्रकार हम उपचार के लिए प्राण का संप्रेषण कर सकते हैं, उसी प्रकार माना जाता है कि व्यक्ति दूसरों का अनिष्ट करने के लिए निकृष्ट शक्तियों का भी संप्रेषण कर सकते हैं। अनिष्टकारी मंशा का संप्रेषण प्रायः आँखों के द्वारा होता है जिससे अकारण ज्वर, सर्दी या अन्य रोग हो जाता है।

बुरी नज़र के प्रभाव को पहचानने के लिए उपचारक लोहे के बर्तन में जलते हुए कोयले पर लाल मिर्च और सरसों के दाने डाल कर उसे रोगी के पास रखते हैं। यदि रोगी को छींक या खाँसी, जो सामान्य स्थिति में स्वाभाविक है, नहीं होती है तो माना जाता है कि वह रोग बुरी नज़र के कारण हुआ है। तब उस प्राणिक समस्या को दूर करने के लिए उपचार किया जाता है।

कार्मिक रोग

कुछ स्थितियों में रोग को कार्मिक कारण से उत्पन्न हुआ भी माना जाता है, अर्थात् रोग इस जन्म या पूर्व जन्म के किसी अतीत कर्म के कारण भी हो सकता है। इसके अंतर्गत परिस्थितिजन्य कारण भी हो सकता है, जैसे पति/पत्नी या परिवार के किसी अन्य सदस्य का बुरा व्यवहार। ऐसी स्थिति में उपचारक कहता है कि उपचार और लम्बी अवधि तक स्वस्थ्य रहने के लिए किये जाने वाले आवश्यक परिवर्तनों में परिवार एवं समुदाय की भी सहभागिता होनी चाहिए। जब परिवार और समुदाय के सदस्य इस दायित्व को स्वीकार कर लेते हैं तब उपचारक रोगी का उपचार करता है।

पारम्परिक उपचार हमेशा गुप्त रूप से नहीं होता है। लोग प्रायः दूसरों की उपस्थिति में भी उपचारक के सम्मुख अपनी समस्या रखते हैं और उस पर विचार-विमर्श करते हैं। परिवार और समुदाय के अन्य सदस्य भी उपचार प्रक्रिया में सक्रिय योगदान दे सकते हैं। पारम्परिक उपचारक जानते हैं कि अनेक परिस्थितियों में केवल रोगी का प्राणिक उपचार पर्याप्त नहीं होगा और प्राणिक उपचार से तब तक स्थायी इलाज नहीं होता है जब तक कि जीवनशैली या दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं आता है। जब तक यह परिवर्तन नहीं होता है तब तक मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य में आया कोई भी सुधार अस्थायी ही होगा। लोग जिन समस्याओं को लेकर उपचारक के पास जाते हैं, उनमें

से अधिकतर अस्वस्थ पारिवारिक या सामुदायिक सम्बन्धों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती हैं। ऐसी स्थिति में उपचार प्रक्रिया में सभी सम्बद्ध लोगों की सक्रिय भागीदारी अनिवार्य होती है।

विभूति का प्रयोग

उपचार की एक विशेष विधि है जिसमें विभूति का प्रयोग किया जाता है। विभूति बनाने के लिए गाय के गोबर को जला कर उसकी राख बना ली जाती है। उस राख को एक महीन कपड़े से छान लिया जाता है। छानी गयी राख को दूध के साथ सान कर गोलियाँ बना ली जाती हैं और उन्हें सुखा लिया जाता है। राख की गोलियों के सूख जाने पर उन्हें पुन: जलाया जाता है और प्रक्रिया को दुहराया जाता है। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को उपचारक की परम्परा के अनुसार सात, ग्यारह या इक्यावन बार दुहराया जाता है।

अंगूठे से विभूति को पीड़ित व्यक्ति के भ्रूमध्य में लगाया जाता है। यह क्रिया एक विशेष मंत्रोच्चार के साथ की जाती है। जब मंत्रोच्चार पूरा हो जाता है तब उसे फूँक कर उड़ा दिया जाता है और इस प्रक्रिया को तीन बार पुन: दुहराया जाता है। इसके बाद भ्रूमध्य में नमक रखा जाता है जिसे आवाज़ के साथ जोर से फूँक कर उड़ाया जाता है।

जब उपचार की प्रक्रिया पूरी हो जाती है तब प्राणिक उपचारक बीमार व्यक्ति को छोड़ कर बाहर कुछ देर टहलता है। रोगी के पास पुन: वापस आने से पूर्व वह दो-तीन मील टहल सकता है। वह कहाँ जाता है और क्या करता है, यह बात गुप्त रखी जाती है और केवल उसके दीक्षित व्यक्ति ही इससे अवगत रहते हैं। ऐसा माना जाता है कि इससे उपचार की प्रक्रिया में निकली विषाक्त ऊर्जा का निस्तारण किया जाता है।

उपचारक टहल कर लौटने के बाद रोगी से उसकी तबियत के विषय में जानकारी लेता है। यदि उसकी दशा में कोई परिवर्तन नहीं आता है तो वह उन लोगों को यह कह कर लौटा देता है कि इससे अधिक और कुछ नहीं किया जा सकता है; वह कोई दिखावा नहीं करता है। यदि अल्प सुधार होता है तो वह किसी अन्य उपचारक से संपर्क करने की सलाह देता है। यदि व्यक्ति स्वस्थ हो जाता है तो उन लोगों को वहाँ से अविलम्ब लौट जाने के लिए कहा जाता है और पुन: उसी उपचारक के पास कभी नहीं आने के लिये कहा जाता है। प्रत्यक्ष रूप से कठोर प्रतीत होने वाली इस प्रथा से

उपचारक की गरिमा और उपचार के लिए आवश्यक श्रद्धा और विश्वास की शक्ति बनी रहती है।

विषाक्त ऊर्जा का निस्तारण

एक सामान्य प्रथा है कि प्राणिक उपचार के पश्चात् उपचारक के द्वारा विषाक्त ऊर्जा का निस्तारण किया जाए। ऐसा करने का उद्‌देश्य यह है कि उपचारक उस विषाक्त ऊर्जा से अप्रभावित रहे और वह किसी अन्य में स्थानान्तरित न हो जाये। भारत में उस प्रकार के विषाणुओं का उचित रीति से निस्तारण वट, पीपल, तुलसी या आम के वृक्ष के नीचे किये जाने की प्रथा है। इस प्रथा के कारण उन वृक्षों के नीचे मूत्र-त्याग करने या सोने का निषेध है। उसी प्रकार ऐसी वस्तुएँ जिनमें किसी रोग के जीवाणु आदि रहते हैं, उन्हें भूमि के नीचे दबा दिया जाता है।

यहाँ एक सत्य घटना का वर्णन किया जा रहा है। किसी समृद्ध परिवार का लड़का अपने घर की नींव खोद रहा था। और वहाँ उसे साँप की एक स्वर्ण प्रतिमा मिली। उसने सोचा कि सोना तो मूल्यवान होता है, इसीलिए उसने उसे लेकर पिघला लिया और अपने पास रख लिया। कुछ दिनों के अंदर वह बीमार हो गया और उसके शरीर का वजन कम होने लगा। उसे अस्पताल ले जाया गया जहाँ कैंसर, रसौली, रक्त आदि से सम्बन्धित रोगों की जाँच की गयी, लेकिन उसमें कोई भी रोग नहीं पाया गया। अंत में एक ओझा को बुलाया गया, उसने कहा कि इसे कोई शारीरिक रोग नहीं है, बल्कि अज्ञात कारणों से इसे ईश्वरीय दण्ड मिला है। उस लड़के को प्राणिक उपचारक के पास ले जाया गया, जिसे उस लड़के के शरीर से सुवर्ण किरणों के विकीर्ण होने का अनुभव हुआ। उसे उस स्वर्ण प्रतिमा के विषय में कोई जानकारी नहीं थी, फिर भी उपचार के लिए जितने स्वर्ण की आवश्यकता थी वह लड़के के द्वारा पिघलाये गये स्वर्ण सर्प के भार के बराबर थी। तब परिवार वालों ने उपचारक को उस स्वर्ण सर्प के विषय में बतलाया जो उस लड़के को मिला था। यह ज्ञात हुआ कि किसी ने उस सर्प को भूमि के नीचे दबा दिया था, क्योंकि वह रोगग्रस्त था। यह जानने के बाद उस लड़के के पिता ने पिघलाये गये सोने को पुन: सर्प के रूप में ढलवा दिया। उपचारक ने उस स्वर्ण सर्प को लड़के के पूरे शरीर पर फेरा और भूमि के अंदर दबा दिया, इसके बाद वह लड़का स्वस्थ हो गया।

प्राचीन ज्ञान

उपचार को प्रभावकारी बनाने के लिए पारम्परिक प्राणिक उपचारकों को बुरी नजर से लेकर कार्मिक रोग तक विभिन्न प्रकार के रोगों और उनके कारणों का ज्ञान होना चाहिए। उपचार के क्रम में हाथों को सामान्यत: ऊपर, नीचे, बायें, दायें या गोलाकार घुमाया जाता है, या श्वास के साथ प्राण को फूँका जाता है। इन विधियों के लिए प्राण के प्रति संवेदनशील होना चाहिए और किसी भी अन्य विज्ञान के समान समुचित ढंग से इसका ज्ञान प्राप्त किया जाना चाहिए।

पारम्परिक उपचारकों को इस विद्या की शिक्षा औपचारिक रूप से नहीं प्राप्त होती है, बल्कि वे प्रशिक्षार्थी के रूप में अपने गुरु की सेवा करते-करते इस विद्या को ग्रहण कर लेते हैं। प्राय: यह ज्ञान एक परिवार में ही पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक से दूसरे व्यक्ति को दिया जाता है। अधिकतर उपचारकों को प्राणिक उपचार के लिए अपने शरीर और मन के शुद्धिकरण में तथा आवश्यक सूक्ष्मता प्राप्त करने में अनेक वर्ष लग जाते हैं। शुद्धिकरण के अभ्यासों के अंतर्गत प्रात: जागना, कमर तक जल में खड़े होकर नाड़ी शुद्धिकरण, प्राण को सुरक्षित रखने के लिए मौन का अभ्यास या नियंत्रित संभाषण और सादा भोजन सम्मिलित है।

पारम्परिक रूप से यह माना जाता है कि उपचारकों को अपने द्वारा दी गयी सेवा के बदले कोई मूल्य नहीं लेना चाहिए। वास्तव में लोगों का ऐसा विश्वास है कि यदि वे सेवा के बदले पैसे लेते हैं तो उनकी उपचार करने की शक्ति विलुप्त हो जायेगी। यह मान्यता उपचारक को किसी भी स्वार्थपूर्ण उद्देश्य से मुक्त रखती है, जो तंत्र शास्त्रोक्त कथन के अनुरूप है– "न स्वर्ण, न चाँदी, न वस्त्र, न भोजन, कुछ भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है।" वर्तमान समय में अधिकतर उपचारकों की जीविका के अन्य स्रोत होते हैं। वे खेती करते हैं, पशु पालन करते हैं, उनका अपना व्यापार होता है और वे स्कूलों में पढ़ाते हैं।

भारत में पारम्परिक उपचार विधियों का विकास समय के साथ होता आया है और अपने प्राचीन स्रोत के बावजूद वे आज भी प्रचलित हैं। सम्पूर्ण भारत में समाज के विभिन्न स्तर के लोग प्रकृति में विद्यमान सूक्ष्म शक्तियों तथा ऊर्जा के विभिन्न स्वरूपों से सुपरिचित हैं और प्राणिक उपचारकों ने ही प्राण के ज्ञान को सुरक्षित रखा है जो इन प्राचीन उपचार विधियों का आधार है।

5

प्राण प्रतिष्ठा

इस पुस्तक में प्राण विद्या के अभ्यासों को जिस रूप में प्रस्तुत किया गया है उससे अपनी प्राणिक क्षमता का ज्ञान तो होता ही है, इसके अतिरिक्त दूसरों में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए प्राणरूपी धन का उपयोग किया जा सकता है। प्राण विद्या का कार्य क्षेत्र अनंत है। प्राण विज्ञान का उपयोग इस प्रकार से किया जा सकता है कि इससे जीवन के प्रति दृष्टिकोण में और प्रकृति के नियमों की समझ में आमूल परिवर्तन आ जाता है। उदाहरण के लिए, वर्तमान युग में वैज्ञानिक क्षेत्र में कृत्रिम जीवन विकसित करने के लिए प्रयोग किये जा रहे हैं, लेकिन प्राचीन काल में ऋषि-मुनि प्राण विद्या के भिन्न स्वरूप का प्रयोग कर संभवतः इस कला में पहले से निपुणता प्राप्त कर चुके थे। एक बार एक सत्संग में स्वामी सत्यानन्द ने कहा था कि महाभारत में गांधारी के सौ पुत्रों की कथा मात्र एक दंतकथा नहीं है; यह वेदकालीन प्रतिरूप (क्लोन) उत्पन्न करने का उदाहरण है। इस दृष्टांत में जिस विधि का प्रयोग किया गया था वह आज हमें उपलब्ध नहीं है, लेकिन हमें परम्परा से प्राप्त हुई कम-से-कम एक अन्य प्रचलित विधि का ज्ञान है जो प्राण विद्या की व्यापकता का संकेत देती है। 'प्राण प्रतिष्ठा', अर्थात् वह विधि जिसमें किसी निर्जीव वस्तु में प्राण को स्थापित किया जाता है।

शक्ति का आवाहन

प्राण प्रतिष्ठा एक अत्यंत गुह्य विद्या है और तंत्र का एक अभिन्न अंग है। विस्तृत अनुष्ठानों के द्वारा उस शक्ति का आवाहन कर उपासना की एक वस्तु में उसे प्रतिष्ठित किया जाता है जिसकी कृपा प्राप्त करनी होती है।

किसी वस्तु को ब्रह्माण्डीय ऊर्जा अथवा प्राण से अनुप्राणित करने पर वह सूक्ष्म जीवनी शक्ति के साथ जीवन्त हो उठती है। वास्तव में वह वस्तु, चित्र या प्रतिमा बाह्य उपासना के लिए एक प्रतीक मात्र होती है; वास्तविक उपासना उस शक्ति की होती है जिसे कोई महान संत या इस कार्य में दक्ष व्यक्ति प्रतिष्ठित करते हैं।

प्रतिष्ठा का अर्थ होता है दिव्य शक्ति को एक दृढ़ आधार, चेतन वासस्थान प्रदान करना। प्राण प्रतिष्ठा के संदर्भ में इस शब्द के महत्त्व को इस मंत्र में देखा जा सकता है– "ॐ प्रति-तिष्ठ परमेश्वर", अर्थात् 'हे परमेश्वर यहाँ स्थित हों'। प्राण जो निराकार और अथाह है, उसे कृपा प्रदान करने अथवा ऊर्जा का सम्प्रेषण करने के लिए, जिससे चेतना का उत्थान एवं विस्तार हो, एक स्वरूप दिया जाता है।

प्राण प्रतिष्ठा की प्रथा से यह संकेत मिलता है कि मूर्ति पूजा का प्रयोजन कल्पना के संसार में डूबे रहना नहीं है। ब्रह्माण्डीय ऊर्जा से संपर्क स्थापित करने के लिए मूर्ति का उपयोग एक प्रतीक के रूप में किया जाता है। प्रतिमाएँ किसी वास्तुकार की कोरी कल्पनाएँ नहीं होतीं, बल्कि ऐसा दिव्य माध्यम होती हैं जिनके द्वारा उपासक का हृदय ईश्वरोन्मुख होता है। यद्यपि बाह्य स्तर पर आध्यात्मिक साधक प्रतिमा की उपासना करता हुआ प्रतीत होता है, किन्तु वास्तव में उसे उस प्रतिमा में ईश्वर की उपस्थिति का अनुभव हो रहा है। हालाँकि यह उसकी क्षमता, उसकी प्रवृत्ति एवं समझ पर निर्भर रहता है कि वह उस शक्ति को कितना आत्मसात् कर पाएगा।

क्वांटम भौतिकी के सादृश्य

प्राण प्रतिष्ठा के सिद्धान्त और क्वाण्टम भौतिकी में किये गये आविष्कारों में समानता परिलक्षित होती है। वैज्ञानिक आइज़ैक बेन्टॉव ने अपनी पुस्तक "स्टॉकिंग द वाइल्ड पेंडुलम" में लिखा है कि एक मनुष्य और एक पत्थर, एक सजीव और एक निर्जीव वस्तु के बीच पारस्परिक क्रिया होती है। वे कहते हैं कि यदि किसी पत्थर के टुकड़े को पूजा के स्थान पर रख कर प्रतिदिन उसकी पूजा की जाये, तो कुछ समय के बाद वह पत्थर व्यक्ति की ऊर्जा को व्यक्त करने लगेगा और उसकी प्रार्थना को सुनने लगेगा।

बेन्टॉव ने क्वाण्टम भौतिकी के द्वारा जिसका आविष्कार किया, उसकी जानकारी योग में बहुत पहले से थी– सजीव प्राणियों और निर्जीव वस्तुओं

के बीच ऊर्जा का पारस्परिक आदान-प्रदान। इसके द्वारा यह ज्ञात होता है कि गिरजाघर, मंदिर और मस्जिद जैसे पवित्र स्थानों में जाने पर क्यों और किस प्रकार प्रार्थनाएँ उत्तरित होती हैं, मानसिक चिन्ताएँ दूर हो जाती हैं, स्वतंत्रता और हल्केपन का अनुभव होता है। श्रद्धा और विश्वास से युक्त लोग ऐसे स्थानों पर जाते हैं। इससे वह स्थान ऊर्जा से भर जाता है जिससे बदले में पोषण प्राप्त होता है। हो सकता है समय के अन्तराल में आदान-प्रदान की यह प्रक्रिया स्वाभाविक रूप से होने लगे (या स्थान विशेष प्राकृतिक रूप से आवेशित हो), फिर भी प्राण प्रतिष्ठा का अनुष्ठान यह सुनिश्चित करता है कि उपासना की वस्तु उपासना प्रारंभ होने से पूर्व ही एक शक्ति का केन्द्र बन जाये। उसके पश्चात् उपासना की प्रत्येक क्रिया उस शक्ति को प्रबल बनाती है।

कृपा के मार्ग

शास्त्रों में ऐसी अनेक कथाएँ उपलब्ध हैं जिनमें यह वर्णन मिलता है कि किस प्रकार किसी व्यक्ति को किसी स्थान पर मंदिर निर्माण का आदेश प्राप्त हुआ, क्योंकि उसने दिव्य शक्ति का आवाहन करने की क्षमता प्राप्त कर ली थी। उदाहरणार्थ, पंचरात्र तंत्र ग्रंथ में भगवान शिव ने ऋषि नारद को ईश्वर से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए एक मंदिर के निर्माण की आवश्यकता के विषय में बतलाया। निर्धारित विधियों के अनुसार मंदिर निर्माण के बाद उसमें एक प्रतिमा की स्थापना की जाती है और उसमें प्राण प्रतिष्ठा का अनुष्ठान किया जाता है। सौर्य तंत्र में श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब की कथा है कि उसने सूर्य देव को प्रसन्न करने के लिए कठोर तप किया था ताकि वह कुष्ठ रोग से मुक्त हो सके। सूर्य प्रसन्न होकर उसके सम्मुख प्रकट होते हैं और उसे एक विशेष स्थान पर एक मंदिर बनाने का आदेश देते हैं तथा एक वंशविशेष के पुरोहित को, जो अग्नि तत्त्व का आवाहन कर सकते हैं, बुलाकर उनसे उपासना करवाने के लिए कहते हैं।

स्वामी निरंजनानन्द एक ऐसी घटना का वर्णन करते हैं जिसमें उन्होंने बिहार के सहरसा में उग्र तारा के, जो तंत्र विहित देवी हैं, मंदिर के उद्घाटन के क्रम में प्राण प्रतिष्ठा के अनुष्ठान की अध्यक्षता की थी। मूल प्रतिमा की स्थापना अति प्राचीन काल में श्रीराम के गुरु ऋषि वशिष्ठ ने की थी। समय के साथ मंदिर पूरी तरह ध्वस्त हो चुका था और प्रतिमा भी नष्ट हो चुकी थी। उस मंदिर का जीर्णोद्धार करने के लिए सहरसा के लोगों ने नये मंदिर का निर्माण

किया और शास्त्रों के अनुसार देवी की मूर्ति बनायी गयी। जब कार्य पूरा हो गया तब स्वामी निरंजनानन्द को मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा के व्यापक अनुष्ठान के लिए आमंत्रित किया गया ताकि वह जीवन्त होकर लोगों की भावनाओं एवं प्रार्थनाओं के प्रति ग्रहणशील एवं प्रतिक्रियाशील हो उठे। प्रत्येक इन्द्रिय की अभिव्यक्ति के लिए एक मंत्र और प्रक्रिया थी– दृष्टि, गंध, स्पर्श आदि के लिए मंत्रोच्चार किया गया। इस विशेष अवसर पर प्राण प्रतिष्ठा की सम्पूर्ण विधि में चौदह घण्टे लगे।

परम्परा के अनुसार प्राण प्रतिष्ठा किसी विशिष्ट व्यक्ति के द्वारा ही की जानी चाहिए। यह अपनी अंतरात्मा, अपनी चेतना की गहराइयों से ईश्वरीय शक्ति का आवाहन करने की साधना है, इसलिए शास्त्रों में कहा गया है कि केवल वे व्यक्ति प्राण प्रतिष्ठा कर सकते हैं जो ईश्वरीय शक्ति के अवतरण के लिए पवित्र माध्यम होते हैं; वे ही अपने हृदय से परमात्मा का आवाहन कर उसे मूर्ति में प्रतिष्ठित कर सकते हैं। ऐसा व्यक्ति मंत्र साधना में अति निपुण होना चाहिए और उसके पास ऐसी उच्च स्तरीय ऊर्जा संप्रेषित करने के लिए आवश्यक सिद्धियाँ होनी चाहिए। प्राण प्रतिष्ठा के लिए मुख्य साधन देवी या देवता का मंत्र होता है। आवाहन के अंतर्गत मंत्रोच्चार के साथ ब्रह्माण्डीय ऊर्जा का आवाहन किया जाता है। जब इस प्रकार मूर्ति का पवित्रिकरण हो जाता है तब भक्तिपूर्ण वातावरण में उसकी पूजा होनी चाहिए ताकि देवी/देवता की शक्ति में समय के साथ वृद्धि होती जाये।

प्राण प्रतिष्ठा की प्रक्रिया

प्राण प्रतिष्ठा के प्राचीन अनुष्ठानों के अंतर्गत विभिन्न प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है जिनका विकास भिन्न-भिन्न दर्शनों से हुआ है। प्राण प्रतिष्ठा के कुछ चरण इस प्रकार हैं–

1. किसी विशेष देवी/देवता की पूजा के लिए निर्मित मंदिर में उनकी मूर्ति को स्थापित किया जाता है। मंदिर के निर्माण के अंतर्गत मिट्टी की जाँच, क्षेत्र की उपयुक्तता, शुभ-अशुभ का विचार, ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति, स्थानीय देवताओं का तुष्टिकरण और वास्तुशास्त्र के सिद्धांतों का प्रयोग सम्मिलित हैं।
2. एक चबूतरे का निर्माण जिस पर मूर्ति को स्थापित किया जाना है, उस चबूतरे का पवित्रीकरण और उसके चारों ओर रक्षक देवताओं का तुष्टिकरण।

3. मूर्ति को तैयार करना–जिस पत्थर में मूर्ति को तराशा जायेगा उसका चयन करने के साथ उसके लिए अनुष्ठान किया जाता है। जब मूर्तिकार शास्त्रवर्णित ढंग से मूर्ति का निर्माण कर लेता है तब उसे प्रारंभिक स्तर पर मंत्रों के साथ पवित्र जल, अक्षत, गाय के दूध, दही, भोजन, ओषधि, मूल्यवान पत्थर और धातुओं के द्वारा उसका अभिषेक करना आवश्यक होता है।
4. इस प्रारंभिक अभिषेक के बाद मूर्ति को मंदिर के स्थान पर ले जाया जाता है। औपचारिक और अन्तिम अभिषेक से पूर्व एक बार फिर से मूर्ति को मंत्रों के साथ गाय के दूध, दही और जल से स्नान कराया जाता है। जिन मूर्तियों का मानव स्वरूप होता है उनके लिए एक भिन्न विधि-विधान होता है; मूर्ति की आँखों को खोलना। इसके लिए मंत्रों के साथ आँखों को रंगा जाता है तथा अक्षत, घी, दही और दूध अर्पित किया जाता है।

अन्त में मूर्ति के शुद्धिकरण और उसे ईश्वर का वासस्थान बनने योग्य बनाने के लिए विस्तृत विधि-विधान से उसका अभिषेक किया जाता है। उसके बाद मूर्ति को एक अन्य पवित्र स्थान पर ले जाया जाता है जहाँ उसे पुरुष सूक्त के पाठ के साथ खाद्यान्नों से पूरी तरह ढक दिया जाता है। तत्पश्चात् मूर्ति के साथ विभिन्न अनुष्ठान किये जाते हैं–

- *तत्त्व न्यास*–मौलिक तत्त्वों को मूर्ति के विभिन्न अंगों पर रखना।
- *कला आवाहन*–मूर्ति के हृदय में आत्मा तथा ईश्वरत्व के अन्य तत्त्वों एवं ज्ञान की शाखाओं का आवाहन करना।
- *प्राण प्रतिष्ठा*
- *होम*

पवित्रीकरण के विधि-विधानों के द्वारा मूर्ति में ईश्वरत्व का अवतरण हो जाता है। ऐसा कहा जाता है कि जब अनुष्ठान पूरा हो जाता है तब उसे मूर्ति के रूप में नहीं, बल्कि वास्तविक देवता के रूप में सम्बोधित किया जाता है।

शिवलिंगम् का प्रतिष्ठान

एक शिवलिंगम् को पूजा और अभिषेक के योग्य बनाने के लिए भी शैव आगम दर्शन के अनुसार प्राण प्रतिष्ठा का अनुष्ठान किया जाता है। शैव दर्शन के अनुसार माना जाता है कि प्राण प्रतिष्ठा तब होती है जब शिव एवं

शक्ति को, जो क्रमशः शुद्ध चेतना और आदि शक्ति के प्रतीक हैं, संयुक्त करने का अनुष्ठान होता है। लिंगम् का स्वरूप इन दोनों तत्त्वों का प्रतीक है। लिंगम् का ऊपरी भाग शिव का प्रतीक है जो निराकार और अप्रकट है। उसका आधार शक्ति का प्रतीक है। प्राण प्रतिष्ठा के अवसर पर लिंगम् को आधार से सज्जित किया जाता है, जो शुद्ध चेतना के प्रतीक शिव को ब्रह्माण्डीय शक्ति से अनुप्राणित करने का प्रतीक है।

गंगा दर्शन के सत्यम् उद्यान में स्थित शिव पीठ के पवित्र क्षेत्र में स्थापित शिवलिंगम् और श्रीयंत्र का अभिषेक और पूजा हर महीने की क्रमशः पाँच और छः तारीख को की जाती है। ये तारीखें स्वामी सत्यानंद सरस्वती की महासमाधि की स्मृति में मनायी जाती हैं और इन दोनों दिन सत्यम् उद्यान के द्वार सभी के लिए खोल दिये जाते हैं ताकि लोग अनुष्ठान में भाग ले सकें और दिव्य शक्ति की कृपा से अपनी चेतना को उन्नत बना सकें। शिव एवं शक्ति के दिव्य प्रतीक शिवलिंगम् तथा श्रीयंत्र में प्राण प्रतिष्ठा की गयी है।

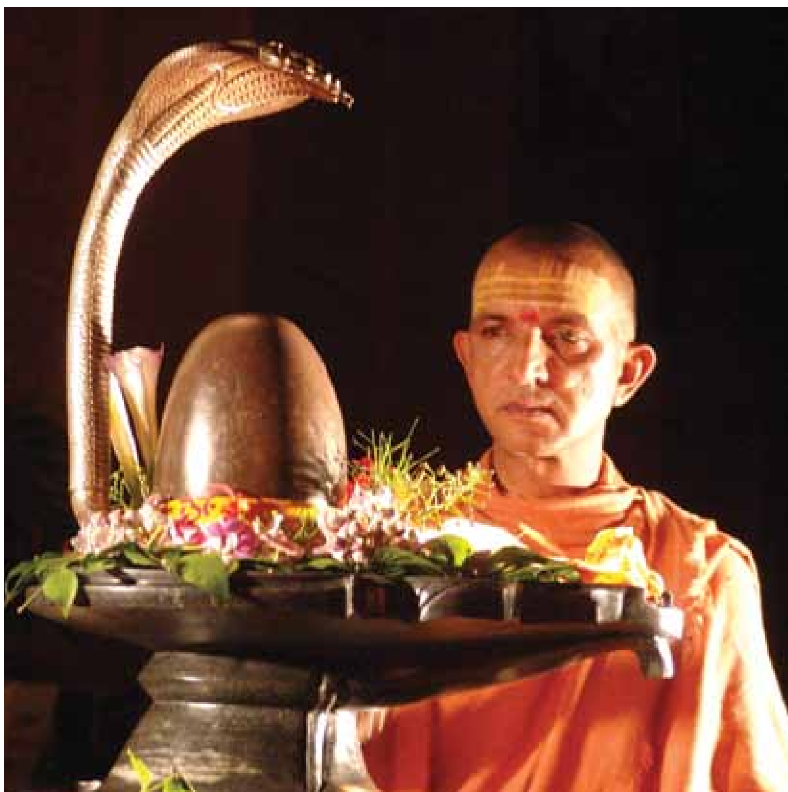
मंत्र का महत्त्व

प्राण प्रतिष्ठा में ब्रह्माण्डीय ऊर्जा को मूर्ति में स्थापित किया जाता है, आवाहन की क्रिया में मंत्र की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। दिव्य शक्तियों के आवाहन और उन्हें जाग्रत करने के लिए मंत्रोच्चारण किया जाता है। स्वामी सत्यानंद के अनुसार मंत्र का सही प्रयोग प्राण विद्या का एक विशिष्ट स्वरूप है। प्रत्येक व्यक्ति के अंदर मंत्र प्राण के सूक्ष्म और विशेष स्वरूप में रहता है। तंत्र के अनुसार संस्कृत के पचास अक्षर विशेष शारीरिक और अतीन्द्रिय केन्द्रों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं। मंत्र का सही आवाहन मन की गहराई में ऊर्जा को प्रभावित करता है, फिर भौतिक शरीर में संप्रेषित हो जाता है। मंत्र की शक्ति प्राण को प्रभावित करती है, जिससे अंततोगत्वा शरीर का उपचार होता है और मन का रूपान्तरण होता है। ('प्राण एवं प्राणायाम' पुस्तक की पृष्ठ संख्या 64 से 76 को पढ़ें)।

इस जटिल ज्ञान के आधार पर गुरु विशेष उद्देश्यों के लिए विभिन्न मंत्रों का प्रयोग करते हैं और उनके उपयोग का सुझाव देते हैं। आध्यात्मिक जागरण और उपचार के उद्देश्य से प्राण का संप्रेषण गुरु से प्राप्त हुए शक्तियुक्त मंत्र द्वारा किया जा सकता है। शक्तिपात द्वारा भी गुरु आध्यात्मिक साधक में प्रत्यक्ष रूप से शक्ति का संप्रेषण करते हैं। शक्तिपात के क्रम में गुरु साधक

को प्रत्यक्षत: शक्ति प्रदान करते हैं, क्योंकि वे ईश्वरीय शक्ति के माध्यम होते हैं। यह शक्तिपात दृष्टि के द्वारा, शब्दों के द्वारा या औपचारिक दीक्षा के द्वारा हो सकता है।

दिव्य शक्ति से परिपूर्ण मंदिरों तथा तीर्थ स्थलों की यात्रा करना, उपासना की क्रियाओं में भाग लेना, ऊर्जावान मंत्रों के स्पंदनों में स्वयं को समाहित कर देना और गुरु से शक्तिसंचार का अनुभव करना आध्यात्मिक विकास करने, स्वयं को और ब्रह्माण्ड को समझने के लिए अनिवार्य है। संत, ऋषि-मुनि और गुरु नि:स्वार्थ भाव से इन ब्रह्माण्डीय ऊर्जाओं को धारण करने के माध्यम बनते रहे हैं ताकि हम अपनी चेतना का विस्तार कर सकें, हममें सकारात्मक संस्कार उत्पन्न हो सकें और हम ईश्वर के साथ जुड़ सकें।



6

प्राण शक्ति पर शोध

पिछली शताब्दी में मानव चेतना में प्रत्यक्ष परिवर्तन हुआ है, क्योंकि अधिक-से-अधिक लोगों में स्वयं को और ब्रह्माण्ड को जानने की उत्सुकता के कारण आध्यात्मिक रुझान उत्पन्न हुआ है। 'प्राण' एवं 'कुण्डलिनी' जैसे शब्दों को आधुनिक शब्दावली में स्थान प्राप्त हुआ है और ध्यान सत्रों के लिए अवकाश पर जाना अब असामान्य बात नहीं है। लेकिन इसके साथ ही बड़ी संख्या में लोग पूछते हैं–"हम यह कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं कि ये धारणायें और अनुभव वास्तविक हैं? हमें यह कैसे ज्ञात होगा कि वे लोग शीघ्रतापूर्वक नाम, यश और धन कमाने के लिए किसी प्रकार ठग नहीं रहे हैं? और यदि किसी को कुण्डलिनी का अनुभव हो भी गया है, तो उससे हमें क्या लाभ होगा? क्योंकि हम तो अभी भी पुराने ढंग से जीवन जी रहे हैं, अपने सुख-दु:ख, समस्याओं और आदतों के साथ ही जी रहे हैं? क्या योगी और संत वास्तव में हमें जीवन के वर्तमान चक्र से बाहर निकाल कर उस ओर ले जा सकते हैं जहाँ नया दिन अधिक प्रकाश लेकर आयेगा?" प्रश्न निश्चित रूप से खोज के लिए प्रेरित करते हैं। जैसा कि एक बार अल्बर्ट आइंस्टीन ने कहा था, एक विचार मुझे कभी-कभी भ्रमित कर देता है–'मैं पागल हूँ या दूसरे लोग?'

उत्तर पाने के लिए अतीन्द्रिय अनुभव प्राप्त व्यक्तियों के अनुभवों को विज्ञान के माध्यम से प्रमाणित करने के उद्देश्य से अनुसंधान किये गये। अनेक व्यक्तियों एवं संस्थाओं ने प्रयोगशाला में प्रयोग किये जिनके द्वारा सदियों पुराने ज्ञान को आधुनिक विश्वसनीयता प्राप्त हुई। योगियों ने फ़ैराडे की गुफाओं में प्रवेश किया है और मशीनों ने देवताओं के छायाचित्र उतारे हैं। इसके द्वारा न केवल अनुभव प्राप्त व्यक्तियों ने समझ का एक अन्य पहलू

जाना है, ज्ञान के एक अन्य क्षितिज में प्रवेश किया है, बल्कि इसने सामान्य लोगों को भी वास्तविकता के अन्य स्तर की खोज करने के लिए प्रेरित किया है।

प्राणिक शरीर के प्रमाण

सत्तर के दशक में पहली बार अमरीका की 'काइनेसियोलॉजिस्ट' डॉ.वैलेरी हंट और उनके सहकर्मियों ने प्राणिक शरीर, आभामंडल और चक्रों के अस्तित्व का वस्तुनिष्ठ प्रमाण प्राप्त किया। अध्ययन के उद्‌देश्य से डॉ.हंट ने शरीर की सतह पर विद्यमान रहने वाली विद्युतीय ऊर्जा, अर्थात् आभामंडल को मापने के लिए उच्च आवृत्ति वाली मशीन 'ऑरामीटर' तैयार की। शरीर के अणुओं से निकलने वाली ऊर्जा की आवृत्ति शरीर से प्राप्त होने वाले किसी अन्य ज्ञात विद्युतीय संकेतों से 1000 गुणा अधिक तीव्र थी, इसमें निरंतरता थी और गत्यात्मक उतार-चढ़ाव हो रहे थे, जो स्नायु तंत्र के स्पंदमान संकेतों से अलग थे।

आभामण्डल को मापने वाले ब्रूयर ने इस अध्ययन में सहयोग किया और विद्युतीय आवृत्ति के रंग का निर्धारण करने के लिए कई प्रकार की मापों को इसमें सम्मिलित किया। इलेक्ट्रोडों को आठ पारंपरिक चक्रों के स्थानों, जैसे आज्ञा चक्र, सहस्रार चक्र एवं अनाहत चक्र पर तथा एक्यूपंक्चर स्थलों पर लगाया गया। ई एम जी ने दो ट्रैक वाले टेप रेकॉर्डर के एक ट्रैक पर विद्युतीय क्रियाओं में परिवर्तन को रिकॉर्ड किया। इसके साथ-साथ ब्रूयर ने ध्वनि ट्रैक पर उनके रंग, आकार और आभमंडल में होने वाली क्रियाओं के वर्णन को रिकॉर्ड किया। अध्ययन के क्रम में जिन व्यक्तियों पर प्रयोग किये जा रहे थे, उन्होंने एक अन्य माइक्रोफोन पर अपने सहज अनुभवों और प्रतीकों का वर्णन किया। यह शीघ्र ही प्रमाणित हो गया कि दोलन-दर्शी (ऑसिलोस्कोप) पर चित्रित होने वाली विशिष्ट तरंग और ब्रूयर द्वारा अपनी आत्मिक संवेदनशीलता के साथ वर्णित रंगों के बीच विश्वसनीय सम्बन्ध था।

इसके बाद प्राप्त हुई पाँच स्पंदनशील रंगपट्टियों के अर्थ को मालूम करने, तथा उनके गहरे भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक एवं आचरणात्मक प्रभावों को ज्ञात करने के लिए शोध किये गये। अध्ययन से यह प्रकट हुआ कि ऊर्जा की एक विशेष आवृत्ति वाले स्पंदन से ध्वनि के साथ-साथ रंग भी उत्पन्न हुआ। रिकॉर्ड की गयी ध्वनि की आवृत्ति का अनुभव किया जा सकता था और ध्वनि-शक्ति में वृद्धि करने पर उसे स्पष्ट रूप से सुना जा सकता था। जब ध्वनि सुनाई नहीं

भी दे रही थी, तब भी उसके स्पंदन को शरीर के कोमल ऊतकों तथा सिर, मेरुदण्ड, छाती और उदर के खोखले क्षेत्रों में अनुभव किया जा सकता था।

बाद के अनुसंधान में जैव-ऊर्जा क्षेत्रों को मापने के क्रम में डॉ. हंट ने पाया कि प्रत्येक व्यक्ति के विश्राम का अपना विशेष स्वरूप होता था और व्यक्ति जब पूर्णत: स्वस्थ था तब सम्पूर्ण जैव-ऊर्जा क्षेत्र में संतुलित, सुसंगत ऊर्जा वाली आवृत्ति व्याप्त थी। इसके विपरीत जो लोग बीमार थे या शीघ्र ही अस्वस्थ होने वाले थे, उनमें ऊर्जा का स्वरूप अपर्याप्तता या अतिसक्रियता प्रदर्शित कर रहा था। इस अन्वेषण से परम्परागत उपचार पद्धति का आधारभूत सिद्धान्त प्रकट होता है–प्राणिक शरीर की स्थिति का शारीरिक स्वास्थ्य से सीधा सम्बन्ध है। सदियों से उपचारकों ने प्राणिक शरीर में स्फूर्ति लाने और प्राणों को संतुलित करने के लिए ऊर्जा स्पंदन का प्रयोग रंग, ध्वनि, चुम्बक, होमियोपैथी औषध, एक्युपंक्चर और मालिश के रूप में किया है। डॉ. हंट के अनुसार मौलिक जीवविज्ञान का यह सिद्धान्त कि जीव-जन्तु ऊर्जा के आदान-प्रदान की जटिल प्रणालियाँ है– चिकित्सा शास्त्र, मनोविज्ञान, शिक्षा और संचार तंत्र का अग्रणी सिद्धान्त बनता जा रहा है।

डॉ. हंट द्वारा स्थापित "द बायोएनर्जी फ़ील्ड्स फ़ाउण्डेशन मिशन" में आज भी शोध एवं विकास के कार्य चल रहे हैं। वर्तमान में इस संस्थान का उद्देश्य एक ऐसे उन्नत प्रकार के ऑरामीटर प्रणाली का निर्माण करना है जिसका प्रयोग चिकित्सा के क्षेत्र में किया जा सके। इस प्रणाली में रोग के लक्षणों या रोग की पूर्वावस्था का पता लगाने की तथा तदनुरूप उपचार का संकेत देने की क्षमता है। प्राणिक शरीर में परिवर्तन के द्वारा किसी रोगविशेष का उपचार करने के क्रम में प्रयुक्त होने वाली परम्परागत उपचार पद्धतियों की उपचार क्षमता के सम्बन्ध में अधिक प्रमाण प्रदान करने के लिए भी शोध किये जा रहे हैं।

किर्लियन फ़ोटोग्राफ़ी

किर्लियन फ़ोटोग्राफ़ी का आविष्कार सन् 1939 में एक रूसी (बिजली मिस्त्री) सेमियोन किर्लियन के द्वारा तब किया गया जब उसने एक मरीज़ से जुड़े दो इलेक्ट्रोडों के बीच एक चिनगारी को उछलते हुए देखा। इस आविष्कार से प्रोत्साहित होकर उसने एक ऐसे उपकरण की रचना की जो किसी वस्तु के चारों ओर हो रही विद्युतीय क्रियाओं के चित्र उतार सकता है। उस उपकरण के द्वारा एक इलेक्ट्रोड तथा फोटोग्राफी के कागज में उच्च आवृत्ति की 40,000 वोल्ट

की विद्युत प्रवाहित की जाती है। जब कागज पर एक वस्तु को रखा जाता है तब विद्युतीय क्षेत्र प्रभावित हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप उस वस्तु का एक चित्र प्रस्तुत हो जाता है। किर्लियन फ़ोटोग्राफ़ में चित्रित वस्तु के चारों ओर प्रकाश का निकलना, प्रदीप्ति, स्फुल्लिंग और प्रभामण्डल को देखा जा सकता है। कुछ लोगों का मानना है कि यह प्रभामण्डल का चित्र है, अर्थात् प्राणिक ऊर्जा क्षेत्र की छवि है जो एक विशेष रासायनिक मिश्रण के माध्यम से प्रकट हो जाती है।

उसके बाद से किर्लियन फ़ोटोग्राफ़ी का उपयोग करते हुए अनेक अध्ययन किये गये। प्रयोगों से यह प्रकट हुआ है कि निर्जीव वस्तुओं, जैसे, एक सिक्के का निष्क्रिय, स्थिर और अपरिवर्तनीय प्रभामण्डल होता है। जबकि सजीव वस्तुओं का प्रभामण्डल मानसिक, भावनात्मक और शारीरिक परिवर्तनों के साथ परिवर्तित होता है। उदाहरणार्थ– भयभीत, घबराये और चिन्तित व्यक्तियों से धब्बेदार प्रकाश निकलता है। ऐसे लोग जो उत्तेजित हैं, क्रुद्ध हैं या बेझिझक हैं, उनमें प्राय: अधिक प्रकाश निकलता है।

ग्रेडन रिक्सन तथा जॉन मूरे ने पत्तियों पर किये गये एक रोचक अनुसंधान के परिणामों के विषय में बताया है कि एक पत्ती के ऊपरी छोर को काट दिये जाने पर भी उसका विद्युतीय क्षेत्र बना रहता है, जिससे वह सम्पूर्ण प्रतीत होती है। कुछ समय पहले तोड़ी गयी पत्तियों के फ़ोटो में पाया गया कि उनका स्वाभाविक चमकीला प्रकाश धीरे-धीरे कम होता जाता है और अंतत: उसका फ़ोटो लेना संभव नहीं होता है। योगियों का कहना है कि मृत्यु के साथ ही प्राण शरीर से बाहर निकल जाता है, और संभवत: ये फ़ोटोग्राफ़ पत्ती की मृत्यु को ही प्रदर्शित करते हैं।

डॉ. थेलमा मॉस ने संयुक्त राज्य अमेरिका में किर्लियन फ़ोटोग्राफ़ी का प्रयोग करते हुए जो शोध किया, उसका अपनी पुस्तक 'द प्रोबैबिलिटी ऑफ़ द इम्पॉसिबल' में निम्नलिखित रूप में वर्णन किया है–

1. डॉ. डेविड शेकिन और उनके सहयोगियों ने न्यूयॉर्क के रॉकलैण्ड स्टेट हॉस्पीटल में श्वसन तंत्र, पाचन तंत्र और मानसिक रोग से पीड़ित व्यक्तियों का अध्ययन किया है। उन्होंने पाया कि भिन्न-भिन्न रोगों की स्थिति में किर्लियन फ़ोटोग्राफ़ी से मापे गये प्रभामण्डल में आमूल परिवर्तन आ जाता है। भविष्य में हम प्रभामण्डल के स्वरूप के आधार पर रोग का निर्धारण कर सकेंगे, और इस प्रकार रोग के आरंभ होने से पूर्व या उसके अधिक गंभीर अवस्था में पहुँचने से पूर्व ही उसकी जानकारी प्राप्त कर लेंगे।

2. डॉ. मॉस ने विभिन्न व्यक्तियों के बीच ऊर्जा के परस्पर विनिमय को जाँचने के लिए किर्लियन फ़ोटोग्राफ़ी का अध्ययन किया। एक प्रयोग में दो व्यक्तियों को एक-दूसरे की आँखों में तब तक देखने के लिए कहा गया जब तक उन दोनों के बीच गहराई से सम्बद्ध होने का भाव न उत्पन्न हो जाये। इस प्रकार जब सम्बन्ध स्थापित हो गया तब उन दोनों की अंगुलियों के पोरों का चित्र उतार लिया गया। लेकिन एक व्यक्ति की अंगुलियों के पोरों का चित्र गायब था। हमारे दैनिक जीवन के पारस्परिक कार्य-संपादनों और भावनाओं एवं समानुभूतिक-असमानुभूति संवेदनाओं के अध्ययन के लिए महत्त्वपूर्ण आशय वाला एक रोचक अवलोकन है।
3. जब सुविख्यात अमरीकी आत्मिक एवं प्राणिक उपचारक डॉ.ओल्गा वोरॉल का चित्र लिया गया तो पाया गया कि उनमें इच्छानुसार ऊर्जा को नियंत्रित करने की क्षमता थी। ऐसा देखा गया है कि सामान्य लोगों की तुलना में उपचारकों का प्रभामण्डल असाधारण रूप से बड़ा होता है।

वर्ष 1978 में रोमानिया के वैज्ञानिकों ने शरीर को स्कैन करने की विधि का विकास किया, जिसे इलेक्ट्रोनोग्राफ़ी कहा गया। यह किर्लियन विधि के समान होते हुए भी उससे अधिक विकसित है। इसमें श्याम-श्वेत चित्रांकन से लेकर रंगीन वीडियो टेप बनाने की सुविधाएँ हैं। एक विशेष उच्च वोल्टेज वाले क्षेत्र से विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न होता है जिसे परिवर्तित कर चित्र लिये जाते हैं। बुखारेस्ट के 'लेबर प्रोटेक्शन एण्ड हाइजीन सेन्टर' में 6000 से अधिक लोगों की इलेक्ट्रोनोग्राफ़ी की गयी। वहाँ प्रयोगात्मक अध्ययनों से यह प्रकट हुआ कि इसके द्वारा स्वस्थ एवं रोगग्रस्त ऊतकों का पता लगाना संभव है। प्रकाश की तीव्रता में परिवर्तन आ जाता है। उदाहरण के लिए, सूजन की स्थिति में रंग गहरा होता है, जबकि कैंसर की स्थिति में रंग हल्का रहता है। प्रभामण्डल के द्वारा रोग के लक्षणों को ज्ञात करने की विधि का प्रयोग कर यह आशा की जा रही है कि रोगों की रोकथाम और उपचारात्मक चिकित्सा के क्षेत्रों का विस्तार होगा।

विगत वर्षों में रूस के 'सेंट पीटर्सबर्ग स्टेट टेक्निकल यूनिवर्सिटी ऑफ़ इन्फ़ॉर्मेशनल टेक्नोलॉजी, मेकैनिक्स एण्ड ऑप्टिक्स' के डॉ. कॉन्टेन्टिन कोरोत्कॉव ने जी.डी.वी. कैमरा बनाया है, जो जैविक वस्तुओं के ऊर्जा स्तर के वितरण को मापता है। यह किर्लियन प्रभाव पर आधारित है। 'गैस डिस्ट्रिब्यूशन विज़ुअलाइज़ेशन' या जी.डी.वी.के उपकरण 'इलेक्ट्रो-फ़ोटोनिक ग्लो' को मापने के लिए शीशे के इलेक्ट्रोड का प्रयोग कर स्पंदनशील विद्युतीय क्षेत्र

उत्पन्न करते हैं। जी.डी.वी. कैमरे में ऊर्जा के सामान्य, अपर्याप्त या अतिरिक्त स्तरों को, मानव शरीर के चारों ओर ऊर्जा-क्षेत्र के वितरण को तथा चक्रों में ऊर्जा की स्थिति को प्रदर्शित करने की क्षमता है। हालाँकि इसका महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है, फिर भी जी.डी.वी. कैमरा केवल जीव की ऊर्जा की विद्यमान स्थिति का आकलन कर पाता है, वर्तमान समय में इसका उद्देश्य रोग का निदान, उसका उपचार या उसकी रोकथाम करना नहीं है।

नाड़ियाँ एवं चक्र

नाड़ियों एवं चक्रों के अस्तित्व को प्रमाणित करने के लिए 'इन्टरनेशनल एसोसिएशन फ़ॉर रिलिजन एण्ड पैरासाइकोलॉजी' के अध्यक्ष डॉ. हिरोशी मोटोयामा ने महत्त्वपूर्ण शोध किये हैं। उनका कहना है, "नाड़ियों एवं चक्रों से सम्बन्धित योग की अनेक पुस्तकों का अध्ययन करने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि आसन, मुद्रा, प्राणायाम और धारणा का विकास दक्षता के साथ नाड़ी तंत्र के ज्ञान के आधार पर किया गया जो चीन के एक्यूपंक्चर मेरीडियन पद्धतियों 'की अथवा ची' ऊर्जा के महत्त्वपूर्ण मार्गों के समान है।"

डॉ. मोटोयामा ने लिखा है कि एक्यूपंक्चर तथा नाड़ियों की यौगिक धारणा का एक ही आधार है। हम लोग ऐसी पद्धतियों पर कार्य कर रहे हैं जो हजारों वर्षों से प्रचलित रही हैं, और संभवत: ये तब भी विद्यमान थीं जब मनुष्य यूरेशिया के क्षेत्र में भ्रमण कर रहा था। यह अपने आप में इन पर विश्वास करने का एक कारण है कि इनके आधार में कुछ ऐसा ठोस तथ्य है जिसके कारण लोगों ने इन्हें स्वीकार किया और इतने लम्बे समय तक इनके सिद्धान्तों का अनुपालन किया। ऐसी प्रणालियाँ जिनसे कोई परिणाम नहीं निकलता, उन्हें शीघ्र ही त्याग दिया जाता है। तथापि आज वैज्ञानिक आधुनिक वैज्ञानिक तर्कों के प्रकाश में ऐसे प्रतिमान की खोज में हैं जिसके आधार पर इन प्राचीन तथ्यों की व्याख्या की जा सके ताकि वर्तमान समाज इन्हें स्वीकार कर सके।

यह देखने के लिए कि वास्तव में नाड़ियों का अस्तित्व है, डॉ. मोटोयामा ने ऐसे दो उपकरणों का विकास किया जो शरीर से निकलने वाली ऊर्जा को माप सके। उनका दावा है कि किर्लियन उपकरण के द्वारा लिए गये ऊर्जा के चित्र एक्यूपंक्चर मेरीडियन, जैसे, अंगुलियों के छोरों से निकलने वाली ऊर्जा के समान ही है। पहली मशीन को उन्होंने 'ऐपरेटस फ़ॉर मेरीडियन आइडेन्टिफ़िकेशन (ए.एम.आइ.)', अर्थात् मेरीडियन की पहचान करने वाली

मशीन कहा। इसमें इलेक्ट्रोड का डिब्बा, कम्प्यूटर और डाटा को प्रिंट करने वाली मशीन होती है। डॉ. मोटोयामा द्वारा विकसित विशेष प्रकार के इलेक्ट्रोडों को हाथ एवं पैर की अंगुलियों के अट्ठाइस एक्यूपंक्चर बिन्दुओं से जोड़ दिया जाता है। उसके बाद वे उन इलेक्ट्रोडों के माध्यम से लगभग तीन वोल्ट की अल्प विद्युत धारा प्रवाहित करते हैं और प्रत्येक बिन्दु पर विद्युत प्रवाहित करने से ठीक पहले और ठीक बाद 'गैल्वेनिक स्किन रज़िस्टेन्स' (गैल्वेनिक त्वचा प्रतिरोध) को रिकॉर्ड करते हैं।

डॉ. मोटोयामा की मशीन अतिसंवेदनशील होने के कारण लगभग एक से दस माइक्रोसेकेण्ड के बीच स्नायु तंत्र की क्रियाओं में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों को भी माप सकती है। दो हजार से अधिक लोगों पर किये गये प्रयोग के परिणामों की तुलना की गयी। यदि परिणाम सामान्य सीमा से अधिक है तो इसका तात्पर्य है कि मेरीडियन अतिसक्रिय है, और यदि यह कम है तो मेरीडियन सामान्य से कम सक्रिय है। अमरीका के स्टैनफ़ोर्ड विश्वविद्यालय में उन्होंने जिस व्यक्ति पर अध्ययन किया था उसे फेफड़ों का कैंसर था। फेफड़े के मेरीडियन की सामान्य सीमा एक हजार होनी चाहिए, जबकि उस व्यक्ति में वह केवल एक सौ पचास ही पायी गयी, जो उस क्षेत्र में ऊर्जा की अत्यधिक कमी को दर्शाता है।

सामान्य लोगों के परिणामों की तुलना स्पष्ट लक्षणों वाले प्रत्यक्षत: रोगग्रस्त लोगों से करने पर शरीर की ऊर्जा, स्वास्थ्य और किसी व्यक्ति में रोग की संभावनाओं को मापने की एक विशेष विधि प्राप्त होती है। विद्युत प्रवाह देने से पूर्व के आँकड़े लम्बे समय से चली आ रही शरीर की सहज अवस्था और चयापचय की स्थिति का संकेत देते हैं। विद्युत प्रवाह देने के समय के आँकड़े किसी उद्दीपक के प्रति शरीर की प्रतिक्रिया और मौसम तथा जलवायु के प्रभाव को दर्शाते हैं। विद्युत प्रवाह देने के बाद के आँकड़े शरीर की अस्थायी क्रियाओं तथा मूल ऊतक के प्रतिरोध की ओर इंगित करते हैं।

डॉ. मोटोयामा अपने आँकड़ों के विश्लेषण के लिए एक्यूपंक्चर के सिद्धान्त का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिए, फेफड़े की असामान्य रीडिंग उसके और बड़ी आँत के मेरीडियन के बीच यिन-यांग सम्बन्ध के कारण संकेत देती है कि आँत के मेरीडियन में कोई समस्या है। एक्यूपंक्चर में सभी अंगों तथा उनके बीच के सम्बन्धों की व्याख्या की गई है। डॉ. मोटोयामा के अनुसार अंगों में रोग के प्रकट होने से पूर्व ही रोग की प्रवृत्तियों को जाना जा सकता है।

यह रोग निरोधक चिकित्सा के लिए एक वरदान है, क्योंकि इसकी सहायता से उपचारक किसी व्यक्ति को भावी समस्याओं से बचने के उपाय बतला सकता है। यह समय के अतिरिक्त अस्पताल में होने वाले खर्च को तो बचाता ही है, इसके द्वारा अनावश्यक परीक्षणों से भी बचा जा सकता है। इस उपकरण का प्रयोग रोगियों को जाँचने के लिए पहले से ही अनेक अस्पतालों में किया जा रहा है तथा जापान के कैनागावा पुनर्वास केन्द्र में इसके परिणामों की तुलना एक्स-रे और बायोकेमिकल जाँचों के परिणामों से की जा रही है। 'ऐपरेटस फ़ॉर मेरीडियन आइडेन्टिफ़िकेशन (ए. एम. आइ.)', अर्थात् मेरीडियन की पहचान करने वाली मशीन का उपयोग अमरीका के कुछ और जापान के अनेक चिकित्सा संस्थानों में रोग-निदानसूचक यंत्र के रूप में और स्वास्थ्य एवं रोग पर अनुसंधान के लिए किया जा रहा है।

डॉ. मोटोयामा द्वारा तैयार की गयी दूसरी मशीन को 'चक्र मशीन' कहा जाता है। कुछ लोगों का दावा है कि इस मशीन से इलेक्ट्रोड को मानव शरीर से जोड़े बिना ही शरीर से निकलने वाली प्राणिक ऊर्जा को मापा जा सकता है। ताँबे से परिरक्षित कमरे में विशेष प्रकार से तैयार किये गये पूर्व-प्रवर्धक (प्री-ऐम्प्लिफ़ायर) और सीसा का उपयोग करते हुए सूक्ष्मतम ऊर्जा का भी पता लगाया जा सकता है। शरीर के जिस अंग की ऊर्जा को मापना होता है, उसमें लगाये गये फ्रेम में इलेक्ट्रोड ऊपर-नीचे खिसकता है और उसके द्वारा ऊर्जा को माप लिया जाता है। इलेक्ट्रोडों के बीच विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न किया जाता है, और जब शरीर से प्राणिक ऊर्जा निकलती है तब यह चुम्बकीय क्षेत्र को प्रभावित करती है। डॉ. मोटोयामा ने इस मशीन का प्रयोग कर कैंसर का निदान किया है, और उन्होंने चक्रों को उनकी जाग्रत एवं सुप्त अवस्थाओं में अंकित करने का दावा किया है। उन्होंने अपनी पुस्तक में अपने दावे को प्रमाणित करने के लिए आँकड़े दिये हैं।

यह देखने के लिए कि वास्तव में नाड़ियों एवं एक्यूपंक्चर मेरीडियन का अस्तित्व है, डॉ. मोटोयामा ने एक अन्य प्रयोग में शरीर के विशेष बिन्दुओं पर इलेक्ट्रोडों को लगा दिया और एक इलेक्ट्रोड को एक्यूपंक्चर मेरेडियन के एक छोर से जोड़ दिया। इसके परिणामस्वरूप हाथ या प्रेरक बिन्दुओं के स्नायु क्षेत्र का विद्युत क्षेत्र प्रभावित नहीं हुआ। केवल उन्हीं विशेष बिन्दुओं में प्रतिक्रिया हुई जिनका घनिष्ठ सम्बन्ध उस मेरीडियन से था।

एक अन्य प्रयोग में बाँह को तरल क्रिस्टलों से ढक दिया गया, जिनका रंग तापक्रम परिवर्तन से परिवर्तित हो जाता है। एक्यूपंक्चर मेरीडियन पर स्थित

एक बिन्दु को ताप दिया गया। तीन या चार मिनट के बाद मेरीडियन पर लगे क्रिस्टलों का रंग प्रत्यक्ष रूप से बदल गया, जो तापक्रम वृद्धि का संकेत था।

प्राणिक उपचार

प्राणिक ऊर्जा के तथ्य और प्राणिक उपचार में यह किस प्रकार कार्य करती है तथा इससे सम्बद्ध विषयों की जाँच करने के लिए डॉ. हिरोशी मोटोयामा ने अपने 'ऐपरेटस फ़ॉर मेरीडियन आइडेन्टिफ़िकेशन (ए.एम.आइ.)' और चक्र मशीन का प्रयोग किया, जबकि प्राणिक उपचारक ने स्वयं पर परीक्षण कराने वाले व्यक्ति में प्राण का संचार करने का प्रयास किया। इस प्रयोग के परिणामों को सन् 1979 में ब्राज़ील के साओ पॉलो में 'साइकोट्रॉनिक रिसर्च' पर आयोजित हुए चौथे अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रस्तुत किया गया। प्रयोग के आधार पर डॉ. मोटोयामा ने निम्नलिखित बिन्दुओं को प्रतिपादित किया–

- 'साई-ऊर्जा' या प्राण अंगुलियों और हथेलियों से बाहर निकलता है।
- जब इस ऊर्जा को चक्र में भेजा जाता है तब सम्बद्ध बिन्दुओं या चक्र से जुड़ी एक्यूपंक्चर मेरीडियन, या नाड़ियों में परिवर्तन आते हैं।
- मेरीडियन प्रणाली तथा स्नायु तंत्र परस्पर सम्बद्ध हैं।
- मेरीडियन और अनुकम्पी स्नायु तंत्र में प्राणिक ऊर्जा की क्रिया विपरीत दिशाओं में कार्य करती है। उनकी विपरीत क्रियाओं के द्वारा शरीर की संपूर्ण व्यवस्था में गत्यात्मक संतुलन एवं सामंजस्य बना रहता है।
- प्राणिक उपचारकों में रोगी के शरीर से निकलने वाली 'साई-ऊर्जा' को अनुभव करके मेरीडियन प्रणाली के या शरीर के किसी अंग या ऊतकों के रोगों को पहचानने की योग्यता होती है।
- प्राणिक उपचार में जब रोगी के शरीर में 'साई-ऊर्जा' प्रेषित की जाती है तब उपचारक के जाग्रत चक्र के साथ सम्बद्ध मेरीडियन में परिवर्तन आते हैं, इसका तात्पर्य यह है कि चक्र ऊर्जा का स्रोत है।
- 'साई-ऊर्जा' पहले भौतिक ऊर्जा के एक रूप में परिवर्तित होती है, जिसके फलस्वरूप शरीर में परिवर्तन आते हैं।
- 'साई-ऊर्जा' संप्रेषित करने के दौरान अनुकम्पी स्नायु तंत्र और हृदय सम्बन्धी प्रणाली में उत्तेजना देखी गयी।
- ऐसा प्रतीत होता है कि नाड़ियों, मेरीडियन, प्राण और अनुकम्पी स्नायु तंत्र के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध है।

- 'साई-ऊर्जा' एवं शारीरिक ऊर्जा के बीच चक्रों के माध्यम से पारस्परिक क्रियाएँ होती हैं।
- प्राणिक उपचार के क्रम में जो ऊर्जा उत्पन्न होती है उसे जाग्रत चक्र उपलब्ध कराता है और वह अँगुलियों के एक्यूपंक्चर बिन्दुओं से या हथेली से निकलती है।

स्पर्शरहित उपचार

अनेक पारम्परिक उपचार पद्धतियों में यह माना जाता है कि भौतिक शरीर के समुचित ढंग से क्रियाशील रहने के लिए ऊर्जा का एक विशेष स्तर और उसका प्रवाह महत्त्वपूर्ण है। ऐसा माना जाता है कि भौतिक शरीर के संचालन में प्रमुख भूमिका निभाने वाले स्नायु एवं संचार तंत्रों की क्रियाओं के लिए ऊर्जा आवश्यक है। इस प्रकार भौतिक शरीर सामान्य रूप से तभी कार्य करेगा जब इसके प्रत्येक अवयव में पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा की आपूर्ति होती रहेगी।

डॉ. मोटोयामा तथा उनके सहयोगियों ने अपने दो अध्ययनों में प्राणिक शरीर पर स्पर्शरहित प्राणिक उपचार के प्रभाव की जाँच की। इस विधि में शरीर के चारों ओर स्थित प्राणिक क्षेत्र को उत्प्रेरित करने और उसमें सामंजस्य लाने के लिए हाथों को शरीर के ऊपर बिना स्पर्श किए रखा जाता है। सन् 2010 में कोजी त्सूशिया और डॉ. मोटोयामा द्वारा किये गये पहले अध्ययन में प्राणिक शरीर पर प्राणिक उपचार के प्रभाव को देखा गया। स्तन कैंसर से पीड़ित रोगी पर किये गये प्राणिक उपचार के चार सत्रों में परिवर्तनों को अंकित किया गया। शरीर के ऊपरी और निचले भाग में ऊर्जा असंतुलन पर आधारित प्राणिक उपचार का उद्देश्य निचले चक्रों का शुद्धिकरण एवं उन्हें शान्त करना था, जबकि ऊपरी चक्रों को ऊर्जा प्रदान करना और उन चक्रों का विस्तार करना था। 'ऐपरेटस फ़ॉर मेरीडियन आइडेन्टिफ़िकेशन (ए.एम.आइ.)' के परिणामों से प्रदर्शित हुआ कि उपचार के उपरांत ऊपर और नीचे के ऊर्जा असंतुलन में सुस्पष्ट विपरीत परिवर्तन आया। अध्ययन के द्वारा विद्युत के माध्यम से मापे जाने योग्य परिवर्तन को ऊर्जा परिवर्तनों के प्रथम अवलोकन के रूप में और स्पर्शरहित प्राणिक उपचार के दौरान ऊर्जा में किये जाने वाले परिवर्तन की वास्तविकता के ठोस वस्तुनिष्ठ प्रमाण के दावे को प्रस्तुत किया गया।

कोजी त्सूशिया तथा तोशियाकी हरदा के साथ किए गये अपने दूसरे अध्ययनों में 'रीकनेक्टिव हीलिंग' (पुनर्संयुक्तिकरण उपचार) के प्रभाव को देखा गया।

'रीकनेक्टिव हीलिंग' ऐसा स्पर्शरहित प्राणिक उपचार है जिसमें ब्रह्माण्ड की ऊर्जा उपचारक के माध्यम से कार्य करती है। उपचारक रोगी के शरीर की अवस्था की जाँच करता है और ऊर्जा में परिवर्तन के द्वारा प्राण और स्वास्थ्य में सुधार लाता है। पुनर्संयुक्तिकरण उपचार अन्य स्पर्शरहित प्राणिक उपचार पद्धतियों से इस अर्थ में भिन्न है कि इसमें उपचारक को रोगी के बारे में पहले से जानकारी होने या उपचार की पूर्व तैयारी करने की आवश्यकता नहीं होती है।

इस अध्ययन में डॉ. मोटोयामा के 'ऐपरेटस फ़ॉर मेरीडियन आइडेन्टिफ़िकेशन (ए.एम.आइ.)' के प्रयोग द्वारा शरीर में ऊर्जा की स्थिति में होने वाले परिवर्तनों पर ध्यान रखा गया। इस अध्ययन का उद्देश्य यह देखना था कि क्या 'ए.एम. आइ.' के द्वारा मापी जा सकने वाली ऊर्जा में परिवर्तन पुनर्संयुक्तिकरण उपचार से लाए जा सकते हैं, और यदि उन्हें मापा जा सकता है तो उपचार के संदर्भ में उन परिवर्तनों की विशेषताओं का मूल्यांकन करना।

यह विशेष अध्ययन उस रोगी पर किया गया था जिसके पैर हृदय की शल्य चिकित्सा के बाद दुबले-पतले हो गये थे और वह चल-फिर नहीं पा रहा था। शल्य क्रिया के दौरान दायें वृक्क में एक ट्यूमर भी पाया गया, जो खतरनाक नहीं था। उपचार आरंभ करने से पूर्व 'ए.एम.आइ.' के माध्यम से ऊपर और नीचे की ऊर्जा में अत्यधिक असंतुलन पाया गया और शरीर का निचला मेरीडियन अधिक दोषपूर्ण था। उस रोगी का स्वास्थ्य छ: महीनों तक इसी प्रकार रहा, अर्थात् चलने में असमर्थता और दायें वृक्क में ट्यूमर।

उपचार के प्रयास में जो सबसे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन लाया गया, वह था शरीर के ऊपरी और निचले भागों के बीच ऊर्जा के अत्यधिक असंतुलन में सुधार। शरीर के निचले भाग में ऊर्जा के 'भरने' से स्वैच्छिक स्नायु तंत्र पुन: क्रियाशील हो गया, जिसके द्वारा शरीर का निचला भाग पुन: ऊर्जावान और अधिक क्रियाशील हो गया। रोगी की संपूर्ण ऊर्जा का स्तर अपरिवर्तित ही रहा, जिससे यह संकेत मिलता है कि ऊर्जा ग्रहण करने के स्थान पर उपचार की प्रक्रिया ने ऊर्जा के पुनर्वितरण द्वारा रोगी के शरीर के निचले भाग में ऊर्जा की कमी को पूरा कर दिया। उपचार के पहले जो दायें और बायें भाग में असंतुलन था, वह पूरी तरह समाप्त हो गया। यद्यपि अध्ययन पूर्णत: ऊर्जा में होने वाले परिवर्तनों को प्रकट करने पर केन्द्रित था, फिर भी यह पाया गया कि उपचार के तीसरे सत्र के बाद रोगी बिना किसी सहायता के खड़ा हो गया और बिना छड़ी इत्यादि के धीरे-धीरे चलने लगा। प्राणिक परिवर्तनों के वर्णन के संदर्भ में यह पूर्णत: अप्रत्याशित घटना नहीं थी।

साहसिक कदम/आगे की परियोजना

विज्ञान ने हाल ही में अपनी तकनीकों में प्रगति के द्वारा ब्रह्माण्डीय ऊर्जा के साथ तालमेल बैठाया है। जब सन् 1895 से 1900 के बीच एक्स-रे, इलेक्ट्रॉन, रेडियोधर्मिता और क्वांटम सिद्धांत का आविष्कार हुआ तब नोबेल पुरस्कार विजेता अल्बर्ट सेन्ट-जियॉर्जी ने कहा, 'इनमें से कोई भी हमारी इंद्रियों के द्वारा न तो ज्ञात थे और न हो सकते थे। उनका तात्पर्य यह था कि मनुष्य के चारों ओर एक ऐसा संसार था जिसका उसे कोई आभास नहीं था और उसकी इंद्रियाँ उसकी कोई जानकारी नहीं दे सकती थीं।"

यही बात उन ऊर्जाओं पर लागू होती है जिन्हें डॉ. हन्ट और डॉ. मोटोयामा जैसे लोगों ने अनावृत किया। ऐसा प्रतीत होता है कि हम अपने चारों ओर व्याप्त ऊर्जा के सूक्ष्म स्तरों को अधिक-से-अधिक उद्‌घाटित करना सीख रहे हैं, फिर भी वे हमारी इंद्रियों की पहुँच से बाहर हैं। डॉ.मोटोयामा ने कहा है, "यदि यह पता चल जाये कि मनुष्य केवल भोजन और वायु से प्राप्त ऊर्जा पर नहीं, बल्कि एक प्रकार की प्राणिक ऊर्जा पर भी आश्रित रहता है, तो हमें अपने और अपने अस्तित्व के प्रति अपने दृष्टिकोण में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन लाना होगा।"

वैज्ञानिक शोधों से ऐसा प्रतीत होता है कि प्राण, नाड़ियों, चक्रों और एक्यूपंक्चर मेरीडियनों के अस्तित्व को पहचानने वाला संवेदनशील उपकरण एक वास्तविकता बन रहा है। मानव जाति एक ऐसे युग की ओर अग्रसर है जिसमें योग एवं प्राण विद्या के द्वारा उपचार जैसे पूर्व के अस्पष्ट तथ्यों की व्याख्या साधारण व्यक्ति के लिए सुलभ होती जा रही है। प्राण विद्या नयी नहीं है; तथापि पहले यह केवल उन लोगों को उपलब्ध थी जिन्हें योग के उपचार विज्ञान की दीक्षा मिली हुई होती थी और जिन्होंने अपनी तपस्या, कठिन प्रयास और ध्यान पर शोध करके अपने अंदर दबे हुए विशाल कोष को ढूँढ निकाला था।

योगियों, ऋषियों और उपचारकों ने ऐसे अभिलेखों का प्रतिपादन किया है जिसके द्वारा हम अपनी ऊर्जा का स्तर बढ़ा सकते हैं और ब्रह्माण्ड की शक्ति का प्रत्यक्ष अनुभव कर सकते हैं। अनुसंधानकर्ताओं के कार्य प्राचीन दावों को प्रमाणित करने में सहायक हो रहे हैं। तथापि भले ही विज्ञान मशीनों के द्वारा उपलब्ध ऊर्जा की खोजकर उसको प्रमाणित करे, हम उसके मूल तत्त्व का उपयोग केवल प्रत्यक्ष अनुभव से कर सकते हैं, जो अभ्यास के द्वारा ही सम्भव है।



अभ्यास

7

अभ्यासों के लिए रक्षोपाय

प्राण विद्या के अभ्यास में धीरे-धीरे, स्थिरता और क्रम से आगे बढ़ना चाहिए। यहाँ दिये गये मार्गदर्शन का अनुपालन तब तक किया जाना चाहिए जब तक साधक ने प्राण विद्या के अभ्यास में अतीन्द्रिय स्तर पर दक्षता न प्राप्त कर ली हो। यदि इन दिशानिर्देशों का सही ढंग से पालन नहीं किया गया तो शारीरिक और मानसिक असंतुलन का खतरा रहता है।

मार्गदर्शन– प्राण शक्ति को जाग्रत करने के लिए मार्गदर्शन आवश्यक है। इस तकनीक को गुरु अथवा एक प्रशिक्षित शिक्षक की उपस्थिति में ही सीखना चाहिए। कभी-कभी इस ऊर्जा के जागरण से शरीर के किसी भाग में भयंकर पीड़ा का अनुभव हो सकता है, जो अचानक मस्तिष्क की ओर चला जाता है या फिर गहन आनन्द का अनुभव भी हो सकता है।

स्वार्थहीनता– जो लोग प्राण विद्या का प्रयोग दूसरों के उपचार के लिए करना चाहते हैं, उन्हें सभी प्रकार के स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों से बचना चाहिए। तंत्रशास्त्र में कहा गया है, 'न सोना न चाँदी, न वस्त्र न भोजन, कुछ भी स्वीकार नहीं करना है।' यह बात महत्त्वपूर्ण है कि प्राणिक उपचार के बदले किसी भी वस्तु की अपेक्षा नहीं की जाये।

सुझाव एवं सावधानियाँ

सुव्यवस्थित पद्धति– साधक को एक से दूसरे अभ्यास की ओर निर्देशानुसार क्रम से आगे बढ़ना चाहिए, प्रत्येक अभ्यास में सुव्यवस्थित ढंग से, नियमित गति से दक्षता प्राप्त करनी चाहिए। इस प्रक्रिया में शीघ्रता करने से शारीरिक या मानसिक, या दोनों प्रकार का भयंकर असंतुलन हो सकता है। यह सुझाव

दिया जाता है कि अगले अभ्यास की ओर बढ़ने से पहले प्रत्येक अभ्यास में दक्षता प्राप्त कर ली जाए। इसमें एक महीना, एक साल या उससे भी अधिक समय लग सकता है। (प्राण विद्या की प्रत्येक अवस्था के लिए अभ्यासों की संक्षिप्त सूची अभ्यास तालिका में देखें।)

अभ्यास का समय– प्राण विद्या के अभ्यास का उपयुक्ततम समय प्रात:काल है। सुबह चार से छ: बजे तक या सूर्योदय से पहले का समय इसके लिए श्रेयस्कर है। इस समय शरीर और मन निद्रा के बाद शान्त और तरोताज़ा रहते हैं, और प्राण संतुलित एवं जागरण के लिए तैयार रहते हैं। इसका अभ्यास रात्रि में नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि उस समय प्राण बिखरे हुए और अस्थिर होते हैं।

स्थान– प्राण विद्या का अभ्यास शान्त स्थान में किया जाना चाहिए जहाँ किसी प्रकार की बाधा नहीं हो। ऐसा एकांत स्थान श्रेयस्कर होता है, जो लोगों से दूर, कोलाहलमुक्त और बाधारहित हो। इसे खुली हवा में या ऐसे कमरे में भी किया जा सकता है जो साफ-सुथरा, हवादार हो और वहाँ सुखद अनुभव होता हो। इसका अभ्यास कभी दुर्गंधयुक्त, धुएँ या धूल वाले स्थान पर नहीं करना चाहिए। धूप या तेज हवा वाले स्थान पर इसे नहीं किया जाना चाहिए। प्रात: काल सूरज की किरणें लाभप्रद होती हैं; लेकिन जब वे किरणें तपने लगती हैं तब हानिकारक हो जाती हैं और शरीर बहुत ज्यादा तपने लगेगा। तेज हवा में ठण्ढ लग सकती है और उससे शरीर का तापमान असंतुलित हो सकता है।

आसन– प्राण विद्या का अभ्यास ध्यान के सुखद आसन में या लेट कर शवासन में किया जा सकता है। दायीं या बायीं करवट होकर भी लेटा जा सकता है। यदि कोई कुर्सी पर बैठ कर अभ्यास करना चाहता है तो उसे पैरों के नीचे एक कुशन या छोटा स्टूल रख लेना चाहिए, क्योंकि भूमि से सीधे संपर्क के कारण पैरों से प्राण शक्ति का स्राव होगा। उच्च स्तर के अभ्यासों के दौरान पैरों को सामने की ओर फैला कर रखना चाहिए ताकि ऊर्जा के प्रवाह में किसी प्रकार की बाधा का अनुभव नहीं हो। यदि शवासन में लेटे हों तो एक पतला कुशन या किसी कपड़े को तह करके सिर के नीचे रखना चाहिए ताकि गर्दन और सिर का नीचे का भाग आरामदायक स्थिति में हो। यद्यपि यह कुशन इतना ऊँचा भी नहीं होना चाहिए कि गर्दन मुड़ जाये और ऊर्जा का प्रवाह बाधित हो जाये। प्राण विद्या के अनेक अभ्यासों में आज्ञा चक्र सम्मिलित रहता

है, इसलिए सिर को आराम की स्थिति में रहना चाहिए। यद्यपि अभ्यास के दौरान स्थिर रहने का निर्देश दिया जाता है, लेकिन यदि किसी प्रकार के दर्द के कारण अपनी स्थिति को बदलना आवश्यक हो तो, बिना अशांत हुए नयी स्थिति में स्वयं को स्थिर कर लें और तब अभ्यास को आगे बढ़ायें।

सजगता– पूरे अभ्यास के दौरान सजगता बनी रहनी चाहिए, सोना नहीं चाहिए। जिनके लिए शवासन में जगे रहना कठिन हो, उन्हें पैरों को मोड़ कर या सामने फैला कर बैठना चाहिए। यदि कोई दुर्बल हो या तंद्रा की स्थिति हो तो उसे लघु अभ्यास करना चहिए, जैसे 49 चक्रों के स्थान पर 10 या 27 चक्र। पूर्ण सजगता के साथ किये गये 10 चक्र अत्यंत लाभप्रद होते हैं और अभ्यास करते रहने के लिए प्रेरित करते हैं।

वस्त्र– अभ्यास के दौरान ऐसे वस्त्र पहनने चाहिए जो ढीले और आरामदेह हों, ताकि किसी प्रकार के दबाव का अनुभव नहीं हो। पहनने वाले वस्त्र, कंबल, तकिया, दरी इत्यादि प्राकृतिक रेशों से बने होने चाहिए, जैसे सूती या ऊनी; कृत्रिम रेशे और रबर प्राण के संवाहक नहीं होते हैं, इसलिए यह सुझाव दिया जाता है कि रबर या प्लास्टिक से बनी हुई दरियों (मैट) का प्रयोग न किया जाये।

धातु– अभ्यास आरंभ करने से पूर्व ऐसी सभी वस्तुओं को शरीर पर से उतार देना चाहिए जिनमें धातु का प्रयोग किया गया हो, जैसे, अँगूठी, घड़ी, ताबीज, चश्मे आदि, क्योंकि त्वचा से धातु का संपर्क नहीं होना चाहिए। प्राण विद्या में प्राणिक ऊर्जा को सघन किया जाता है और फिर लेज़र किरणों के समान दिशान्तरित किया जाता है। साधक यदि धातु के संपर्क में रहता है तो ऐसे समय में उसे बिजली का झटका लग सकता है।

अभ्यास के पश्चात्– प्राण विद्या के अभ्यास के तुरंत बाद न तो आँखें खोलनी चाहिए और न ही शरीर को हिलाना चाहिए। पहले बाहरी वातावरण के प्रति सजग हो जाना आवश्यक है। इसमें कुछ समय लग सकता है। अभ्यास के क्रम में चेतना अतीन्द्रिय आयाम में प्रवेश कर जाती है और कभी-कभी तुरंत शारीरिक आयाम में वापस नहीं लौट पाती है। ऐसी स्थिति में यदि आँखें तुरंत खोल दी जायें तो कुछ देर के लिए आत्मविस्मृति का अनुभव हो सकता है, विशेष रूप से उच्च स्तर के अभ्यासों के बाद। इसके कारण विस्मृति हो सकती है, समय की सजगता का अभाव हो सकता है या स्थिति भ्रान्ति हो सकती है। यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाये तो इसका समाधान सरल है। आँखें बंद कर

लें और पुन: आज्ञा चक्र तक जायें। उज्जायी प्राणायाम करें और धीरे-धीरे सावधानी और पूर्ण एकाग्रता के साथ चेतना को नीचे मूलाधार पर ले जायें। इस प्रक्रिया को कई बार दुहरायें। उसके बाद आँखें खोल कर यह देखें कि आप पूरी तरह सामान्य जाग्रत चेतना में लौट आये हैं।

आज्ञा चक्र से प्राण को लौटाना– अभ्यास के अंत में यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि प्राण आज्ञा चक्र से मूलाधार चक्र में लौट आया है।

व्यक्तिगत प्राण क्षति– दूसरों का प्राणिक उपचार करने के क्रम में यदि प्राण को सुरक्षित रखना और उसे पुन: प्राप्त करना नहीं आता है तो उसकी क्षति होने का भय रहता है। प्राण को प्रेषित करने से पूर्व प्राणमय कोश के स्तर पर स्वयं को एक प्रतीक के अंदर सुरक्षित रखने की तकनीक सहायक होती है। तथापि व्यक्ति सूक्ष्म स्तरों पर भी पारस्परिक क्रिया करता है। परिणामस्वरूप व्यक्ति का उच्च स्रोत से भी संपर्क होना चाहिए। यदि विभिन्न प्राणिक उपचारकों के अनुभवों का अध्ययन किया जाये तो ज्ञात होगा कि उन सभी का एक दिव्य शक्ति के साथ कुछ सम्बन्ध था। सम्पूर्ण उपचार प्रक्रिया के दौरान इस बात की सजगता बनी रहनी चाहिए कि 'मैं कर्त्ता नहीं हूँ।' उपचारक को यह अनुभव करने का प्रयास करना चाहिए कि वह ब्रह्माण्डीय उपचारक ऊर्जा के प्रवाह का एक माध्यम है।

रोग का हस्तांतरण– अनेक उपचारकों में रोगी का रोग प्रवेश कर जाता है। अनेक दयावान और कृपालु उपचारक इस प्रकार रोगों से पीड़ित हुए हैं। यदि प्राणिक हस्तांतरण होता है तो उपचारक को यह ज्ञात होना चाहिए कि उसे कैसे दूर किया जाये। यदि किसी को कोई क्रिया करते समय कर्त्तापन का बोध होता है तो उस क्रिया का कर्म उसे प्राप्त होता है। इसलिए उपचारक को यह सीखना चाहिए कि प्राण के शाश्वत स्रोत से संपर्क को किस प्रकार बनाये रखा जाये और अपने सारे प्रयासों को उस स्रोत के प्रति किस प्रकार समर्पित कर दिया जाये।

विवेक की आवश्यकता– रोग, पीड़ा, वृद्धावस्था और मृत्यु, जीवन तथा विकासक्रम के अंग हैं। स्वयं अपने लिए या दूसरों के लिए प्राण विद्या हमेशा उपयुक्त नहीं भी हो सकती है, इसलिए विवेक को विकसित कर उसका उपयोग करना चाहिए।

8

आवश्यक तैयारी

प्राण विद्या एक शक्तिशाली अतीन्द्रिय विधि है। इसलिए नये अभ्यासियों के लिए यह आवश्यक है कि वे किसी कुशल मार्गदर्शन में धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक इसकी तैयारी करें।

प्राण विद्या का तत्काल उद्देश्य प्राण को जाग्रत करना और सजगता के साथ उसे दिशान्तरित करना है। सूक्ष्म सजगता का विकास कर लेने पर आप प्राण का बोध कर पाने में और प्राण की प्रकृति को समझ पाने में सक्षम हो जायेंगे, जिसके फलस्वरूप सजगता के एक नये आयाम में प्रवेश कर पायेंगे। प्राण विद्या का सम्बन्ध चेतना के विस्तार और प्राण के जागरण, दोनों से है, जो अन्ततः ध्यान और पूर्ण एकात्मता में परिणत हो जाता है। इस संदर्भ में प्राण विद्या के उपचार पक्ष का महत्त्व दूसरे दर्जे का है। इसका परम उद्देश्य प्राणमय कोश के परे जाना है, क्योंकि तभी चक्रों एवं कुण्डलिनी की सुप्त ऊर्जा जाग्रत होगी।

प्राण विद्या योग के अनेक वर्षों के अभ्यास की पराकाष्ठा है। इसकी विधि सरल प्रतीत होती है, और है भी, लेकिन उन लोगों के लिए, जिन्होंने प्राण शक्ति को जाग्रत और अपनी सजगता को विकसित कर लिया है। यद्यपि अधिकतर लोगों के लिए इसका अभ्यास दुर्ग्राह्य है। दृढ़ आधार के अभाव में अनेक वर्षों तक अभ्यास करने के बाद भी इसका वास्तविक अनुभव नहीं हो सकता है।

इसके लिए तैयारी आवश्यक है। प्राण विद्या के अभ्यास आरंभ करने से पूर्व योग की कुछ विशेष विधियों में दक्षता प्राप्त कर लेना आवश्यक है। प्राण विद्या के लिए प्राण के प्रति ग्रहणशीलता और संवेदनशीलता, प्राणायाम में निपुणता, प्राण का मानसदर्शन करने की क्षमता के साथ-साथ भौतिक शरीर की पूरी जानकारी की आवश्यकता होती है। शरीर, मन और प्राणों को तैयार

करने के लिए योग के अनेक प्रकार के अभ्यासों को करने का सुझाव दिया जाता है। प्राण विद्या के अभ्यास में सफलता तैयारी के अभ्यासों में दक्षता पर निर्भर रहती है।

हठ योग

प्राण विद्या के अभ्यासों की तैयारी के लिए हठ योग के अभ्यास प्रथम स्थान पर आते हैं, ताकि सबसे पहले शरीर को स्थिर बनाया जा सके और फिर प्राणमय कोश को समन्वित किया जा सके। स्थिर शरीर और संतुलित प्राण होने पर मन स्वत: शांत और स्थिर हो जाता है और ध्यान की उच्च अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम हो जाता है।

आसन सभी प्राणिक अवरोधों को दूर कर देते हैं और चक्रों को उत्प्रेरित करते हैं, जिससे शरीर के विभिन्न क्षेत्रों में प्राण पुन: संतुलित हो जाते हैं और उनके स्तर में वृद्धि होती है।

प्राणायाम प्राण विद्या के लिए आवश्यक है। प्राण के जागरण, उसके वितरण एवं उसे पुन: लौटाने की प्रक्रिया को सुगम बनाने के लिए अभ्यास के दौरान उज्जायी प्राणायाम का प्रयोग किया जाता है। अन्य प्राणायामों का भी प्रयोग नाड़ियों के क्रमबद्ध शुद्धिकरण एवं पुनर्संतुलन के लिए तथा प्राण को जाग्रत करने के लिए किया जाता है।

बन्धों का प्रयोग प्राण के स्तर में वृद्धि करने और उसके प्रवाह की दिशा को बदलने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए, मूलबन्ध अपान के अधोमुखी प्रवाह की दिशा बदल कर उसे ऊर्ध्वभिमुख कर देता है, जब कि जालंधर और उड्डियान बन्ध प्राण के ऊर्ध्वमुखी प्रवाह की दिशा को बदल कर उसे अधोमुखी कर देते हैं। इस प्रकार प्रवाहों को विपरीत कर देने से प्राण और अपान समान पर आपस में मिलते हैं, जिससे उस क्षेत्र में प्राण का जागरण होता है।

मुद्राएँ प्राण को अनुप्रेषित करती हैं या किसी एक स्थान पर केन्द्रित कर देती हैं, जिससे ऊर्जा का बिखराव नहीं होता है। उदाहरण के लिए, खेचरी मुद्रा में जिह्वा को पीछे की ओर मोड़ कर रखने से विशुद्धि चक्र जाग्रत होता है। वज्रोली एवं अश्विनी मुद्राओं में क्रमश: मूत्र नलिका और गुदा की पेशियों को संकुचित करने से सेक्रमी केन्द्र में उद्दीपन होता है, जिससे स्वाधिष्ठान चक्र से सम्बद्ध ऊर्जा जाग्रत हो जाती है।

योग निद्रा

योग निद्रा का अभ्यास आवश्यक है, मुख्यत: इसलिए कि यह तनावमुक्त होना सिखाता है। व्यक्ति यह तो जानता है कि उसका शरीर तनाव की अवस्था में है और विभिन्न अंगों में कड़ापन है, लेकिन यह नहीं जानता किस प्रकार गहन विश्राम की अवस्था प्राप्त की जाए। व्यक्ति अपनी मांसपेशियों को संभवत: शिथिल कर सकता है, लेकिन फिर भी तनाव अंदर रह जाता है। योग निद्रा में यह सीखा जाता है कि किस प्रकार गहन स्तर पर विश्राम किया जाये– केवल भौतिक शरीर के स्तर पर नहीं, बल्कि प्राणिक शरीर, भावनाओं, मन और अतीन्द्रिय स्तर पर भी। जब शरीर, मन और भावनाएँ तनावग्रस्त रहती हैं तब ऊर्जा का प्रवाह बाधित हो जाता है। तनाव कितना है और किस प्रकार का है, उसके अनुसार यह बाधा इतनी अधिक भी हो सकती है कि व्यक्ति में कोई रोग चिरकालिक रूप धारण कर सकता है। ऐसी स्थिति में, जबकि साधक आवश्यक मात्रा में ऊर्जा प्राप्त करने में असमर्थ हो, प्राण विद्या का अभ्यास करना अत्यंत कठिन हो जाता है। योग निद्रा साधक को अपने शरीर के विभिन्न भागों के प्रति सजग बनना भी सिखाती है। प्राण विद्या में यह आवश्यक है, क्योंकि इसमें अतीन्द्रिय पथों के माध्यम से प्राण को शरीर के विशेष अंगों और अवयवों में दिशान्तरित किया जाता है।

प्राण निद्रा

प्राण निद्रा प्रत्याहार की एक ऐसी विधि है जिसका प्राणमय कोश के साथ सीधा सम्बन्ध है। अभ्यास में यह योग निद्रा के समान है। प्रत्याहार की स्थिति लाने के अतिरिक्त प्राण निद्रा प्राण के प्रति संवेदनशील भी बनाती है और प्राणों में संतुलन या सामंजस्य लाती है। ये दोनों पक्ष प्राण विद्या में सफलता के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। सामान्यत: प्रारंभ में प्राण का अनुभव अनियंत्रित ऊर्जा के रूप में होता है, जैसे, शरीर में झुनझुनी या ताप की अनुभूति। प्राण विद्या में ऊर्जा पर नियंत्रण और उसे दिशा प्रदान करने की क्षमता का विकास किया जाता है। इसके लिए प्राणिक शरीर के अंदर प्राण के प्रवाह को अनुभव कर पाने की योग्यता होना आवश्यक है। प्राण निद्रा इस प्राणिक सजगता को क्रमबद्ध ढंग से विकसित करती है। प्राण को शरीर के अंगों और प्रणालियों में, पंच प्राणों– प्राण, अपान, समान, उदान एवं व्यान में; नाड़ियों– इड़ा, पिंगला एवं सुषुम्ना में; और विभिन्न चक्रों में दिशान्तरित किया जा सकता है। प्राण निद्रा का अभ्यास तैयारी के अभ्यास के रूप में किया जाना चाहिए (अध्याय 10 देखें)।

ध्यान

काया स्थैर्यम् आवश्यक है, क्योंकि प्राण की गति का मानस दर्शन और उसका अनुभव करने के लिए साधक में कुछ देर शरीर को स्थिर रखने की क्षमता होनी चाहिए। शरीर में हलचल होने से एकाग्रता भंग होने और आंतरिक दृश्य के लुप्त हो जाने की संभावना रहती है।

जप का अभ्यास आवश्यक है, क्योंकि तंत्र शास्त्र के अनुसार मंत्रों में उपचारक शक्ति होती है। यदि मंत्र की शक्ति को प्राण के वितरण के साथ जोड़ दिया जाये, जैसा कि सोलहवें अध्याय में बताया गया है, तो प्राण विद्या की उपचारक शक्ति में अद्भुत वृद्धि हो जाती है। केवल गुरु द्वारा दिये गये मंत्र या 'ॐ', 'सोऽहम्', महामृत्युंजय मंत्र या गायत्री मंत्र जैसे सार्वजनिक मंत्रों का प्रयोग किया जाना चाहिए। प्राण को जाग्रत करने के लिए गायत्री मंत्र का प्रयोग करना चाहिए। व्यक्तिगत उपचार के लिए गुरुमंत्र का प्रयोग करना चाहिए। जप और अनुष्ठान के नियमित अभ्यास से मंत्र की शक्ति जाग्रत होती और उसमें पूर्णता आती है।

अजपा जप नाड़ियों एवं श्वास की सजगता के विकास के लिए आवश्यक है, जोकि प्राण विद्या के महत्त्वपूर्ण आधार हैं। अतीन्द्रिय पथ और अतीन्द्रिय श्वसन की सजगता में दक्षता प्राप्त होनी चाहिए ताकि प्राण के जागरण, वितरण और उनको लौटाने की प्रक्रिया में सहज रूप से इनका उपयोग किया जा सके।

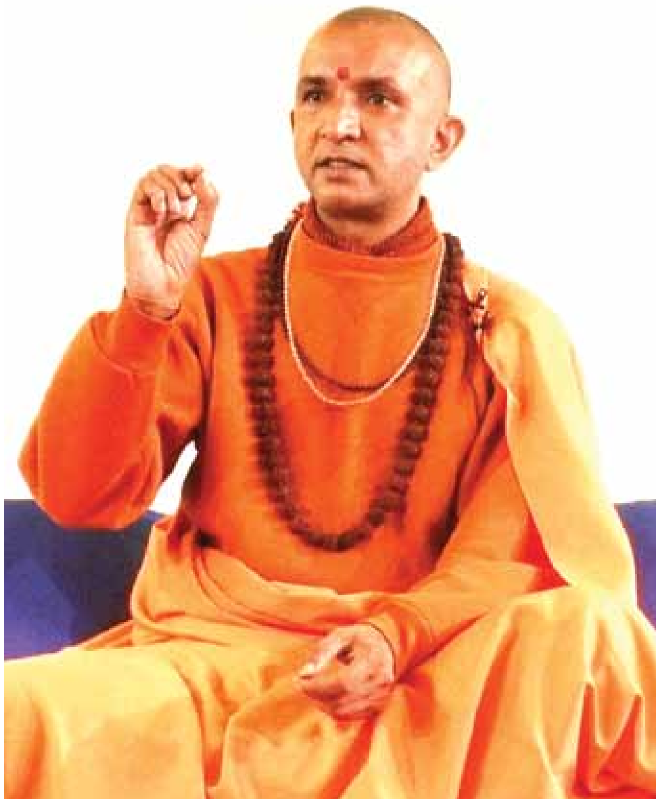
मानस दर्शन एवं एकाग्रता के अभ्यास आंतरिक जगत् का, जो अपनी सूक्ष्मता के कारण इंद्रियग्राह्य नहीं होता है, बोध और अनुभव करने की क्षमता का विकास करते हैं। प्रारंभ में प्राण विद्या मानस दर्शन में संकल्प शक्ति, एकाग्रता और कल्पनाशक्ति को शरीर के उस अंग विशेष अथवा अवयव की मानसिक छवि उत्पन्न पर केन्द्रित किया जाता है जिसमें ऊर्जा को प्रेषित किया जा रहा है।

चिदाकाश धारणा आवश्यक है, क्योंकि प्राण की गति का मानस दर्शन शरीर के भौतिक पदार्थ में नहीं, बल्कि अतीन्द्रिय क्षेत्र में होता है। साधक को चिदाकाश की सजगता का ही नहीं, बल्कि स्थूलाकाश की सजगता का भी विकास करना चाहिए, वह क्षेत्र जिसमें प्राण के संचालन को सरलतापूर्वक देखा जा सके।

चक्र शुद्धि एवं तत्त्व शुद्धि के अभ्यासों के द्वारा चक्रों एवं तत्त्वों के शुद्धिकरण तथा जागरण के पश्चात् प्राण विद्या की तैयारी पूरी हो जाती है।

क्रिया योग के अभ्यासों में भौतिक, प्राणिक, अतीन्द्रिय और मानसिक शक्तियों का उपयोग किया जाता है और उन्हें सही दिशा प्रदान की जाती है। ऐसा करने पर ये मानसिक शक्तियाँ समन्वित और परिष्कृत हो जाती हैं जिससे साधक का अपना अस्तित्व जाग्रत हो उठता है। क्रिया योग के द्वारा सूक्ष्म और प्रत्यक्ष बोध का विकास होता है। इस प्रकार क्रिया योग से प्राण विद्या की गहनता और उसके अनुभव में वृद्धि होती है।

जब तैयारी और शुद्धिकरण की प्रक्रिया पूरी हो जाती है तब प्राण का संचालन श्वास के समान सहज और स्वाभाविक हो जाता है। (इन अभ्यासों का पूर्ण विवरण योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर द्वारा प्रकाशित तत्त्व शुद्धि, कुण्डलिनी योग, धारणा दर्शन तथा अन्य पुस्तकों में देखा जा सकता है।)



9

आधारों का विकास

अभ्यास 1: आंतरिक शरीर की सजगता का विकास करने के लिए योग निद्रा
अभ्यास 2: सन्मुख पथ और सुषुम्ना की सजगता का विकास
अभ्यास 3: चक्रों की सजगता का विकास करना
अभ्यास 4: पंच प्राणों की सजगता को विकासित करना
अभ्यास 5: प्राणमय कोश की सजगता का विकास

आधारों का विकास

इस अध्याय में दिये गये तैयारी के अभ्यास भौतिक शरीर और प्राणिक शरीर की सजगता, समझ और अनुभव का विकास करते हैं। प्राण विद्या के परिप्रेक्ष्य में प्रत्येक अभ्यास का संक्षिप्त विवरण आगे प्रस्तुत किया जा रहा है।

पहला अभ्यास योग निद्रा का है, जो शरीर के विभिन्न भागों का, जिनमें विभिन्न अंग एवं मांसपेशियाँ सम्मिलित होती हैं, मानस दर्शन करने की क्षमता का विकास करता है। प्राण विद्या की उच्च अवस्थाओं में उपचारक ऊर्जा का संपूर्ण शरीर में वितरण किया जाता है, इसलिए पूरे शरीर का विस्तार से स्पष्ट मानस दर्शन करने की क्षमता होना आवश्यक है। प्रारंभिक अभ्यासियों के मार्गदर्शन के लिए 'परिशिष्ट ब' में शरीर के मुख्य अंगों की स्थिति का विवरण दिया गया है, फिर भी भौतिक शरीर और उसकी क्रियाओं की व्यापक जानकारी के लिए उसका विस्तृत अध्ययन करने का सुझाव दिया जाता है।

दूसरा अभ्यास मन को सम्मुख-पथ तथा मेरुदण्ड-पथ के भीतर प्राण और उसके प्रवाह पर केन्द्रित करता है। प्राण विद्या में प्राण को जाग्रत करने और उसे दिशा प्रदान करने के लिए विभिन्न अतीन्द्रिय पथों का प्रयोग किया जाता

है। प्राण का मानस दर्शन फुलझड़ियों से निकलने वाले चमकीले प्रकाश के समान श्वेत प्रकाश कणों के रूप में किया जाता है, किन्तु ये कण नाड़ियों के अंदर ही प्रवाहित होते हैं। प्रारंभ में प्राण का मानस दर्शन केवल कल्पना पर आधारित होता है। लेकिन उच्च स्तर पर प्राण का वास्तविक दर्शन और व्यक्तिगत अनुभव आवश्यक होता है।

अगला अभ्यास चक्रों की सजगता को गहन बनाता और उसे परिष्कृत करता है। प्राण विद्या के संपूर्ण अभ्यास के क्रम में चक्रों का मानस दर्शन प्रकाश के चमकीले बिन्दुओं के रूप में किया जाता है। उन्हें उत्प्रेरित और जाग्रत किया जाता है ताकि उन्हें स्पष्ट रूप से देखा जा सके। इस प्रक्रिया के दौरान सुप्त ऊर्जा मुक्त होती है और चक्रों का शुद्धिकरण होता है।

पंच प्राण का अभ्यास सजगता को प्राणिक ऊर्जा के पाँच मुख्य विभागों में होने वाले विलक्षण प्रवाहों की ओर ले जाता है– प्राण या स्थूल प्राण मध्य पट से ऊपर गले तक जाता है; अपान नाभि से नीचे मूलाधार तक जाता है; समान उदर में एक बगल से दूसरी बगल में जाता है; उदान का अनुभव शरीर के छोरों में प्रकाश के सर्पिल प्रवाह के रूप में होता है; और व्यान ऊर्जा का सर्वव्यापी प्रवाह है। ('परिशिष्ट अ' में पंच प्राण का चित्रण किया गया है।)

अंतिम अभ्यास में प्राणमय कोश या प्राणिक शरीर का समग्र रूप से विकास किया जाता है और उसे प्रबल बनाया जाता है।

अभ्यास 1: आंतरिक शरीर की सजगता का विकास करने के लिए योग निद्रा

अवस्था 1: तैयारी

धातु की किसी भी वस्तु, जैसे, अँगूठी, घड़ी या आभूषण को शरीर पर से उतार दें।

शवासन में लेट जायें।

पैरों के बीच कम-से-कम कूल्हों के बराबर दूरी होनी चाहिए और दोनों पैर बाहर की ओर झुके होने चाहिए।

हाथ शरीर के बगल में हों, किन्तु शरीर का स्पर्श न करें।

हथेलियाँ ऊपर की ओर खुली हों, अँगुलियाँ तनावमुक्त और स्वाभाविक ढंग से मुड़ी हुई हों।

कुछ क्षणों तक शरीर को देखें और यह सुनिश्चित करें कि सिर, गर्दन और मेरुदण्ड, अर्थात् पूरा शरीर एक सीध में है।
धीरे से अपनी आँखों और मुँह को बंद कर लें।
इस स्थिति में शरीर को व्यवस्थित करें और यदि कोई परिवर्तन लाना हो तो ले आयें ताकि शरीर पूरी तरह आराम की स्थिति में आ जाए।
यह जाँच कर लें कि शरीर आरामदायक स्थिति में है और उसमें पर्याप्त गरमी है।
पूरे शरीर को स्थिर हो जाने दें।
अपने शरीर का भार जमीन पर डाल दें, शरीर को पूरी तरह जमीन के सहारे छोड़ दें।
जमीन का स्पर्श करते अपने पूरे शरीर के प्रति सजग बन जायें।
अपने शरीर के पीछे के भाग का, एड़ी से सिर के पिछले भाग तक शरीर और जमीन के बीच स्पर्श की संवेदना का अनुभव करें।
स्पर्श की इस संवेदना के प्रति सजगता को बढ़ायें।
सजगता को शरीर के सामने के भाग की ओर ले आयें और त्वचा पर वस्त्रों के स्पर्श का, शरीर को यदि किसी वस्त्र से ढँका गया है, तो उसके स्पर्श का अनुभव करें।
चेहरे पर और शरीर के अन्य भागों पर, हाथों या पैरों पर हवा के स्पर्श के प्रति सजग हो जायें।
नासिका छिद्रों से अंदर आने वाली वायु के स्पर्श का अनुभव करें।
स्पर्श की अनुभूति से सजगता को हटा कर बाहर के वातावरण से आने वाली ध्वनियों पर ले जायें।
जितनी दूर की ध्वनियों को सुनना संभव हो, उतनी दूर तक सजगता को ले जायें।
अब सजगता को एक से दूसरी, दूसरी से तीसरी ध्वनि पर ले जायें। ज्यों ही एक ध्वनि सुनाई देती है, अगली ध्वनि पर जायें, फिर अगली ध्वनि पर।
सजगता को विभिन्न ध्वनियों पर ले जायें, उसे किसी एक ध्वनि पर ठहरने नहीं देना है और न ही ध्वनि के स्रोत को पहचानने का प्रयास करना है। सभी दिशाओं से आने वाली ध्वनियों को सुनना है।

अब सजगता को निकट ले आयें और कमरे के अंदर की ध्वनियों को सुनें। सजगता को और निकट ले आयें और शरीर के अन्दर से आने वाली श्वसन, हृदय के स्पंदन तथा पाचन की ध्वनियों को सुने।
इन ध्वनियों के प्रति सजगता का त्याग करें और शरीर की स्थिरता एवं उसकी शांत स्थिति के प्रति सजग हो जायें।

अवस्था 2: संकल्प

इस शांत अवस्था में मन में अपने संकल्प को लायें। अब ऊर्जा और भाव के साथ अपने मन में इसे तीन बार दुहरायें।

अवस्था 3: सजगता को घुमाना

अब अपनी सजगता को क्रमबद्ध ढंग से शरीर में चारों ओर घुमाने के लिए तैयार हो जायें।
ज्यों ही शरीर के एक भाग का नाम लिया जाता है, केवल अपनी सजगता को उस भाग पर ले जायें।
उस भाग को अंदर से अनुभव करें और निर्देश की गति के साथ सजगता को शरीर के एक भाग से दूसरे भाग पर ले जायें।
एक से दूसरे भाग पर जाती हुई सजगता के साथ ऊर्जा भी शरीर के सभी भागों को स्फूर्ति प्रदान करती जायेगी। इस प्रकार सजगता को पूरे शरीर में चारों ओर घुमाया जायेगा।
दायें हाथ के अँगूठे से आरंभ करें, दायें हाथ के अँगूठे की सजगता।
फिर सजगता को पहली अँगुली, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली और चौथी अँगुली पर ले जायें।
हथेली, और हाथ के पीछे का भाग।
सजगता को कलाई, भुजा के निचले भाग, केहुनी, भुजा के ऊपरी भाग और दायें कंधे पर ले जायें।
काँख, वक्ष के दायें भाग, कमर, नितंब पर ले जायें।
सजगता को दायीं जाँघ, घुटने, पिण्डली, टखने, एड़ी, तलवे और पैर के ऊपरी सिरे पर ले जायें।
सजगता को दायें पैर के अँगूठे, पहली अँगुली, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली और चौथी अँगुली पर ले जायें।

शरीर के संपूर्ण दायें भाग में ऊर्जा का अनुभव करें, शरीर का संपूर्ण दायाँ भाग।
अब सजगता को शरीर के बायीं ओर ले जायें।
बायें हाथ के अँगूठे से आरंभ करें।
देखें कि मन सजग और सतर्क है।
बायें हाथ के अँगूठे की सजगता।
सजगता को पहली, दूसरी, तीसरी और चौथी अँगुलियों पर ले जायें।
हथेली, हाथ के पीछे का भाग, कलाई, भुजा का निचला भाग, केहुनी, भुजा का ऊपरी भाग, बायाँ कंधा।
काँख, बायीं जाँघ, घुटना, पिण्डली, टखना, एड़ी, तलवा और पैर के ऊपरी सिरे पर सजगता को ले जायें।
सजगता को बायें पैर के अँगूठे, पहली अँगुली, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली और चौथी अँगुली पर ले जायें।
शरीर के संपूर्ण बायें भाग का अनुभव करें, संपूर्ण बायाँ भाग।
शरीर के दोनों भागों का एक साथ अनुभव करें, शरीर के दोनों भाग।
अब सजगता को शरीर के पिछले भाग में ले जायें।
दायीं एड़ी, बायीं एड़ी, दायें पैर के पीछे के भाग, बायें पैर के पीछे के भाग के प्रति सजग हो जायें।
दायाँ नितंब, बायाँ नितंब, पीठ का निचला भाग, पीठ के बीच का भाग, पीठ का ऊपरी भाग, दायाँ पुट्ठा, बायाँ पुट्ठा, दोनों पुट्ठों के बीच के भाग के प्रति सजग हो जायें।
गर्दन के पीछे का भाग, सिर के पीछे के भाग के प्रति सजग हो जायें।
नीचे से ऊपर तक पूरे मेरुदण्ड की सजगता, पूरे मेरुदण्ड की सजगता।
सजगता को सिर के ऊपरी हिस्से में ले जायें।
अब शरीर के सामने के हिस्से पर अपनी सजगता को ले जायें।
ललाट, दायीं कनपटी, बायीं कनपटी, दायीं भौंह, बायीं भौंह, भ्रूमध्य।
दायीं आँख, बायीं आँख, दायाँ कान, बायाँ कान, दायाँ गाल, बायाँ गाल, दायीं नासिका, बायीं नासिका, नाक का ऊपरी हिस्सा, नासिकाग्र, पूरी नाक।
ऊपरी ओठ, नीचे का ओठ, दोनों ओठों का स्पर्श बिंदु।
ठुड्ढी, जबड़े की हड्डी, गले के सामने का भाग, दायीं हसली, बायीं हसली के प्रति सजग हो जायें।

छाती का दायाँ भाग, छाती का बायाँ भाग, छाती के बीच का भाग।
उदर का ऊपरी भाग, नाभि, उदर का निचला भाग, पूरा श्रोणि-प्रदेश।
अब पूरे दायें पैर के प्रति सजग हो जायें, पूरे बायें पैर के प्रति सजग हो जायें। दोनों पैर एक साथ।
पूरी दायीं भुजा और हाथ, पूरी बायीं भुजा और हाथ। दोनों भुजाएँ एक साथ।
पूरा धड़– सामने और पीछे के भाग की सजगता।
गर्दन और सिर।
दोनों पैरों, दोनों भुजाओं, पूरे धड़, गर्दन और सिर की सजगता।
पूरे शरीर की सजगता; पूरा शरीर, पूरा शरीर।
पूरे शरीर की सजगता।

अवस्था 4: श्वास की सजगता

स्थिर शरीर के अंदर गतिमान श्वास के प्रति सजग हो जायें।
सहज और स्वाभाविक श्वास।
पूरक और रेचक की लयबद्ध गति के प्रति सजग हो जायें।
सजगता को नासिकाओं में श्वास पर केन्द्रित करें और वहाँ पर श्वास के तापमान का अनुभव करें।
पूरक के समय अन्दर जाती हुई श्वास के साथ नासिकाओं में ठण्ढक और रेचक के समय बाहर निकलती हुई श्वास के साथ नासिकाओं में हलकी गर्मी का अनुभव करें।
सहज, स्वाभाविक और लय के साथ चलती श्वास।
अगले पूरक में कल्पना करें कि श्वास बायीं नासिका से प्रवेश कर रही है और भ्रूमध्य तक जा रही है।
रेचक में श्वास भ्रूमध्य से नीचे उतर कर दायीं नासिका से बाहर जा रही है।
अगले पूरक में श्वास दायीं नासिका से प्रवेश कर रही है और बायीं नासिका से बाहर निकल रही है।
इस प्रकार एकान्तर नासिका श्वसन करते जायें।
अंग्रेजी के उलटे 'V' के आकार में श्वास के प्रवाह प्रति सजग हो जायें।
श्वास स्वाभाविक रूप से चलती रहती है, केवल श्वास के साथ अब सजगता एकान्तर नासिकाओं से अन्दर-बाहर आ-जा रही है।
मानसिक रूप से 9 से 0 तक श्वास की उलटी गिनती करना आरंभ करें।

मानसिक रूप से दुहरायें, मैं श्वास ले रहा हूँ 9, मैं श्वास छोड़ रहा हूँ 9, मैं श्वास ले रहा हूँ 8, मैं श्वास छोड़ रहा हूँ 8,... इस प्रकार 0 तक उलटी गिनती करते जायें।
यदि बीच में गिनती भूल जाते हैं, तो पुन: 9 से आरंभ करें।
यदि 0 पर पहुँच गये हैं, तो पुन: 9 से आरंभ करें।
श्वास की सजगता बनाये रखने के लिए गिनती जारी रखें।
अब मानसिक रूप से गिनती करना बंद कर दें और नासिकाओं में श्वास की सजगता को भी समाप्त कर दें।

अवस्था 5: आंतरिक शरीर का मानस-दर्शन

शरीर का आंतरिक रूप से मानस-दर्शन करने के लिए तैयार हो जायें।
साक्षी भाव से देखना है, मानो एक परदे पर किसी चलचित्र को देख रहे हों, चित्रों से अप्रभावित रहना है।
सबसे पहले सजगता को सिर में ले जायें।
सिर के अंदर जायें और धूसर रंग के मस्तिष्क को देखें, जो तरल पदार्थ में तैर रहा है और कपाल के अंदर के पूरे स्थान को घेरे हुए है।
मस्तिष्क के अनेक खण्ड है; मस्तिष्क का अग्रभाग ललाट के पीछे स्थित रहता है, प्रमस्तिष्क या दिमाग सिर के पूरे शीर्ष भाग में, जबकि पीछे की ओर अनुमस्तिष्क होता है, जहाँ आप सिर के पिछले भाग और जमीन के बीच दबाव का अनुभव कर सकते हैं।
इसी स्थान पर मेरुदण्ड मस्तिष्क से जुड़ा हुआ होता है।
इस क्षेत्र में मस्तिष्क का पतला सिरा होता है जो एक पुष्प की डंडी के समान होता है। इस डंडी के ऊपर गुलाबी रंग की ठोस पीनियल ग्रंथि होती है।
अब मस्तिष्क की सतह के नीचे थोड़ा आगे की ओर, सिर के एकदम केन्द्र में आयें।
यहाँ पर पिट्युटरी ग्रंथि स्थित है।
एक सुनहले प्रकाश-बिन्दु के रूप में इसका मानस-दर्शन करें।
अब थोड़ा और आगे बढ़ कर अपनी सजगता को आँखों पर ले जायें।
सफेद नेत्र गोलकों को, पारदर्शक कॉर्निया को और आँखों की पुतलियों के काले छिद्रों को देखें।

पीछे जायें और सफेद नेत्र-तंत्रिकाओं को देखें जो आँखों और मस्तिष्क को जोड़ती हैं।
अब कानों के अंदर जायें; पहले कान के बाहरी भाग की गुहा, कानों के पर्दे, उसके बाद बीच का भाग और कान के सबसे अंदर का भाग।
श्रवण-तंत्रिकाओं को देखें जो कान के अंतर्तम भाग को मस्तिष्क से जोड़ती हैं।
मुँह की ओर आ जायें। मुँह को, दाँतों, जीभ और तालू को देखें।
अपनी सजगता को नाक पर ले जायें और श्वास की सहायता से नासिकाओं में प्रवेश करें।
नाक के उन छिद्रों का अनुभव करें जो गले में पीछे की ओर खुलते हैं।
अपनी सजगता को कण्ठ से आगे लाल रंग की कण्ठ गुहा में ले जायें, जहाँ वाक्‌तन्तु हैं, गुलाबी रंग की नम नली या गुफा जैसी श्वास नलिका में जायें जो फेफड़ों की ओर जाती है।
श्वास नलिका आगे दो नलियों में बँट जाती है, एक नली दायें फेफड़े में और दूसरी बायें फेफड़े में जाती है।
गुलाबी फेफड़ों को चारों ओर से देखें।
इनमें वायु नलिकाएँ होती हैं जो श्वास लेने पर वायु से भर जाती हैं जिससे फेफड़े फैल जाते हैं।
जब आप श्वास छोड़ते हैं तब ये थैलियाँ रिक्त हो जाती हैं जिससे फेफड़े सिकुड़ जाते हैं।
दोनों फेफड़ों के बीच, थोड़ा बायीं ओर मांसपेशियों से बने भूरे रंग के हृदय को देखें जो गत्यात्मक पेशीय पंप है।
हृदय के अंदर उसके वाल्वों को देखें, जो एक लय के साथ खुलते और बंद होते हैं। इनके द्वारा रक्त प्रवाह पूरे शरीर में जाता है और पुन: हृदय में वापस आता है। हृदय के संकुचन से रक्त बाहर की ओर जाता है, हृदय के शिथिल होने पर रक्त वापस अंदर आता है।
कुछ क्षणों के लिए हृदय की धड़कन पर ध्यान केन्द्रित करें।
हृदय और फेफड़ों के नीचे एक बड़ी समतल मांसपेशी है जिसे मध्यपट कहते हैं, यह वक्ष को उदर से अलग करती है।
जब आप श्वास लेते हैं तब ध्यान दें कि किस प्रकार पूरक करते समय मध्यपट सिकुड़ कर नीचे की ओर जाता है और रेचक करते समय शिथिल होकर ऊपर चला आता है।

श्वसन के साथ अपने अस्थि पंजर के भी फैलने और सिकुड़ने का अनुभव करें। अपनी वक्ष गुहा के प्रति सजगता का विकास करें।
अपनी सजगता को वापस कण्ठ पर ले जायें और अब नीचे पाचन नली की ओर जायें जो श्वास नलिका के पीछे मुलायम, रबर की नली जैसी है। यह भोजन और द्रव्य पदार्थों को आमाशय में ले जाती है।
श्वास को आमाशय तक ले जाते हुए इस नली को देखने का प्रयास करें। अब आमाशय का मानस-दर्शन करें; यह अंग्रेजी के 'V' के आकार की ढीली, मुड़ी हुई पेशीय थैली है, जो आपकी मुट्ठी के आकार की है और स्वयं को फैला कर आपके द्वारा ग्रहण किये गये भोजन को अपने अंदर समा लेती है। जब भोजन अच्छी तरह पिस कर तरल हो जाता है तब वह ग्रहणी में चला जाता है। ग्रहणी वह नली है जो आमाशय और छोटी आँत को जोड़ती है। अंग्रेजी के 'C' आकार की ग्रहणी में अनेक प्रकार के एन्ज़ाइम भोजन के साथ मिल जाते हैं। इन एन्ज़ाइमों का स्राव बाण की नोक के आकार के छोटे, चपटे अंग अग्न्याशय से होता है जो आमाशय के पीछे स्थित है।
भोजन के साथ पित्त भी मिलता है, जिसका स्राव यकृत से होता है। यकृत एक बड़ा गोलाकार और भूरे रंग का अंग है। यह शरीर का सबसे बड़ा अंग है।
यह पसलियों और मध्यपट के नीचे दायीं ओर स्थित है।
यकृत के नीचे की सतह पर नाशपाती के आकार का पित्ताशय है जिसमें पित्त जमा रहता है, जिसे वहाँ से पाचन नली में भेजा जाता है।
यकृत की बायीं ओर अण्डे के आकार का मुलायम अंग प्लीहा है, जिसमें ऐसी कोशिकाएँ होती हैं जो रोगों के संक्रमण को दूर करती हैं।
पचा हुआ भोजन छोटी आँत में प्रवेश करता है जो तीस फीट लम्बी नली है। एक निश्चित गति से इसके फैलने और सिकुड़ने से भोजन आगे की ओर बढ़ता जाता है।
उदर गुहा में कुण्डलित लम्बी, बैगनी-भूरे रंग की छोटी आँत को देखें।
छोटी आँत को चारों ओर से लपेटे हुए बड़ी आँत है।
उदर के दाएँ ऊपर की ओर जाने वाला आरोही बृहदांत्र है और बाएँ नीचे की ओर जाने वाला अवरोही बृहदांत्र है।
दोनों को जोड़ता हुआ तिरछा बृहदांत्र छोटी आँत के ऊपर स्थित है।

अवरोही बृहदांत्र से भोजन का अनुपयोगी अवशेष अपशिष्ट पदार्थ के रूप में मलाशय में चला जाता है जो श्रोणि-प्रदेश के पश्च भाग में स्थित एक छोटी, चौड़ी नली है।

यहाँ से यह मलद्वार के द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है।

उदर गुहा में दो वृक्क भी हैं। उनका रंग बैगनी है, वे मध्यपट के ठीक नीचे कमर के पीछे स्थित हैं। वृक्क, जिनका आकार आपकी हथेली जितना है, रक्त को छानकर पुन: प्रयोग में आ सकने योग्य उपयोगी तत्त्वों को अलग करते हैं और अपशिष्ट पदार्थों को मूत्र के रूप में बाहर निकाल देते हैं।

वृक्कों के ऊपर तिकोनी टोपी के समान पीले रंग की एड्रीनल ग्रंथियाँ हैं।

मूत्र वृक्कों से जुड़ी हुई मूत्र नलिकाओं के द्वारा श्रोणि अस्थि के ठीक पीछे स्थित एक थैली में जाता है।

यह थैली मूत्राशय है और इसका आकार उलटे पिरामिड जैसा है।

अपनी सजगता को मूत्राशय के पीछे जननांगों पर ले जायें।

स्त्रियों को मूत्राशय के पीछे स्थित गर्भाशय का मानस-दर्शन करना चाहिए। गर्भाशय दृढ़ता से स्थित, मोटी दीवारों वाली एक उलटी थैली है, जिसके बगल में दो नलियाँ जुड़ी हुई हैं।

प्रत्येक नली के सिरे पर गुलाबी रंग का अण्डाशय है।

पुरुष मूलाधार क्षेत्र में मूत्राशय के नीचे ठोस गुलाबी ग्रंथी को देखें–यह प्रॉस्टेट ग्रंथी है।

अब सम्पूर्ण उदर क्षेत्र और उसके अंगों का मानस-दर्शन करें।

हल्के उदर श्वसन का अभ्यास करें और देखने का प्रयास करें कि हर श्वास के साथ प्रत्येक अंग में धीमा उतार-चढ़ाव हो रहा है।

अनुभव करें कि सभी अंग ऊर्जा से परिपूर्ण हैं, पूर्णत: क्रियाशील हैं और उन सब में परस्पर सामंजस्य है।

उदर के ऊपरी भाग का मानस-दर्शन करें–आमाशय, यकृत, पित्ताशय, अग्न्याशय और प्लीहा।

अब उदर के निचले भाग का मानस-दर्शन करें–छोटी और बड़ी आँतें, वृक्क, एड्रीनल ग्रंथियाँ, मूत्राशय तथा उत्सर्जन और प्रजनन अंग।

इसके बाद अपनी सजगता को पीठ और मेरुदण्ड की ओर ले जायें, जो श्रोणि-प्रदेश से आरंभ होकर मस्तिष्क तक जाता है।

यह तैंतीस अस्थिमय कशेरुकाओं से बना है जो एक-दूसरे के ऊपर स्थित होती हैं।
मेरुदण्ड की सबसे निचली हड्डी कॉक्सिक्स या पुच्छास्थि कहलाती है। इसके ऊपर त्रिकास्थि है।
इससे ऊपर उदर के पीछे पाँच लंबर कशेरुकाएँ हैं।
इनसे ऊपर वक्ष के पीछे बारह वक्षीय कशेरुकाएँ हैं, जो बारह पसलियों से जुड़ी हुई हैं।
गर्दन के पीछे सात ग्रीवा कशेरुकाएँ हैं, उनमें से ऊपर वाली दो कशेरुकाएँ सिर को आधार प्रदान करती हैं। इन्हीं के सहारे सिर आगे-पीछे और अगल-बगल घूमता है।
कशेरुकाओं के बीच पीली-भूरी गद्देदार डिस्कों को देखें।
उन मांसपेशियों का मानस-दर्शन करें जो पीठ और मेरुदण्ड को सहारा देती हैं।
मेरुदण्ड के बीच एक नलिका है। उस नलिका में कोमल, उजले-भूरे रंग का मेरु-रज्जु स्थित है। यह मेरु-रज्जु मस्तिष्क का विस्तार है।
मेरु-रज्जु से निकलने वाली उजले रंग की सभी तंत्रिकाओं को देखें।
अपनी सजगता को बाह्य अंगों, हाथों और पैरों पर ले जायें।
उन्हें अंदर से देखने का प्रयास करें।
अपनी सजगता को धीरे-धीरे दायें हाथ की ओर ले जायें और कंधे से अंगुलियों के छोरों तक पूरे दाहिने हाथ को देखें।
हड्डियों, जोड़ों, पेशियों, रक्त नलिकाओं और तंत्रिकाओं को देखें।
हाथ और अंगुलियों को अंदर से देखें–छोटी अस्थियाँ, अत्यंत सूक्ष्म केशिकाएँ, सूक्ष्म तंत्रिका रेशे।
अब बायें हाथ की ओर जायें और इसे अंदर से देखें।
अस्थियों, जोड़ों, पेशियों, रक्त नलिकाओं और तंत्रिकाओं को देखते हुए नीचे की ओर जायें।
दायें पैर के प्रति सजग हो जायें।
प्रत्येक भाग को ध्यान से देखते हुए अपनी सजगता को नीचे की ओर–जाँघ, घुटने, पिण्डली, टखने और पैर की अंगुलियों तक ले जायें।
अस्थियों, जोड़ों, अस्थि बंधों, पेशियों, रक्त नलिकाओं और तंत्रिकाओं को देखें।

बायें पैर की ओर जायें और उसी प्रकार ऊपर से नीचे तक मानस-दर्शन करें– धीरे-धीरे जाँघ, घुटने, पिण्डली, टखने और अँगुलियों को देखें। अंत में अन्दर से अपने पूरे शरीर के प्रति सजग हो जायें– सिर, वक्ष, उदर, पीठ, दोनों हाथ, दोनों पैर, पूरा शरीर, अन्दर से पूरा शरीर।
पूरे शरीर की अन्दर से एक झलक देखें।

अवस्था 6: संकल्प

अपने आंतरिक शरीर की छवि को छोड़ कर अपनी सजगता को अंतराकाश की ओर ले जायें।
उसके विस्तार और निश्चलता के प्रति सजग हो जायें।
अपने संकल्प को अपने मन में लायें जो आपने अभ्यास के प्रारंभ में लिया था।
श्रद्धा और विश्वास के साथ मानसिक रूप से इसे तीन बार दोहरायें।
अनुभव करें कि आपका संकल्प आपके सम्पूर्ण अंतराकाश में व्याप्त हो रहा है।

अवस्था 7: अभ्यास की समाप्ति

अब संकल्प की सजगता त्याग कर पुन: अपनी सहज श्वास के प्रति सजग हो जायें।
उदर में अपनी श्वास का अनुभव करें।
अंदर आती और बाहर जाती श्वास के प्रति सजग हो जायें।
शरीर के अंदर गतिमान श्वास के प्रवाह पर ध्यान दें।
पूरक के साथ उदर ऊपर उठता है और रेचक के साथ नीचे चला जाता है।
चुने गये आरामदायक आसन में स्थित अपने पूरे शरीर का अनुभव करें।
एड़ी से सिर के पिछले भाग तक भूमि से अपने शरीर के स्पर्श के प्रति सजग हो जायें।
शरीर के चारों ओर के वातावरण के प्रति सजग हो जायें।
जिस कमरे में आप हैं, उसका स्मरण करें– दरवाजे और खिड़कियों की स्थिति, दीवारों का रंग, कमरे में आपकी स्थिति।
वातावरण में ध्वनियों के प्रति सजग हो जायें और सजगता को बहिर्मुखी होने दें।

योग निद्रा का अभ्यास अब पूरा हुआ।
अपनी आँखों को बंद रखते हुए पुनः अपने सम्पूर्ण भौतिक शरीर के प्रति सजग हो जायें और शरीर को हिलाने-डुलाने के लिए मानसिक रूप से तैयार हो जायें।
सजगता को हाथों और पैरों की अंगुलियों पर ले जायें।
धीरे-धीरे अंगुलियों को हिलायें।
सिर को धीरे से अगल-बगल घुमायें।
गहरी श्वास लेते हुए अपनी भुजाओं को सिर के ऊपर ले जाते हुए तानें।
जब आप तैयार हों तब धीरे से उठ कर बैठ जायें।
यदि आप चाहें तो हथेलियों को आपस में रगड़ कर आँखों पर रखें और फिर धीरे से आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 2: सन्मुख पथ और सुषुम्ना की सजगता का विकास

अवस्था 1: सन्मुख अतीन्द्रिय पथ

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जायें।
शरीर को शान्त और स्थिर हो जाने दें।
अपनी श्वसन प्रक्रिया के प्रति सजग हो जायें और सजगता को श्वास के साथ प्रवाहित होने दें।
जब आपके श्वसन की गति धीमी और लयबद्ध हो जाये, तब प्रत्येक श्वास एवं प्रश्वास के प्रति पूर्णतः सजग बन जायें।
अपनी सजगता को कण्ठ में आने-जाने वाली श्वास पर ले जायें और इसे गहरा होता हुआ देखें।
जब आप पूरक करते हैं तब उसके साथ धीरे-धीरे पाँच तक गिनती करें, जब रेचक करते हैं तब धीरे-धीरे पाँच तक गिनती करें।
श्वसन सहज और स्वाभाविक रूप से चल रहा है।
प्रत्येक श्वास के साथ अधिक-से-अधिक विश्रान्त होते जायें।
इस अभ्यास को छोड़ दें और सहज श्वसन पर लौट आयें।

अपनी सजगता को अंतर्मुख कर लें और कल्पना करें कि प्रकाश की एक क्षीण, पारदर्शक धारा कण्ठ और नाभि के बीच एक सीधी रेखा में प्रवाहित हो रही है; इसका मानस-दर्शन करने का प्रयास करें।

यदि आपको ऐसा करने में कठिनाई हो रही हो तो आप इसे एक पारदर्शक अथवा रंगीन नली, जैसे, रुपहले या सफेद रंग की नली के रूप में भी देख सकते हैं।

श्वास की सजगता के बिना इसका मानस-दर्शन करें।

अपनी सजगता को इस नली के अंदर धीरे-धीरे ऊपर की ओर ले जायें और उसके बाद धीरे-धीरे समान गति से नीचे की ओर ले जायें।

अब श्वास की सजगता को सम्मिलित कर लें।

अपनी सजगता को इस अतीन्द्रिय पथ में श्वास के साथ ऊपर-नीचे प्रवाहित होने दें।

जब आप श्वास अंदर लेते हैं तब आपकी श्वास और सजगता धीरे-धीरे समान गति से नाभि से कण्ठ तक ऊपर की ओर जाती है। जब आप श्वास छोड़ते हैं तब श्वास और सजगता धीरे-धीरे समान गति से कण्ठ से नाभि तक नीचे की ओर जाती हैं।

अतीन्द्रिय पथ में दो शक्तियाँ एक साथ गतिमान हैं; श्वास प्राण शक्ति है और सजगता मानसिक शक्ति है।

इन दोनों शक्तियों से आपका अस्तित्व बना है और ये दोनों शक्ति-पथ में एक साथ प्रवाहित हो रही हैं।

अब आप तीसरी शक्ति के प्रति सजग हो जायें।

सजगता श्वास के साथ प्रवाहित हो रही है और इनके साथ प्राण भी संचालित हो रहा है।

सजगता, श्वास और प्राण एक साथ अतीन्द्रिय मार्ग में ऊपर-नीचे गतिमान हैं।

प्राण प्रकाश कणों के रूप में गतिमान है।

जब आपकी चेतना श्वास के साथ ऊपर-नीचे जाती है, इस नाड़ी के अंदर श्वेत प्रकाश कणों के ऊपर-नीचे प्रवाहित होने का मानस-दर्शन करें।

श्वास एवं चेतना के साथ प्रवाहित होने वाली श्वेत प्रकाश की क्षीण प्राण-सरिता के प्रवाह को देखें।

अवस्था 2: सुषुम्ना नाड़ी (मेरुदण्डीय अतीन्द्रिय पथ)

अब सन्मुख अतीन्द्रिय पथ की सजगता का त्याग कर दें और अपनी सजगता को सुषुम्ना नाड़ी के अंदर ले जायें।

यह नाड़ी मेरुदण्ड के केन्द्र में मूलाधार से आज्ञा चक्र तक जाती है और सभी चक्रों को एक साथ जोड़ती है।

इस नाड़ी के प्रति सजगता का विकास करें जो मेरुदण्ड के आधार से आरम्भ होकर मध्य मस्तिष्क तक जाती है, या इस क्षेत्र में ऊपर से नीचे तक स्थित उसी प्रकार की पारदर्शक, श्वेत या रुपहली नली का मानस-दर्शन करें।

अपनी सजगता को इस नाड़ी के भीतर बहुत धीरे-धीरे ऊपर ले जायें।

जब आप ऊपर पहुँच जाते हैं तब पुनः अपनी सजगता को धीरे-धीरे नीचे ले जायें।

अंदर से इसकी पूरी लम्बाई का मानस-दर्शन करने का प्रयास करें।

इसमें श्वास को भी जोड़ दें और अपनी सजगता को नाड़ी में ऊपर-नीचे प्रवाहित होने दें।

जब आप पूरक करते हैं तब मेरुदण्ड के नीचे स्थित मूलाधार से मेरुदण्ड के ऊपर स्थित आज्ञा चक्र तक श्वास के प्रवाह का अनुभव करें।

रेचक करते हुए अनुभव करें कि श्वास वापस मूलाधार तक नीचे उतर रही है।

श्वास के पूर्ण और अविरल प्रवाह के निकटतर, निकटतम होते जायें; प्राण और सजगता एक साथ मेरुदण्ड में ऊपर-नीचे आ-जा रहे हैं। सम्पूर्ण मेरुदण्ड-पथ में श्वास के साथ प्रवाहित होने वाले प्रकाश कणों के रूप में प्राण के प्रति सजग हो जायें। एक भी श्वास बिना सजगता के आनी-जानी नहीं चाहिए।

अवस्था 3: अभ्यास की समाप्ति

अतीन्द्रिय पथ तथा प्राण के प्रवाह के प्रति सजगता का त्याग कर दें।

शरीर के अंदर और बाहर आने-जाने वाली सहज श्वास पर ध्यान केन्द्रित करें।

श्वास को चारों ओर से घेरे हुए अपने भौतिक शरीर का अनुभव करें।

चुने गये ध्यान के आसन में स्थित अपने सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जायें।
अपने शरीर के नीचे जमीन का, और शरीर के आस-पास के स्थान का अनुभव करें।
कमरे में रखी सभी वस्तुओं को याद करें।
बाहरी वातावरण, अपने आस-पास की ध्वनियों, कमरे के अंदर की गंधों, मुँह के अंदर किसी भी प्रकार के स्वाद के प्रति सजग हो जायें।
जब आपकी चेतना पूरी तरह बहिर्मुख हो जाये तब धीरे से अपनी आँखों को खोल दें।
अब अभ्यास पूरा हुआ।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 3: चक्रों की सजगता का विकास करना

अवस्था 1: तैयारी

किसी आरामदायक आसन में बैठ कर उज्जायी प्राणायाम करें और अपने शरीर के प्रति सजग होना आरंभ करें।
अनुभव करें कि शरीर स्थिर हो रहा है।
केवल शरीर की स्थिरता पर ध्यान केन्द्रित करें; शरीर पूरी तरह स्थिर और शांत है।
त्वचा का एक ऐसे खोल के रूप में शरीर के प्रति सजग हो जायें जिसके अंदर कुछ भी नहीं है।
खोल रूपी शरीर के अनुभव को धीरे-धीरे विकसित करें।
अपने शरीर के अंदर आप जिस शांति और रिक्तता का अनुभव कर रहे हैं उसके प्रति सजग हो जायें।

अवस्था 2: चक्रों की सजगता

स्थिर शरीर के अंदर सुषुम्ना नाड़ी के प्रति सजग हो जायें।
मेरुदण्ड के नीचे मूलाधार से ऊपर उठती हुई वह नाड़ी जो सिर के शीर्ष में स्थित सहस्रार चक्र तक जाती है, उसका मानस-दर्शन करें।

इस नाड़ी के प्रति अपनी सजगता को बढ़ायें या मेरुदण्ड के आधार से सिर के शीर्ष तक रुपहली-श्वेत, पारदर्शी नली का मानस-दर्शन करें; मूलाधार से सहस्रार तक एक क्षीण पारदर्शक प्रकाश के प्रवाह की सजगता।
सभी प्रमुख चक्र इस नाड़ी में प्रकाश बिन्दुओं, चमकते हुए हीरों या धागे में पिरोये हुए माणिकों के समान स्थित हैं।
अपनी सजगता को सबसे निचले बिन्दु, मूलाधार पर ले जायें, जो इस नाड़ी का उद्गम स्थान है।
मूलाधार पुरुषों में अण्डकोश और गुदा के बीच तथा स्त्रियों में गर्भाशय ग्रीवा के पीछे स्थित होता है।
मूलाधार का मानस-दर्शन एक चमकीले प्रकाश बिन्दु के रूप में करें।
मेरुदण्ड के आधार में पुच्छ अस्थि के तल पर स्थित स्वाधिष्ठान चक्र की ओर ऊपर बढ़ें।
तीव्र प्रकाश के रूप में इसका मानस-दर्शन करें।
नाभि के ठीक पीछे, मेरुदण्ड के अंदर की दीवार में स्थित मणिपुर चक्र की ओर ऊपर बढ़ें।
इसका मानस-दर्शन आभायुक्त प्रकाश बिन्दु के रूप में करें।
अनाहत चक्र की ओर बढ़ें, जो मेरुदण्ड की उरोस्थि के केन्द्र के ठीक पीछे स्थित है।
एक चमकीले प्रकाश बिन्दु के रूप में इसका मानस-दर्शन करें।
ऊपर विशुद्धि चक्र की ओर जायें, जो कण्ठ कूप के पीछे स्थित है।
इसका मानस-दर्शन उज्ज्वल प्रकाश बिन्दु के रूप में करें।
ऊपर आज्ञा चक्र की ओर बढ़ें, जो मेरुदण्ड के ऊपरी सिरे पर भ्रूमध्य के ठीक पीछे स्थित है। चमचमाते हुए प्रकाश बिन्दु के रूप में इसका मानस-दर्शन करें।
सिर के पीछे ऊपर के छोर पर जहाँ ब्राह्मण शिखा रखते हैं, वहाँ बिन्दु चक्र की ओर जायें।
इसका मानस-दर्शन एक चमकते हुए प्रकाश बिन्दु के रूप में करें।
अंतत: सजगता को सिर के शीर्ष पर सहस्रार की ओर ले जायें।
इसका मानस-दर्शन प्रकाशपूर्ण क्षेत्र के रूप में करें।
सभी चक्रों का मानस-दर्शन एक साथ करें।

मेरुदण्ड के अंदर श्वास के साथ मूलाधार से सहस्रार तक एक-एक कर प्रत्येक चक्र का आरोहण कर रही चेतना के प्रति सजग हो जायें।

जब आप श्वास अंदर लेते हैं तब श्वास मेरुदण्ड में सभी चक्रों को भेदती हुई मूलाधार से सहस्रार तक ऊपर जाती है।

जब तक आपका पूरक पूर्ण होता है, तब तक आपकी सजगता सहस्रार तक पहुँच जानी चाहिए।

जब आप रेचक करना आरंभ करते हैं तब सजगता सहस्रार में होनी चाहिए।

जब आपका रेचक पूरा होता है तब आपकी सजगता फिर से मूलाधार में होनी चाहिए।

पूरक और रेचक पर पूरा नियंत्रण होना चाहिए; सजगता को श्वास की गति के साथ चलना चाहिए।

पूरक के समय सजगता मूलाधार से स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा और बिन्दु से होती हुई सहस्रार तक जाती है।

रेचक करते समय सजगता सहस्रार से नीचे बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर और स्वाधिष्ठान से होती हुई मूलाधार तक जाती है।

जब आप विभिन्न प्रकाश बिन्दुओं से होते हुए आगे बढ़ते हैं तब मानसिक रूप से चक्रों के नाम दुहराते जायें।

पूरक की क्रिया मूलाधार से आरंभ करें। जब श्वास तथा सजगता प्रत्येक चक्र को भेदती है तब उस चक्र का नाम दुहराएँ; मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा, बिन्दु, सहस्रार।

उसके बाद रेचक करते हुए दुहराएँ; सहस्रार, बिन्दु, आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान, मूलाधार।

सजगता और श्वास को चक्रों में से ले जाते हुए प्रत्येक चक्र के नाम को मानसिक रूप से दुहराना जारी रखें।

इस प्रक्रिया के प्रति पूर्णत: सजग रहें। इससे ध्यान नहीं हटना चाहिए; पूरी एकाग्रता होनी चाहिए।

चक्रों की सजगता को बढ़ाते हुए अभ्यास करते जायें।

अवस्था 3: अभ्यास की समाप्ति

अब अभ्यास को समाप्त करने के लिए तैयार हो जायें।

मेरुदण्ड की सजगता को छोड़ दें।

मेरुदण्ड में चक्रों और उज्जायी श्वसन की सजगता को छोड़ दें।
धीरे-धीरे अपने शरीर और अपने आस-पास के वातावरण के प्रति सजग बने।
शरीर के नीचे जमीन के स्पर्श का और शरीर के चारों ओर के स्थान का अनुभव करें।
अपने चारों ओर की ध्वनियों के प्रति सजग हो जायें।
गंध और स्वाद की संवेदना के प्रति सजग हो जायें।
यह सुनिश्चित कर लें कि आप अपने भौतिक शरीर में पूरी तरह वापस आ चुके हैं।
जब आप को अनुभव हो कि आप तैयार हैं तब धीरे-से अपने शरीर को हिलाएँ और जब यह अनुभव हो कि आप पूरी तरह बहिर्मुख हो चुके हैं तब अपनी आँखें खोल सकते हैं।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 4: पंच प्राणों की सजगता को विकसित करना

अवस्था 1: अंतराकाश

आराम से बैठ जायें, उज्जायी प्राणायाम आरंभ करें और अपने शरीर का अवलोकन करें।
शरीर के आंतरिक अनुभव का विकास करें; स्वयं का आंतरिक परीक्षण करें।
यह आंतरिक परीक्षण उस प्रकार का अनुभव उत्पन्न नहीं करता है जो स्वयं को बाहर से देखने पर होता है। जब आप अंदर से शरीर का अवलोकन करते हैं तब आप अंतराकाश के प्रति सजग हो जाते हैं।
आप अपनी नासिकाओं, आखों, कानों, हाथों या भुजाओं का मानस-दर्शन नहीं कर रहे हैं, बल्कि शरीर के आंतरिक आकाश का अवलोकन कर रहे हैं।
सिर से पैर के अँगूठों तक पूरे शरीर के प्रति सजग हो जायें।
शरीर के अंदर के संपूर्ण क्षेत्र का एक इकाई के रूप में अनुभव करें।
यह किसी सीमित क्षेत्र, चिदाकाश या हृदयाकाश की सजगता नहीं, बल्कि पूरे शरीर के अंदर स्थूलाकाश की सजगता है। संपूर्ण शरीर के प्रति सजग रहते हुए सजगता को तीव्रतर करते जायें।

अवस्था 2: रोम छिद्रों के द्वारा श्वसन

शरीर के स्थूलाकाश का अवलोकन करते हुए सहज, स्वाभाविक श्वास-प्रवाह के प्रति सजग हो जायें।

जब आप श्वास अंदर लेते हैं तो यह अनुभव करें कि आपका पूरा शरीर प्रत्येक रोम छिद्र एवं कोशिका से श्वास ले रहा है, न कि नासिकाओं से।

जब आप श्वास बाहर छोड़ते हैं तो अनुभव करें कि श्वास प्रत्येक रोम छिद्र से बाहर निकल रही है। अनुभव करें कि पूरा शरीर रोम छिद्रों एवं कोशिकाओं से श्वसन कर रहा है।

अगले पूरक के साथ शरीर के प्रसार के अनुभव को भी सम्मिलित कर लें।

रेचक के साथ शारीरिक विश्राम का अनुभव करें, अनुभव करें कि सभी पेशियाँ शिथिल हो रही हैं।

जब आप श्वास अंदर लेते हैं, स्थूलाकाश का प्रसार होता है और जब आप श्वास बाहर निकालते हैं तब वह संकुचित होता है।

एक गुब्बारे के समान शरीर में होने वाले प्रसार और संकुचन की प्रक्रिया के अनुभव का अवलोकन करें।

इस सजगता को तीव्रतर करते जाएँ और जागरूक तथा सतर्क रहें।

अवस्था 3: व्यान की सजगता

अब शरीर के प्रत्येक भाग में व्याप्त प्राणिक ऊर्जा की सजगता को विकसित करना आरंभ करें।

यदि आप इसका मानसिक रूप से स्पष्ट अनुभव कर सकें तो बेहतर होगा।

यह देखने का प्रयास करें कि शरीर का स्थूलाकाश असंख्य प्रकाश कणों से भरा हुआ है और वे इतनी शीघ्रता से सभी दिशाओं में इस प्रकार गतिमान हैं मानो श्वेत प्रकाश की रेखाएँ और धाराएँ संपूर्ण शरीर में दौड़ रही हों।

संपूर्ण स्थूलाकाश इस प्रकाश से भर गया है।

यह एक अत्यंत सूक्ष्म अनुभव है; इस अनुभव के लिए अपनी एकाग्रता और सजगता को गहन बनाना होगा।

यदि आप सफल होते हैं तो अच्छी बात है। यदि आप आरंभ में सफल नहीं होते हैं तो प्रयास करते रहें, हतोत्साह न हों।

प्रकाश किरणों के विभिन्न स्वरूपों को सभी दिशाओं में इधर-उधर जाते हुए अनुभव करते रहें, मानो अनेक जलती हुई अगरबत्तियाँ अँधेरे में घुमायी जा रही हों।

यह व्यान चैतन्य, व्यान की सजगता है। यह वह प्राण है जो शरीर के प्रत्येक भाग में व्याप्त रहता है और अन्य प्राणों के लिए संचित कोश के रूप में कार्य करता है।

अवस्था 4: उदान की सजगता

अब अपने ध्यान को शरीर के छोरों–हाथों, पैरों और सिर की ओर ले जायें। प्राण का यह पक्ष जो शरीर छोरों पर स्थित होता है, इसे उदान कहते हैं।

पहले अपने पैरों के प्रति सजग हो जायें।

अनुभव करें कि आपके पैरों के चारों ओर यह ऊर्जा प्रकाश के वृत्ताकार, घुमावदार प्रतिरूपों या छल्लों के रूप में तीव्र गति से घूम रही है।

यह ऊर्जा नितंबों से पैरों की अँगुलियों की ओर जाती है।

पैरों के प्रति और उनमें उदान प्राण के प्रति सजग हो जायें।

पैरों में वृत्ताकार रूप में ऊर्जा का मानस-दर्शन करें।

इस सजगता को तीव्र बनाएँ।

सोना नहीं है। जागरूक रहना है।

अब अपनी सजगता को हाथों में ले जायें।

उसी प्रकार की वृत्ताकार ऊर्जा का अनुभव हाथों में करें, यह कंधों से अँगुलियों के छोरों तक घुमावदार रूप में गतिमान है।

इस सजगता को बढ़ायें।

वृत्ताकार रूप में या हाथों को आच्छादित कर लेने वाले प्रकाश के छल्लों के रूप में उदान प्राण का मानस-दर्शन करने का प्रयास करें।

अब सिर पर ध्यान केन्द्रित करें।

अनुभव करें कि उदान प्राण के छल्ले कण्ठ से ऊपर सिर के शीर्ष तक जा रहे हैं। शरीर के छोरों पर उदान चैतन्य, अर्थात् उदान की सजगता का विकास करें।

अवस्था 5: समान की सजगता

अब उदर में नाभि और अस्थि पिंजर के बीच ऊर्जा के प्रति सजग हो जायें। इस क्षेत्र में स्थित प्राण को समान कहा जाता है।

इस ऊर्जा को क्षैतिज रूप से कमर के एक ओर से दूसरी ओर जाते हुए और फिर वापस आते हुए देखें। यह गति अत्यंत तीव्र होती है।

उदर में स्थित प्राण, अर्थात् समान के चैतन्य का, समान की सजगता का विकास करें।

समान को प्रकाश रेखाओं के रूप में अत्यंत तीव्र गति से बायें से दायें और दायें से बायें जाते हुए देखें।

इस सजगता को गहन बनाएँ।

अवस्था 6: अपान की सजगता

अब आपकी सजगता उस ऊर्जा की ओर जा रही है जिसे अपान कहा जाता है और जो उदर के निचले भाग में नाभि और मूलाधार के बीच स्थित होती है।

यहाँ आप प्रकाश रेखाओं के रूप में नाभि से अवरोहण कर मूलाधार की ओर जा रहे अपान प्राण का मानस-दर्शन करेंगे। अवरोहण करने वाली प्रकाश तरंगें उदर के निचले भाग को पूरी तरह भर देती हैं।

प्रकाश तरंगों के रूप में अवरोहण कर उदर के निचले भाग की ओर जाने वाली ऊर्जा का, अर्थात् अपान के चैतन्य का, अपान की सजगता का विकास करें।

अवस्था 7: प्राण की सजगता

अंततः अपनी सजगता को वक्ष प्रदेश की ऊर्जा पर ले जायें।

इस ऊर्जा को प्राण कहा जाता है, जो मध्यपट से आरोहण कर कण्ठ की ओर जाती है।

नाभि से ऊपर आरोहण करने वाली प्रकाश तरंगों का मानस-दर्शन करें, जो संपूर्ण वक्ष को प्रकाश से भर देती हैं।

वक्ष प्रदेश की ओर आरोहण करने वाली ऊर्जा, अर्थात् प्राण के चैतन्य का, प्राण की सजगता का विकास करें।

इस सजगता को गहन बनायें।

अवस्था 8: अभ्यास की समाप्ति

अब प्राण चैतन्य के अभ्यास को बंद कर दें और अपनी चेतना को बहिर्मुख करना आरंभ करें।

धीरे-धीरे बाह्य वातावरण के प्रति सजग होना आरंभ करें– ध्वनियाँ, आपकी श्वसन प्रक्रिया, स्थूल शरीर, जमीन और जमीन का वह भाग जिसे शरीर स्पर्श कर रहा है, आप के आस-पास के लोग, कमरा और कमरे में रखी विभिन्न वस्तुएँ।

धीरे-धीरे पैरों की अंगुलियों, हाथों की अंगुलियों, हाथों और पैरों को हिलाएँ और सिर को एक ओर से दूसरी ओर घुमाएँ।

एक गहरी श्वास लें और हाथों को सिर के ऊपर ले जाते हुए पूरे शरीर को ताने। फिर श्वास छोड़ें।

आँखों को बंद रखते हुए धीरे से उठ कर बैठ जायें।

आँखों को तुरंत नहीं खोलें; सामान्य चेतना को शरीर के प्रत्येक भाग में लौट आने दें।

जब मन पूरी तरह बहिर्मुख हो जाये तब धीरे से अपनी आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 5: प्राणमय कोश की सजगता का विकास

अवस्था 1: तैयारी

आसन में स्वयं को स्थिर करने और आराम की स्थिति में लाने के बाद अपने सम्पूर्ण शरीर को शिथिल करना आरंभ करें।

धीरे से अपनी आँखें बंद कर लें और नासिकाओं में श्वास के प्रवाह को देखें।

शरीर की सभी मांसपेशियों को शिथिल करें।

अनुभव करें कि आपका शरीर पूरी तरह आराम की स्थिति में है।

शरीर के किसी अंग या किसी भाग में कोई तनाव या कड़ापन नहीं है।

स्वयं को पूर्णत: समर्पित कर दें; अनुभव करें कि आप शान्ति के सागर में तैर रहे हैं; शान्त लहरों ने आपको अपनी गोद में ले रखा है।

आपके चारों ओर प्रकाश और ऊर्जा दमक रही है।

प्रकाश के इस सुरक्षा मण्डल के प्रति आत्मसमर्पण कर दें।

अपनी सजगता को अपने भीतर ले जायें और शरीर के अंदर के स्थूलाकाश की अनुभूति का विकास करें।

शरीर के अंदर देखें और देखें कि अंदर रिक्त स्थान के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

आपके शरीर की त्वचा एक खोल के समान है और उसके अंदर सिर से पैर तक कुछ भी नहीं है, केवल शून्य है।

इस आंतरिक शून्यता को देखें।

स्थूलाकाश की सजगता का विकास करें; वह आकाश जिससे आपका अस्तित्व बना है।

अवस्था 2: अंतराकाश का प्रसार एवं संकुचन

श्वास के प्रति सजग बन जायें।

धीमे, गहरे श्वसन का अभ्यास आरंभ करें।

अपनी सजगता को श्वास के साथ अंदर और बाहर ले जायें।

जब आप प्रत्येक श्वास के प्रति सजगता को विकसित करते हैं, तब यह अनुभव करना आरंभ करें कि आप न केवल अपनी नासिका से, बल्कि अपने प्रत्येक रोम छिद्र और प्रत्येक कोशिका से भी श्वास ले रहे हैं।

पूरे शरीर से श्वास लेना आरंभ करें; अनुभव करें कि आपका पूरा शरीर एक इकाई के रूप में समान रूप से श्वास ले रहा है।

अब नासिकाओं, फेफड़ों और वक्ष की सजगता को छोड़ दें और केवल रोम छिद्रों से श्वास लें।

अनुभव करें कि शरीर का प्रत्येक रोम छिद्र और प्रत्येक कोशिका श्वास ले रही है।

कुछ क्षणों के लिए प्रत्येक रोम छिद्र और कोशिका के द्वारा श्वास लेना जारी रखें। कल्पना करें कि श्वास लेते और छोड़ते समय वे क्रमश: खुल रही हैं और बंद हो रही हैं।

जब आप अपने प्रत्येक रोम छिद्र से श्वास लें तब ऐसा अनुभव करने का प्रयास करें कि आपके अस्तित्व के सम्पूर्ण अंतराकाश का सभी दिशाओं में विस्तार हो रहा है; सिर से पैर तक सम्पूर्ण स्थूलाकाश का आकार बढ़ता जा रहा है।

जब आप प्रत्येक रोम छिद्र से श्वास बाहर निकालें तब अनुभव करें कि यह स्थूलाकाश चारों ओर से समान रूप से संकुचित हो रहा है।

अपनी कल्पनाशक्ति का उपयोग करें और यह अनुभव करने का प्रयास करें कि वास्तव में आपका पूरा शरीर श्वास ले रहा है, उसमें विस्तार और संकुचन हो रहा है।

जब आप गहरी श्वास अंदर लेते हैं तब अनुभव करें कि आपके शरीर के प्रत्येक रोम छिद्र और कोशिका के द्वारा श्वास अंदर जा रही है और आपका सम्पूर्ण अंतराकाश एक बुलबुले के समान फैलता जा रहा है।

उसके बाद प्रत्येक रोम छिद्र से धीरे-धीरे श्वास को बाहर छोड़ें और अनुभव करें कि अंतराकाश संकुचित हो रहा है।

अंतराकाश की वृद्धि और क्षय, प्रसार और संकुचन के इस अनुभव को बढ़ाते जाएँ।

अवस्था 3: प्राणमय कोश का मानस-दर्शन

श्वास के साथ स्थूलाकाश के प्रसार और संकुचन के अनुभव के साथ-साथ उस स्थूलाकाश के अंदर प्रकाश के रूप में व्याप्त प्राण के प्रति सजग हो जायें।

प्रत्येक श्वास के साथ स्थूलाकाश के अंदर सभी दिशाओं में तीव्र गति से दौड़ने वाले श्वेत प्रकाश कणों से निर्मित प्रकाश रेखाओं से अंतराकाश भर जाता है।

इस प्रकाशयुक्त शरीर को देखना आरंभ करें।

जब आप श्वास अंदर लेते हैं तो प्रकाशयुक्त शरीर में प्रसार होता है।

जब आप श्वास बाहर निकालते हैं तो यह प्रकाशयुक्त शरीर संकुचित होता है।

अपनी सजगता को प्रत्येक श्वास के साथ अपने अंदर होने वाले प्रकाश के प्रसार और संकुचन के अनुभव पर केन्द्रित करें।

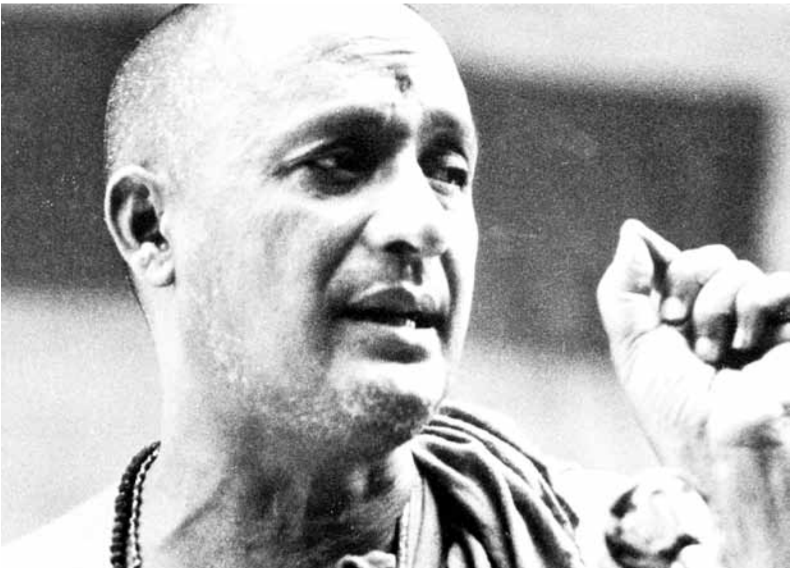
आप जिस प्रकाशयुक्त क्षेत्र का अनुभव कर रहे हैं वह श्वास की लय से गतिमान होने वाला प्राणमय कोश है।

यह अभ्यास तब तक जारी रखें जब तक प्राणमय कोश का प्रकाश-क्षेत्र धीरे-धीरे विलुप्त न हो जाये।

अवस्था 4: अभ्यास की समाप्ति

अभ्यास को धीरे-धीरे समाप्त करने के लिए तैयार हो जायें।
प्रकाशयुक्त शरीर का मानस-दर्शन करना बंद कर दें।
रोम छिद्रों के द्वारा श्वास लेने के अनुभव का त्याग कर दें।
अपने शरीर के अंदर अंतराकाश की सजगता का त्याग कर दें और अपने अन्नमय कोश, अर्थात् स्थूल भौतिक शरीर में वापस आ जायें।
अपने नासिकाग्र पर ध्यान केन्द्रित करें और अनुभव करें कि श्वास नासिकाओं से अंदर और बाहर आ-जा रही है।
बाहर की सभी ध्वनियों के प्रति सजग हो जायें।
हाथों और पैरों की अंगुलियों को धीरे-धीरे हिलाएँ, सिर को धीरे से दोनों ओर घुमाएँ।
अपने हाथों को सिर के ऊपर फैला कर ताने।
जब आप पूर्णत: बहिर्मुख हो जायें और अपने भौतिक शरीर में पूरी तरह वापस आ जायें, तब उठ कर बैठ जायें और अपनी आँखें खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्



10

प्राण निद्रा

प्राण निद्रा का अभ्यास प्राणमय कोश के अनुभव को हमारी चेतन सजगता में लाता है। प्राणमय कोश वह प्राण शक्ति है जो भौतिक शरीर, अर्थात् अन्नमय कोश को अनुप्राणित करती है और मन, अर्थात् मनोमय कोश को ऊर्जा प्रदान करती है। प्राण प्राय: एक लय में स्वत: निरंतर सम्पूर्ण शरीर में गतिमान रहते हुए शरीर और मन की महत्त्वपूर्ण प्रणालियों को क्रियाशील रखता है। चेतन मन, वह भाग जो अग्र मस्तिष्क से जुड़ा हुआ रहता है, प्राय: इन शक्तियों का सक्रियता से संचालन नहीं करता है। मन का अचेतन भाग, जो मस्तिष्क के आदि या पुरातन भाग से जुड़ा रहता है, निरंतर जीवनदायक और जीवनपालक प्राण की व्यवस्था का संचालन करता रहता है।

प्राणायाम, योग निद्रा एवं प्राण निद्रा जैसी यौगिक विधियों के अभ्यास द्वारा स्वयं को प्राण तथा प्राणमय कोश के प्रति अधिक चेतन और स्पष्ट रूप से सजग बनने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है। अधिक सजगता प्राप्त करने के परिणामस्वरूप व्यक्तित्व के इस आयाम की आगे खोज की जा सकती है और अंतत: इसे अच्छी तरह नियंत्रित किया जा सकता है।

सजगता

प्राण निद्रा के अभ्यास का उद्देश्य चेतन मन को बौद्धिक स्तर पर प्राणमय कोश के सैद्धांतिक विवरण से भर देने की अपेक्षा प्राण की सजगता तथा अनुभव का विस्तार करना है, जो पहले केवल अचेतन क्षेत्र में था, उसका चेतन क्षेत्र तक प्रसार करना है। योग निद्रा जैसी एक विधि के द्वारा क्रमबद्ध ढंग से सजगता को प्राण के विभिन्न स्वरूपों, स्तरों और अनुभवों की ओर प्रेषित किया जाता है।

योग निद्रा एवं प्राण निद्रा में व्यक्ति अधिक से अधिक सूक्ष्म स्तरों की ओर बढ़ते हुए अपने विषय में उन बातों के प्रति सजग हो जाता है जिनके प्रति पहले वह सजग नहीं था। अपने भौतिक शरीर, अर्थात् अन्नमय कोश को शवासन या किसी अन्य शिथिलीकरण के आसन में शिथिल किया जाता है। अपने प्राणमय कोश को श्वास के द्वारा विश्रान्त किया जाता है। मनोमय कोश को विपरीत भावों या स्मृतियों के अनुभव को जाग्रत कर शिथिल किया जाता है। विज्ञानमय कोश को प्रतीकों के माध्यम से जाग्रत किया जाता है और आनन्दमय कोश को साक्षी भाव के साथ शिथिलता की गहनतम अवस्थाओं में जाकर जाग्रत किया जाता है। जब पूर्ण शिथिलता होती है तो ग्रहणशीलता में वृद्धि होती है।

योग निद्रा एवं प्राण निद्रा में चेतना जाग्रत और सुषुप्त अवस्थाओं के बीच रहती है, फिर भी इन दोनों में से किसी का प्रभाव नहीं रहता है। इस अवस्था में मन अत्यंत ग्रहणशील रहता है। चूँकि मन सजग और ग्रहणशील रहता है, योग निद्रा मन की गहराइयों को चेतन अनुभव के स्तर पर ले आती है और प्राण निद्रा प्राण के बढ़ते हुए सूक्ष्म अनुभवों को सजगता के क्षेत्र में ले आती है। महर्षि पतंजलि के योग सूत्रों में कहा गया है कि हम सुषुप्ति और स्वप्न की प्रक्रियाओं के माध्यम से प्राप्त किये गये ज्ञान को स्थिर और स्थायी बना सकते हैं– (1:38): *स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा*– "अथवा स्वप्न तथा निद्रा के ज्ञान का आलम्बन देकर (मन को स्थिर बनाया जा सकता है)।"

प्राणमय कोश

प्राण निद्रा का उद्‌देश्य और विधि योग निद्रा के समान ही है। इन दोनों की सीधी पहुँच उस ज्ञान तक होती है जो पहले मन के अचेतन स्तरों में स्थित था। दोनों में मुख्य अंतर यह है कि प्राण निद्रा अधिक विशेषीकृत है। इसका सम्बन्ध चार मुख्य प्रकार के अनुभवों से होता है– 1) पंच प्राणों में ऊर्जा का प्रवाह, 2) नाड़ियों में ऊर्जा का प्रवाह, 3) चक्रों में ऊर्जा का प्रवाह, और 4) इन ऊर्जा प्रवाहों की, विशेष रूप से स्फूर्ति, मनोभावों और भावनाओं के स्तर पर अभिव्यक्ति।

जब साधक इन ऊर्जा तत्त्वों को पहचानना, नियंत्रित करना और इनका संचालन करना सीख लेता है तब वह अपने अस्तित्व के नये स्तरों के प्रति सजग हो जाता है। प्राण निद्रा का उद्‌देश्य साधक की आत्मसजगता को

अधिक व्यापक और सूक्ष्म बनाना है। इसके द्वारा जो अनुभव प्राप्त होते हैं वे इस प्रकार हैं–

- अन्नमय कोश एवं प्राणमय कोश के बीच सम्बन्ध, और इस प्रकार पूरे भौतिक शरीर में प्राणशक्ति तथा ऊर्जा के प्रवाह के प्रति सजग बनना। इसलिए प्राण निद्रा शारीरिक उपचार के लिए उपयोगी है। मनोमय कोश एवं प्राणमय कोश के बीच सम्बन्ध, अर्थात् मानसिक अवस्थाओं तथा प्राणशक्ति के स्तर के बीच सम्बन्ध। यह तब हो सकता है जब साधक विभिन्न तीव्रताओं वाली ऊर्जा प्रदान करने वाले विभिन्न प्रकार के विचारों, मनोभावों और भावनाओं का द्रष्टा बनता है। इसलिए प्राण निद्रा मानसिक उपचार के लिए भी उपयोगी है।
- स्वयं प्राणमय कोश की संरचना एवं उसकी कार्यप्रणाली–पंच प्राण, नाड़ियाँ और चक्र। इड़ा और पिंगला नाड़ियों में ऊर्जा प्रवाह के अनुभव के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली नयी समझ कि साधक का व्यक्तित्व बाह्य जगत् के साथ स्वयं को किस प्रकार जोड़ता है। जब साधक चक्र विशेष पर गहन सजगता का अभ्यास करता है, तब उस चक्र को एक अलग वोल्टेज की ऊर्जा प्राप्त होती है, जिससे भिन्न-भिन्न अनुभव होते हैं। ग्रन्थियाँ, जो व्यक्ति को जीवन में एक विशेष ढंग से जीने के लिए बाध्य करती हैं, उनके खुल जाने से जीवन के प्रति नये दृष्टिकोण सामने आ जाते हैं। इस प्रकार प्राण निद्रा नयी आदतों, दृष्टिकोणों और जीवन शैली को अपनाने में सहायक होती है।
- प्राणमय कोश एवं विज्ञानमय कोश में सम्बन्ध–संतुलित ऊर्जाओं के बीच सम्बन्ध और अन्तर्ज्ञान की उत्पत्ति। यह ज्ञान साधक को परिस्थिति के साथ सामंजस्य रखते हुए समझने और सहज व्यवहार करने में मदद करता है और उसे हर काम के लिए बुद्धि की सहायता लेने की आवश्यकता नहीं होती। प्राण निद्रा पुरानी आदतों को छोड़कर केवल अपने धर्म का पालन करने का साहस प्रदान करने में सहायक होती है।
- आनन्दमय कोश के साथ प्राणमय कोश का विलय। इसलिए यह आत्मभाव, जीवन के प्रति आध्यात्मिक दृष्टिकोण स्थापित करने में सहायक है, जिसके द्वारा सब के साथ ऐक्य का भाव आता है और सभी प्राणियों में समानता का दर्शन होता है।

मार्गदर्शन

किसी भी यौगिक अभ्यास में लाभदायक प्रगति के लिए, विशेष रूप से गहन अंतर्मुखता लाने वाले अभ्यासों के लिए गुरु का मार्गदर्शन आवश्यक है। इस मार्गदर्शन का अनुपालन करना चाहिए ताकि संवर्धित ऊर्जा और सजगता का उपयोग सब के कल्याण के लिए किया जा सके।

प्राण निद्रा के अनुभवों को नियंत्रित रखने और सामंजस्यपूर्ण प्रगति के लिए संतुलित भोजन के साथ षट्कर्म, आसन, प्राणायाम तथा सरल मुद्राओं का नियमित अभ्यास करने का परामर्श दिया जाता है। ये अभ्यास शरीर, मन और प्राणों को शुद्ध कर देते हैं। प्रारंभिक योग निद्रा एवं अंतर्मौन को पूरक अभ्यास माना जा सकता है, और चक्र शुद्धि जैसे प्राण निद्रा के गहन पक्षों के अभ्यास से पूर्व इनका नियमित रूप से अभ्यास किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त प्राण निद्रा साधक को प्राण विद्या तथा तत्त्व शुद्धि जैसे ध्यान के अधिक सूक्ष्म अभ्यासों की ओर ले जाने में सहायक हो सकती है।

प्राण निद्रा की अवस्थाएँ

प्राण निद्रा की अवस्थाएँ योग निद्रा के समान ही हैं, हालाँकि प्राण निद्रा में सजगता को बार-बार प्राणमय कोश में वापस लाया जाता है। अवस्था एक से अवस्था पाँच तक के निम्नलिखित सभी घटकों को प्रत्येक सत्र में सम्मिलित किया जाता है। अवस्था चार से चुनाव साधक की आवश्यकताओं और उसकी क्षमताओं पर निर्भर रहता है। ये अवस्थाएँ इस प्रकार हैं–

1. शवासन या किसी अन्य आरामदायक आसन में काया स्थैर्यम् का अभ्यास करें, जिसमें रीढ़ की हड्डी सीधी रहे और शरीर आराम से स्थिर रहे।
2. ध्वनियों तथा इन्द्रियों से प्राप्त अन्य अनुभवों, विचारों एवं श्वास को ऊर्जा के रूप में देखते हुए उनका द्रष्टा बनना।
3. ऊर्जा की बदलती हुई स्थिति और प्राण शक्ति की सजगता पर ध्यान एकाग्र करते हुए चेतना को शरीर के सभी भागों में घुमाना।
4. निम्नलिखित में से किसी एक तरीके से श्वास के साथ प्राण की सजगता को जोड़ना–
   - शरीर के भाग–हाथ-पैर, अंग या प्रणालियाँ
   - स्वाभाविक उदर श्वसन एवं मानसिक नाड़ी शोधन जैसे प्राणायाम

- पंच प्राणों में से एक या अधिक प्राण– अपान, समान, उदान एवं व्यान को उनकी दिशा एवं सघनता के साथ देखना।
- प्राणिक शरीर का प्रसार एवं संकुचन
- नाड़ियों की खोज, विशेष रूप से इड़ा तथा पिंगला नाड़ी
- चक्रों की खोज
- चक्र शुद्धि
- तत्त्व शुद्धि।

5. समाप्ति: सावधानी से सजगता को बहिर्मुख करना और ध्यान को अन्नमय तथा मनोमय कोश पर लाना।

दो प्रारंभिक अभ्यास दिये जा रहे हैं–

अभ्यास 1: प्राणमय कोश की सजगता

अवस्था 1: तैयारी

प्राण निद्रा के अभ्यास के लिए तैयार हो जाएँ।

अभ्यास आरंभ करने से पूर्व शरीर पर से धातु की किसी भी वस्तु को उतार दें और अपने वस्त्रों को ठीक कर लें।

शवासन सर्वोत्तम आसन है; हालाँकि आप किसी अन्य आरामदायक आसन का प्रयोग भी कर सकते हैं जिसमें आप 20 से 30 मिनट स्थिर रह सकें।

शरीर को अपने द्वारा चुने गये आसन में स्थिर कर लें।

शरीर को इस आसन में व्यस्थित करने में पर्याप्त समय लें; पीठ और गर्दन सीधी हो, हाथ-पैर, पेट और चेहरा तनावमुक्त रहें, आँखें और मुँह धीरे से बंद हों।

यह सुनिश्चित कर लें कि पूरे अभ्यास के दौरान आपके शरीर में पर्याप्त गर्मी/ठण्ढक रहेगी।

अवस्था 2: शिथिलीकरण

जब शरीर जमीन में अच्छी तरह व्यवस्थित हो जाए तब इसकी ठोसता का अनुभव करें, और इसे स्थिर हो जाने दें।

अपने शरीर का अनुभव करें। शरीर को आवरित करने वाली त्वचा के प्रति सजग हो जाएँ।

वस्त्रों और शरीर को ढँकने वाले किसी भी आवरण के प्रति सजग हो जाएँ।

शरीर का अवलोकन करें और यदि शरीर को किसी प्रकार व्यवस्थित करने की आवश्यकता हो तो कर लें ताकि अभ्यास की सम्पूर्ण अवधि तक आप स्थिर और आरामपूर्वक रह सकें।

शरीर में होने वाली किसी भी संवेदना के प्रति सजग बन जाएँ– सिर, गर्दन, कंधे, पूरा मेरुदण्ड, छाती, उदर, पूरा धड़, पैर, तलवे, पूरा शरीर।

आपका भौतिक शरीर इतनी आरामदायक स्थिति में होना चाहिए कि इसके कारण आपको किसी प्रकार कष्ट की अनुभूति न हो और आप प्राणमय कोश की सूक्ष्म ऊर्जा के प्रति अधिक सजग हो पाएँ।

शांत और सतर्क रहें, पूरे शरीर में सूक्ष्म ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।

नासिकाओं में श्वास के प्रवाह का अनुभव करें, और श्वास के तापमान के प्रति सजग बन जायें।

जब आप श्वास अंदर लेते हैं तब अनुभव करें कि नयी ऊर्जा आपके अंदर प्रवाहित हो रही है और श्वास छोड़ते समय अनुभव करें कि आप तनावमुक्त हो रहे हैं।

सहज, स्वाभाविक श्वास, लेकिन नासिकाओं में श्वास की सजगता के साथ। श्वास के साथ अंदर आ रही ऊर्जा के प्रति और श्वास के बाहर निकलने के साथ शरीर में आने वाली शिथिलता के प्रति सजगता।

शरीर इतना शांत है कि आप श्वास की गति और श्वास से सम्बद्ध ऊर्जा का स्पष्ट रूप से अनुभव कर सकते हैं।

अवस्था 3: सजगता को घुमाना

अब अपने पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरे शरीर की और जमीन से इसके स्पर्श बिन्दुओं की सजगता, अब हम लोग सजगता को शरीर में चारों ओर घुमाना आरंभ करेंगे।

शरीर के जिस अंग का नाम लिया जाता है, उसे अंदर से अनुभव करें, शरीर के प्रत्येक अंग में ऊर्जा का अनुभव करें, ऊर्जा सजगता के साथ-साथ चलेगी और शरीर के विभिन्न भागों को ताजगी तथा स्फूर्ति प्रदान करती जायेगी।

दाएँ हाथ के अँगूठे से आरंभ करें।
अपने पूरे अँगूठे के प्रति सजग हो जायें, ऊपरी सिरे से उसके आधार तक– उसका आकार, उसकी अस्थियाँ और जोड़, उसके अंदर स्थित ऊर्जा।
सजगता को पहली अँगुली पर ले जाएँ– अनुभव करें कि अँगूठे से ऊर्जा प्रवाहित हो रही है और पहली अँगुली को पूरी तरह से भर रही है, उसके सिरे तक।
सजगता को दूसरी अँगुली पर ले जाएँ और अनुभव करें कि ऊर्जा उसके सिरे तक प्रवाहित हो रही है। इसी प्रकार तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली।
हथेली, हथेली में ऊर्जा की गर्मी।
अपनी सजगता को हाथ के पीछे की ओर ले जायें। सजगता एवं ऊर्जा को कलाई, भुजा के निचले भाग, केहुनी, भुजा के ऊपरी भाग और कंधे तक प्रवाहित होने दें।
कंधे, काँख, बगल, कमर और नितंब में ऊर्जा का अनुभव करें। सजगता को दायीं जाँघ में ले जाएँ और जाँघ, घुटने, पिण्डली, टखने, एड़ी, तलवे के ऊपरी भाग और तलवे में ऊर्जा का अनुभव करें। तलवे के अंदर ऊर्जा का, उसकी संवेदना का अनुभव करें।
सजगता को दाएँ पैर के अँगूठे, पहली अँगुली, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, छोटी अँगुली पर ले जाएँ।
ऊर्जा को दायें पैर की छोटी अँगुली में बिल्कुल नीचे तक ले जाएँ।
शरीर के पूरे दाएँ भाग में ऊर्जा का अनुभव करें।
अनुभव करें कि शरीर का दायाँ भाग अधिक जीवन्त और शक्तिमान है, या शायद बाएँ भाग से अधिक बड़ा भी है।
अब हम शरीर के पूरे बाएँ भाग में ऊर्जा को घुमायेंगे।
बाएँ हाथ के अँगूठे से प्रारंभ करें।
पूरे अँगूठे के प्रति सजग हो जाएँ, उसके आधार से ऊपरी सिरे तक– उसका आकार, उसकी अस्थियाँ और जोड़, उसके अंदर की ऊर्जा।
सजगता को पहली अँगुली पर ले जाएँ, अनुभव करें कि सजगता के साथ ऊर्जा भी प्रवाहित हो रही है और पूरी पहली अँगुली को उसके सिरे तक भर रही है।
इसी प्रकार दूसरी, तीसरी, चौथी अँगुलियाँ।

हथेली, हथेली में ऊर्जा की गर्मी का अनुभव करें। इसे हथेली के पिछले भाग, कलाई, भुजा के निचले भाग, केहुनी, भुजा के ऊपरी भाग और कंधे में प्रवाहित होने दें।

कंधे, काँख, बगल, कमर और बाएँ नितंब में ऊर्जा का अनुभव करें। सजगता को बायीं जाँघ में ले जाएँ और जाँघ, घुटने, पिण्डली, टखने, एड़ी, तलवे के ऊपरी भाग और तलवे में ऊर्जा का अनुभव करें। तलवे के अंदर ऊर्जा का, उसकी संवेदना का अनुभव करें।

सजगता को दाएँ पैर के अँगूठे, पहली अँगुली, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, छोटी अँगुली पर ले जाएँ।

अनुभव करें कि बाएँ पैर की छोटी अँगुली पूरी तरह ऊर्जा से भर गयी है।

शरीर के पूरे बाएँ भाग में ऊर्जा का अनुभव करें।

शरीर के दोनों भागों में ऊर्जा के संतुलन का अनुभव करें।

अब हम अपनी सजगता और ऊर्जा को शरीर के पीछे के भाग में ले जाएँगे।

अपने दोनों पैरों की अँगुलियों के प्रति सजग हो जाएँ, अपनी सजगता को ऊर्जा तरंग के समान एड़ियों, पिण्डलियों, घुटनों के पीछे के भाग, जाँघों के पीछे के भाग, नितंबों, पीठ के धनुषाकार भाग, दोनों पुट्ठों, हाथों के पीछे के भाग, भुजाओं के पीछे के भाग, गर्दन के पिछले भाग, सिर के पिछले भाग, पूरे शरीर के पीछे के भाग में घुमाएँ।

पूरे सिर के प्रति सजग हो जाएँ।

यहाँ एक भिन्न प्रकार की ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ। सिर के ऊपरी भाग की सजगता, मानो वहाँ एक सूक्ष्म स्पंदन हो रहा हो, पूरा सिर शिथिल हो गया है, ललाट, बायीं भौंह, दायीं भौंह, भ्रूमध्य, सभी शिथिल हो गये हैं।

दायीं आँख का अनुभव करें, दायीं आँख के प्रति सजग हो जाएँ और इसे शिथिल हो जाने दें, आँख के चारों ओर छोटी पेशियों का अनुभव करें और उन्हें शिथिल हो जाने दें।

बायीं आँख का अनुभव करें, बायीं आँख के प्रति सजग हो जाएँ और इसे शिथिल हो जाने दें, आँख के चारों ओर छोटी पेशियों का अनुभव करें और उन्हें शिथिल हो जाने दें।

आँखों की ऊर्जा का अनुभव करें।

भ्रूमध्य के प्रति सजग हो जाएँ।

दोनों भौंहों के बीच के बिंदु को अनुभव करें।
सजगता को कुछ देर तक वहीं रखें और वहाँ पर ऊर्जा के स्पंदन का अनुभव करें। धीरे से अपनी सजगता के द्वारा उस बिंदु का स्पर्श करें।
उसके बाद अपनी सजगता और ऊर्जा को नाक की हड्डी से होते हुए नासिकाग्र तक जाने दें।
दायीं नासिका के प्रति सजग हो जाएँ, और अनुभव करें कि श्वास दायीं नासिका से अंदर जा रही है।
जब श्वास दायीं नासिका से अंदर और बाहर जाती है तब उसके तापमान का अनुभव करें।
कुछ क्षण श्वसन के दौरान श्वास लेने के साथ ऊर्जा के अंदर आने और श्वास छोड़ने के साथ तंत्रिकाओं के तनावमुक्त होने का अनुभव करें।
बायीं नासिका के प्रति सजग बन जाएँ, बायीं नासिका के द्वारा श्वास के अंदर आने और बाहर जाने पर उसके तापमान का अनुभव करें।
श्वास लेने के साथ ऊर्जा के अंदर आने और श्वास छोड़ने के साथ तंत्रिकाओं के तनावमुक्त होने का अनुभव करें।
अब दोनों नासिकाओं से अभ्यास करें, अनुभव करें कि श्वास लेने के साथ ऊर्जा अंदर जा रही है और श्वास छोड़ने के साथ तंत्रिकाओं का तनाव एवं मानसिक तनाव शरीर से बाहर निकल रहा है।
दाएँ कान की सजगता; कान का बाहर और अंदर का भाग, पूरा दायाँ कान।
बाएँ कान की सजगता; कान का बाहर और अंदर का भाग, पूरा बायाँ कान।
कानों की ऊर्जा की सजगता, खुले हुए और ग्रहणशील कान।
सजगता को मुँह की ओर ले जाएँ, मुँह की ऊर्जा का अनुभव करें।
ऊपरी ओंठ, निचला ओंठ, पूरा मुँह तनावमुक्त।
ठुड्ढी और जबड़े शिथिल।
पूरा चेहरा शिथिल, पूरा चेहरा शिथिल, पूरे चेहरे को शिथिल हो जाने दें।
अब सजगता और ऊर्जा को शरीर के सामने के भाग से नीचे की ओर ले जाएँ।
पूरे चेहरे, गले, हँसलियों, कंधों, पूरे दाएँ हाथ, पूरे बाएँ हाथ की सजगता।
पूरे वक्ष का, और श्वास के साथ वक्ष में होने वाली हलकी गति का अनुभव करें।

जब पूरक के साथ फेफड़े और पसलियाँ फैलती हैं तब मध्यपट, जो पसलियों और उदर को अलग करता है, उस पर दबाव पड़ता है। श्वास अंदर लें और ऊर्जा तथा वक्ष के फैलने का अनुभव करें।

जब आप श्वास बाहर छोड़ते हैं तब अनुभव करें कि सब कुछ शिथिल हो रहा है।

जब फेफड़ों की वायु कण्ठ के द्वारा बाहर निकलती है तब फेफड़े और पसलियाँ शिथिल हो जाती हैं तथा दबाव समाप्त हो जाता है।

कुछ श्वासों तक इस प्रक्रिया का अनुभव करें।

अब संपूर्ण उदर का और श्वास के साथ उदर की हलकी गति का अनुभव करें।

श्वास अंदर लेते समय अनुभव करें कि मध्यपट नीचे की ओर जाता है और आमाशय पर दबाव डालता है, जिससे नाभि ऊपर उठ जाती है।

श्वास छोड़ते समय अनुभव करें कि नाभि नीचे की ओर जाती है और आमाशय अपने स्थान पर लौट आता है।

सौर जालक में ऊर्जा के विस्तार और शिथिलन के प्रति सजग हो जाएँ।

सजगता और ऊर्जा को नितंबों, कूल्हों, कमर, जाँघों के ऊपरी भाग, जाँघों के अन्दरुनी भाग, घुटनों के ऊपरी भाग और पंजों के ऊपरी भाग में ले जायें।

शरीर के पूरे सामने के भाग का अनुभव करें।

सिर से पैर तक शरीर के पूरे सामने के भाग के प्रति सजगता।

शरीर के सामने के भाग, शरीर के पूरे सामने के भाग, शरीर के पिछले भाग, शरीर के पूरे दाएँ भाग, शरीर के पूरे बाएँ भाग, पूरे शरीर से निकलती हुई ऊर्जा की सजगता।

अवस्था 4: श्वास की सजगता

सामान्य श्वसन के प्रति सजग हो जाएँ।

नासिकाओं में इसका अनुभव करें।

जागते रहें और केवल श्वास के स्वाभाविक प्रवाह के प्रति सजग बने रहें।

पूरक करते समय अनुभव करें कि श्वास के साथ ऊर्जा अंदर की ओर प्रवाहित हो रही है और फिर सजगता का प्रयोग करते हुए उस ऊर्जा को भ्रूमध्य में ले जाएँ।

पूरक करते समय दोनों नासिकाओं के द्वारा ऊर्जा के अंदर की ओर प्रवाह का अलग-अलग अनुभव करें और यह भी अनुभव करें कि ऊर्जा ऊपर भ्रूमध्य की ओर प्रवाहित हो रही है।

जब आप रेचक करते हैं तब अनुभव करें कि भ्रूमध्य से ऊर्जा दोनों नासिकाओं द्वारा बाहर प्रवाहित हो रही है।

ऊर्जा श्वास के साथ चलती है, लेकिन आप ऊर्जा को श्वास से अलग अनुभव कर सकते हैं; जब आप पूरक करते हैं तब दोनों नासिकाओं से ऊर्जा भ्रूमध्य में जाती है और जब आप रेचक करते हैं तब भ्रूमध्य से ऊर्जा दोनों नासिकाओं के द्वारा बाहर प्रवाहित होती है।

जब आप श्वास अंदर लेते हैं तब आपका पूरा चेहरा, सिर और मस्तिष्क प्राण-ऊर्जा से परिपूर्ण हो उठते हैं और ऊर्जा भ्रूमध्य में पहुँच कर चारों ओर फैल जाती है।

जब आप श्वास बाहर निकालते हैं तब अनुभव करें कि हर प्रकार की थकान, दबाव, मानसिक तनाव बाहर निकल रहे हैं। इस अभ्यास को जारी रखें।

अब इस अभ्यास को छोड़ दें और अनुभव करें कि सहज श्वास फेफड़ों में प्रवेश कर रही है।

अनुभव करें कि श्वास नासिकाओं से प्रवेश करती है और नीचे फेफड़ों तक जाती है।

श्वास आपकी नाक से प्रवेश कर, गले से होती हुई सीधे फेफड़ों में जाती है, लेकिन अब अपनी ऊर्जा को भी सजगता के साथ वहाँ ले जा सकते हैं।

नासिकाओं के द्वारा लम्बे पूरक के प्रति, गले और फेफड़ों में जाती हुई श्वास के प्रति और सम्पूर्ण वक्ष स्थल के विस्तार के प्रति सजग बन जाएँ।

रेचक के साथ विश्रान्ति का अनुभव करें।

कुछ देर के लिए श्वसन प्रक्रिया के प्रति सजग रहें और अनुभव करें कि श्वास के साथ ऊर्जा वक्ष प्रदेश में प्रवेश कर रही है।

श्वास के साथ पसलियों में होने वाली हलचल का अनुभव करें।

श्वास के साथ फेफड़ों में होने वाले लयबद्ध सूक्ष्म प्रसार और संकुचन का अनुभव करें।

हृदय की धड़कन को अनुभव करें।

श्वास की लम्बी लय और हृदय की धड़कन के लघु स्पंदनों का अनुभव करें।

अब परिदृश्य में थोड़ा परिवर्तन कर दें।
अब ऐसा अनुभव करें मानो आप सीधे हृदय से ही श्वास ले रहे हैं और ऊर्जा हृदय तथा छाती में भरती जा रही है और आपकी भावनाओं को तरोताज़ा करती जा रही है।
जब आप रेचक करते हैं तब अनुभव करें मानो आप सीधे हृदय से ही रेचक कर रहे हैं, जिससे भावनात्मक तनाव, थकान और मनोव्यथायें बाहर निकलती जा रही हैं।
कुछ देर वक्ष प्रदेश में श्वास के साथ ऊर्जा के अंदर आने और बाहर जाने का पूरी सजगता के साथ अभ्यास करें।
अब सजगता को वहाँ से हटा लें, और पूरे उदर में ऊर्जा का तथा श्वास के साथ उदर में होने वाली हलकी गति का अनुभव करें।
अनुभव करें कि श्वास लेने के साथ मध्यपट नीचे की ओर जाकर अमाशय पर दबाव डालता है जिससे नाभि ऊपर की ओर उभर जाती है।
अनुभव करें कि श्वास के बाहर निकलने पर नाभि नीचे चली जाती है और अमाशय अपने स्थान पर आ जाता है।
अब परिदृश्य को थोड़ा बदल दें।
जब आप श्वास लेते हैं तब अनुभव करें कि उदर ऊपर की ओर उठ रहा है और ऊर्जा सीधे नाभि के द्वारा अंदर प्रवेश कर रही है।
रेचक करते समय अनुभव करें कि आप सीधे नाभि के द्वारा श्वास छोड़ रहे हैं।
पूरे उदर प्रदेश में ऊर्जा के प्रसार और संकुचन के प्रति सजग बन जाएँ।
अनुभव करें कि पूरा सौर जालक अनुप्राणित हो रहा है।
अनुभव करें कि पाचन शक्ति में वृद्धि हो गयी है, अनुभव करें कि आप जो कुछ भी खाते हैं, उसे पचा सकते हैं।
कुछ देर के लिए उदर प्रदेश में ऊर्जा का, श्वास की शक्ति का अनुभव करें।
अब श्वास पर से ध्यान हटा लें और पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
पूरे शरीर के आकार का अनुभव करें, और साथ ही अनुभव करें कि पूरा शरीर श्वास ले रहा है, पूरा शरीर ऊर्जा से भर गया है।
मानो आप त्वचा के रोम छिद्रों से श्वास ले रहे हैं, पूरे शरीर के द्वारा श्वसन के प्रति सजग हो जाएँ।

जब आप त्वचा के रोम छिद्रों के द्वारा श्वास लेते हैं तब अनुभव करें कि ऊर्जा का प्रसार हो रहा है।

जब आप श्वास छोड़ते हैं तब अनुभव करें कि आपका शरीर तनावमुक्त होकर अपने सामान्य आकार में वापस आ रहा है। जब आप श्वास ले रहे हैं तब अनुभव करें कि ऊर्जा का आपके भौतिक शरीर से, त्वचा से थोड़ा बाहर प्रसार होता है, और श्वास बाहर निकालने पर ऊर्जा क्षेत्र संकुचित होकर आपके भौतिक शरीर में समा जाता है।

आप इसका अनुभव कर सकते हैं या आप इसे देख सकते हैं।

इस अभ्यास को कुछ देर जारी रखें।

विश्रान्त रहें, कोई परिवर्तन नहीं लाना है, केवल देखते जाएँ।

इस बात के प्रति सजग रहें कि आप अपने शरीर की, जोकि आपका वाहन है, सूक्ष्म ऊर्जाओं का अनुभव कर रहे हैं।

सजग रहें कि आप अपने अस्तित्व के अधिक सूक्ष्म पक्षों का अवलोकन कर रहे हैं और अनुभव करें कि आपमें शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक स्तरों पर ताजगी एवं स्फूर्ति आ गयी है।

अवस्था 5: अभ्यास की समाप्ति

अब अपनी सजगता को प्राणिक शरीर से भौतिक शरीर पर ले आएँ।

शरीर के आकार और ठोसता के प्रति सजग बन जाएँ।

आप जिस कमरे में अभ्यास कर रहे हैं उसके प्रति और वहाँ उपस्थित व्यक्तियों के प्रति सजग हो जाएँ।

सजग रहें कि आप प्राण निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं।

साक्षी भाव से ध्वनियों को सुनते हुए दिन के समय के प्रति सजग हो जाएँ।

मुँह के अंदर किसी प्रकार के स्वाद या आस-पास किसी प्रकार की सुगंध का अनुभव हो रहा हो, तो उसके प्रति सजग बन जाएँ।

अपने शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक अनुभवों के प्रति सजग हो जाएँ।

शिथिलीकरण के जिस आसन में आपका शरीर स्थित है उसके प्रति, शरीर की ठोसता के प्रति, विभिन्न अंगों की स्थिति के प्रति, पीठ और सिर के प्रति सजग बन जाएँ।

शरीर और जमीन के बीच सम्पर्क का, शरीर जमीन को जिन बिन्दुओं पर छू रहा है उन सभी स्पर्श बिन्दुओं का अनुभव करें।

पूरे शरीर की सजगता।
ध्यान दें कि आप पूरी तरह जगे हुए और अपने संपूर्ण शरीर के प्रति सजग हैं।
कुछ गहरी श्वास लें और शरीर को धीरे-धीरे हिलाना आरंभ करें।
हाथ-पैर की अँगुलियों को धीरे-धीरे हिलाएँ, सिर को दोनों ओर घुमाएँ।
पूरे शरीर को उसी प्रकार ताने जिस प्रकार प्रात: उठने पर करते हैं। यदि आप चाहें तो पीठ को थोड़ा मोड़ें।
यदि आप शवासन में हैं तो एक ओर करवट लेकर धीरे से उठ कर बैठ जाएँ।
आँखों को बंद ही रखें।
अनुभव करें कि पूरा शरीर तनावमुक्त हो गया है और ऊर्जा में स्थिरता तथा ताज़गी आ गयी है।
प्राण निद्रा का अभ्यास पूरा हुआ।
दोनों हथेलियों को गर्माहट आने तक आपस में रगड़ें और उन्हें धीरे से बंद आँखों पर रखें, आँखों में उनकी गर्मी का और उनमें प्रवेश कर रही ऊर्जा का अनुभव करें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 2: पंच प्राण की सजगता

अवस्था 1: तैयारी

प्राण निद्रा के अभ्यास के लिए तैयार हो जाएँ।
अभ्यास आरंभ करने से पूर्व धातु से बनी वस्तुओं को शरीर से उतार दें और वस्त्रों को ठीक कर लें।
शरीर को शवासन की स्थिति में ले आयें और आवश्यक हो तो अपनी शारीरिक स्थिति को व्यस्थित कर लें।
शरीर को आरामदायक स्थिति में लाने के लिए पर्याप्त समय लें, पीठ सीधी हो, हाथ शरीर के बगल में थोड़ी दूरी पर हों और दोनों पैर एक-दूसरे से अलग हों।
यह सुनिश्चित कर लें कि पूरे अभ्यास के दौरान शरीर में पर्याप्त गर्मी/ठण्ढक रहेगी।

अवस्था 2: शिथिलीकरण

जमीन पर स्थित अपने शरीर की ठोसता का अनुभव करें।

यदि आवश्यक हो तो अपनी शारीरिक स्थिति में आवश्यक परिवर्तन कर लें ताकि सम्पूर्ण अभ्यास के दौरान आप स्थिर और आरामपूर्वक रह सकें।

अपने वस्त्रों और शरीर पर डाली गयी चादर के प्रति सजग हो जाएँ।

शरीर को आवरित करने वाली त्वचा के प्रति सजग हो जाएँ।

त्वचा के एक ओर शरीर की गर्मी और ऊर्जा का तथा दूसरी ओर खाली स्थान का अनुभव करें।

सिर, गर्दन, कंधों, दाएँ हाथ, बाएँ हाथ और मेरुदण्ड में होने वाली किसी भी संवेदना के प्रति सजग हो जाएँ।

वक्ष, वक्ष के दायीं ओर, वक्ष के बायीं ओर, पूरे वक्ष में होने वाली किसी भी संवेदना के प्रति सजग हो जाएँ, वक्ष की ऊर्जा के प्रति सजग बन जाएँ।

उदर के ऊपरी भाग, उदर के निचले भाग, सम्पूर्ण उदर और उसकी ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरे धड़ और उसमें होने वाली संवेदना के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरे दाएँ पैर और उसके तलवे, पूरे बाएँ पैर और उसके तलवे के प्रति सजग हो जाएँ, पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

एक बार फिर से अपने शरीर का अवलोकन कर लें और अंतिम बार शारीरिक स्थिति में जो परिवर्तन करना हो कर लें, और उसके बाद प्राण विद्या के पूरे अभ्यास में स्थिर रहने का संकल्प लें।

भौतिक शरीर इतनी आरामदायक स्थिति में रहे कि उससे आपको किसी प्रकार की बाधा न पहुँचे, और आप शरीर में व्याप्त प्राणमय कोश की सूक्ष्म ऊर्जाओं के प्रति सजग हो सकें।

अवस्था 3: श्वास की सजगता

अब सजगता को नासिकाओं में आती-जाती श्वास पर ले आएँ।

नासिकाओं में श्वास का अनुभव करें और श्वास के तापमान के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरक और रेचक करते समय श्वास के तापमान में अंतर का अनुभव करें।

हर श्वसन में अनुभव करें कि पूरक के साथ नयी ऊर्जा अंदर प्रवेश कर रही है और रेचक के साथ आप तनावमुक्त हो रहे हैं।
अनुभव करें कि रेचक के साथ बिना किसी प्रयास के तनाव और विषाणु निष्कासित हो रहे हैं।
इस अभ्यास को जारी रखें। नासिकाओं में सहज-स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग रहें और अंदर आती श्वास के साथ ऊर्जा के प्रवेश करने तथा बाहर जाती श्वास के साथ तनावमुक्त होने के अनुभव के प्रति सचेत रहें।

अवस्था 4: सजगता को घुमाना

अब पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
अनुभव करें कि पूरा शरीर जमीन पर विश्राम की अवस्था में है।
अब सजगता को शरीर में चारों ओर घुमाने के लिए तैयार हो जाएँ।
शरीर के जिस अंग का नाम लिया जाए, अंदर से उसका अनुभव करें और सजगता को निर्देशों की गति के साथ एक अंग से दूसरे अंग पर घुमाते जाएँ।
ऊर्जा भी सजगता का अनुसरण करेगी और शरीर के विभिन्न अंगों को ताजगी तथा स्फूर्ति प्रदान करती जायेगी।
दाएँ हाथ के अँगूठे से आरंभ करें।
अँगूठे के ऊपरी सिरे से आधार तक पूरे अँगूठे के प्रति सजग बन जाएँ, अँगूठे के अंदर की ऊर्जा और उससे थोड़ा बाहर की ओर निकलती हुई ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।
अँगूठे से गर्मी और ऊर्जा निकल कर उसके चारों ओर कुछ दूर तक फैल रही है, इसके प्रति सजग हो जाएँ।
अब सजगता को धीरे से पहली अँगुली पर ले जाएँ।
अनुभव करें कि सजगता के साथ प्रवाहित होती हुई ऊर्जा पहली अँगुली को सिरे तक भर रही है।
सजगता को दूसरी अँगुली में ले जाएँ और उसके सिरे तक ऊर्जा के प्रवाह का अनुभव करें, इसी प्रकार तीसरी, चौथी अँगुलियों में भी करें।
हथेली, हथेली से निकलती हुई ऊर्जा का अनुभव करें, हथेली में ऊर्जा की गर्मी का अनुभव करें।

सजगता को हाथ के पीछे के भाग पर ले जाएँ, इस ऊर्जा को हाथ के पीछे के भाग, कलाई, भुजा के आगे के भाग, केहुनी, भुजा के ऊपर के भाग और कंधे में प्रवाहित होने दें, मानो आप भुजा को एक जलता हुए लैम्प दिखा रहे हों ।

पूरे कंधे में ऊर्जा के प्रवाह का अनुभव करें।

यदि कंधे में कड़ापन है तो उसे शिथिल करें।

काँख, छाती के बगल, कमर और नितंब के प्रति सजग हो जाएँ।

सजगता को दायीं जाँघ में ले जाएँ और जाँघ से लेकर घुटने, पिण्डली, टखने, एड़ी, पंजे और तलवे में ऊर्जा का अनुभव करें।

सजगता और ऊर्जा को दाएँ पैर के अँगूठे, पहली, दूसरी, तीसरी और चौथी अँगुलियों पर ले जाएँ।

ऊर्जा को दाएँ पैर की छोटी अँगुली तक ले जाएँ।

शरीर के पूरे दाएँ भाग में ऊर्जा का अनुभव करें।

ध्यान दें कि शरीर का दायाँ भाग अधिक जीवन्त और ताज़गी भरा प्रतीत हो रहा है। शरीर के पूरे दाएँ भाग में ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।

शरीर के बाएँ भाग में ऊर्जा प्रवाहित करने के लिए अब सजगता को शरीर के बायीं ओर ले जाएँ।

सजगता को बाएँ हाथ के अँगूठे पर ले जाएँ।

पूरे अँगूठे के प्रति सजग हो जाएँ– ऊपर से नीचे तक, उसके अंदर की ऊर्जा और उससे उत्पन्न आभामण्डल जो अँगूठे से कुछ दूर तक फैल रहा है, इन सबके प्रति सजग हो जाएँ।

सजगता को पहली अँगुली पर ले जाएँ, अनुभव करें कि ऊर्जा सजगता के साथ प्रवाहित होकर अँगुली को उसके सिरे तक भर रही है।

ऊर्जा को दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली तक प्रवाहित होने दें।

हाथ और हथेली में ऊर्जा की गर्मी के प्रति सजग हो जाएँ।

इसे हाथ के पिछले भाग, कलाई, हाथ के नीचे के भाग, केहुनी, भुजा और कंधे में प्रवाहित होने दें।

कंधे में ऊर्जा का अनुभव करें।

पूरे कंधे को शिथिल होने दें, पेशियों को शिथिल होने दें, किसी प्रकार का तनाव हो तो उसे दूर करें। सजगता को काँख, छाती के बगल, कमर और नितंब पर ले जाएँ।

पूरी बायीं जाँघ, घुटने, पिण्डली, टखने, एड़ी, पंजे और तलवे में ऊर्जा का अनुभव करें।
अनुभव करें कि ऊर्जा पैर के अँगूठे, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली और छोटी अँगुली में प्रवाहित हो रही है।
ऊर्जा को बाएँ पैर की छोटी अँगुली तक ले जाएँ।
ध्यान दें कि आप जगे हुए हैं और बाएँ पैर की छोटी अँगुली में ऊर्जा के प्रति सजग हैं।
शरीर के पूरे बाएँ भाग में ऊर्जा का अनुभव करें।
अनुभव करें कि शरीर के दोनों भाग ऊर्जा से परिपूर्ण और संतुलित हैं।
अब हम लोग सजगता और ऊर्जा को शरीर के पीछे के भाग की ओर ले जायेंगे।
एड़ियों, पिण्डलियों, घुटनों के पीछे के भाग, जाँघ के पीछे के भाग, नितंबों, पीठ की वक्रता और पुट्ठों के प्रति सजग हो जाएँ।
पूरे मेरुदण्ड के प्रति सजग हो जाएँ– मेरुदण्ड आधार से आरंभ कर उसके स्वाभाविक घुमाव पर से होते हुए सजगता को गर्दन के पीछे के भाग तक ले जाएँ।
भुजाओं के पीछे के भाग, हाथों के पीछे के भाग और सिर के पीछे के भाग का अनुभव करें।
शरीर के पूरे पीछे के भाग में होने वाली संवेदनाओं के प्रति सजग हो जाएँ।
पूरे सिर के प्रति सजग हो जाएँ, पूरा सिर शिथिल हो गया है।
सजगता को सिर के ऊपरी भाग में ले जाएँ।
ललाट की सजगता, ललाट शिथिल हो गया है।
बायीं भौंह, दायीं भौंह की वक्रता का अनुभव करें।
भ्रूमध्य के प्रति और वहाँ पर होने वाले ऊर्जा के स्पंदन के प्रति सजग हो जाएँ।
दायीं आँख के प्रति सजग हो जाएँ और इसे शिथिल होने दें, आँख के चारों ओर की पेशियों का अनुभव करें और उन्हें शिथिल होने दें।
बायीं आँख का अनुभव करें, बायीं आँख के प्रति सजग हो जाएँ, उसके चारों ओर की पेशियों का अनुभव करें और उन्हें शिथिल होने दें।
आँखों में ऊर्जा का अनुभव करें।
नासिकाग्र, बायीं नासिका, दायीं नासिका, दोनों नासिकाओं के प्रति सजग हो जाएँ।

अनुभव करें कि श्वास के साथ ऊर्जा अंदर प्रवेश कर रही है और श्वास के बाहर निकलने पर शिथिलता आ रही है।

नासिकाओं की संवेदनशीलता का अनुभव करें, श्वास-प्रश्वास के साथ ऊर्जा के अंदर आने और बाहर जाने का अनुभव करें।

बाएँ कान की सजगता, कान का बाहरी और अंदर का भाग, दायाँ कान, बाहर, अंदर, कान में ऊर्जा की सजगता।

मुँह के प्रति सजग हो जाएँ, ऊपरी ओठ, निचला ओठ, दाँत और जीभ मुँह के अंदर शिथिल।

ठुड्ढी और जबड़े तनावमुक्त।

मुँह की ऊर्जा।

पूरा चेहरा शिथिल, पूरा चेहरा तनावमुक्त, पूरे चेहरे को शिथिल हो जाने दें।

अब सजगता और ऊर्जा को शरीर के सामने के भाग में नीचे की ओर ले जाएँ। पूरे चेहरे, गले, हँसलियों, कंधों, पूरे दाएँ हाथ और दायीं हथेली में ऊर्जा की सजगता।

पूरे बाएँ हाथ और बायीं हथेली में ऊर्जा का अनुभव करें।

पूरी छाती और उसमें श्वास के साथ होने वाली हल्की गति का अनुभव करें।

श्वास अंदर लेने के साथ फेफड़ों और पसलियों तथा ऊर्जा के विस्तार का, और श्वास बाहर निकलने के साथ शिथिलता का अनुभव करें।

पूरे उदर तथा श्वास के साथ उदर में होने वाली मंद गति के प्रति सजग हो जाएँ। अनुभव करें कि श्वास लेने पर सौर जालक की ऊर्जा में वैसे ही हलकी-सी चमक आ रही है जैसे अग्नि पर फूंक मारने से वह दमक उठती है।

सिर से पैर तक शरीर के सामने वाले भाग की सजगता। शरीर के सामने वाले भाग से निकलने वाली ऊर्जा की सजगता।

अब शरीर के संपूर्ण पीछे वाले भाग के प्रति और उससे निकलने वाली भिन्न प्रकार की ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।

अनुभव करें कि ऊर्जा पूरे शरीर में व्याप्त है और उससे बाहर निकल रही है।

अवस्था 5: पंच प्राण की सजगता

अब सजगता को श्वास पर ले आएँ।

नासिकाओं में श्वास के प्रवाह और श्वास के साथ गतिमान ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।

श्वास नाक से अंदर प्रवेश कर गले से होती हुई सीधी फेफड़ों तक चली जाती है।

कुछ श्वासों तक इसके प्रति सजग रहें।

अब अगले पूरक में ऊर्जा और सजगता को भ्रूमध्य तक ले जाएँ।

जब आप श्वास अंदर ले रहे हैं तब अनुभव करें कि एक अलग ऊर्जा की धारा नासिकाओं में प्रवेश कर रही है और भ्रूमध्य तक प्रवाहित हो रही है।

उसके बाद जब आप श्वास बाहर छोड़ रहे हैं तब अनुभव करें कि ऊर्जा की धारा भ्रूमध्य से निकल कर नासिकाओं के द्वारा बाहर की ओर प्रवाहित हो रही है।

हम लोग ऊर्जा के प्रति प्राय: सजग नहीं रहते हैं, यह श्वास के साथ ही गतिमान रहती है। लेकिन अभी आप अनुभव करें कि श्वास से भिन्न ऊर्जा श्वास के साथ नासिकाओं से होती हुई भ्रूमध्य तक जा रही है और भ्रूमध्य से निकल कर नासिकाओं से होती हुई श्वास के साथ बाहर निकल रही है।

जब आप श्वास अन्दर ले रहे हैं तब ऊर्जा भ्रूमध्य में पहुँच कर फैल रही है और पूरा चेहरा, सिर और मस्तिष्क ऊर्जावान हो रहे हैं।

जब आप श्वास बाहर छोड़ रहे हैं तब अनुभव करें कि हर प्रकार की थकान, तनाव और मानसिक दबाव बाहर निकल रहे हैं।

इस अभ्यास को 15 श्वासों तक करते रहें।

अब इस अभ्यास को बंद कर दें।

प्राण– यह ध्यान रखें कि प्राणमय कोश पाँच भागों में विभक्त है।

प्राण का क्षेत्र मध्यपट और कण्ठ के बीच है।

सजगता को नीचे मध्यपट में ले जाएँ।

अनुभव करें कि सूक्ष्म ऊर्जा मध्यपट से ऊपर वक्ष प्रदेश से होती हुई कण्ठ की ओर जा रही है।

पूरक या रेचक से असम्बद्ध यह ऊर्जा कण्ठ की ओर आरोहण करती है।

कुछ देर ऊर्जा के इस प्रवाह के प्रति सजग रहें।

यह शरीर के ऊपरी भाग में प्राण का प्रवाह है।

अपान– अब अपान के प्रति सजग हो जाएँ।

अपान नाभि से नीचे की ओर श्रोणि तक अवरोहण करता है।

अब नाभि के प्रति सजग हो जाएँ।

अनुभव करें कि सूक्ष्म ऊर्जा नाभि से मूलाधार की ओर अवरोहण कर रही है।
पूरक या रेचक से सम्बद्ध हुए बिना यह ऊर्जा अवरोहण करती है।
कुछ देर इस ऊर्जा के प्रति सजग रहें।
यह शरीर के निचले भाग में अपान का प्रवाह है।

समान– अब नाभि प्रदेश में ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।
समान का ऊर्जा क्षेत्र प्राण और अपान के ऊर्जा क्षेत्र के बीच स्थित है।
यह अत्यंत गतिशील होता है और पाचन पर इसका नियंत्रण रहता है।
यहाँ पर यह ऊर्जा एक ओर से दूसरी ओर, पेण्डुलम के समान दाएँ से बाएँ, बाएँ से दाएँ झूलती रहती है।
कुछ देर समान के प्रवाह पर ध्यान दें।

उदान– अब समान से अपनी सजगता को हटा लें, हाथों और पैरों के प्रति सजग हो जाएँ।
पूरे दाएँ हाथ का अनुभव करें।
दाएँ कंधे से निकल कर उदान का सर्पिल प्रवाह पूरे दाएँ हाथ का चक्कर लगाते हुए अँगुलियों के छोरों तक पहुँचता है।
सजगता को दाएँ हाथ में ले जाएँ और अनुभव करें कि उदान कंधे से अँगुलियों के छोरों तक इसे घेर रहा है।
अब अपनी सजगता को बाएँ कंधे से अँगुलियों के छोरों तक ले जाएँ।
उदान पूरे बाएँ हाथ को घेर लेता है, उसका सर्पिल प्रवाह कंधे से अँगुलियों के छोरों तक पूरे बाएँ हाथ को घेर रहा है।
इसका अनुभव करें।
सजगता को दाएँ पैर में ले जाएँ।
श्रोणि से पैर की अँगुलियों के छोरों तक पूरा दायाँ पैर उदान की ऊर्जा के सर्पिल प्रवाह से घिरा हुआ है।
ऊर्जा वहाँ पर है, केवल उसका अनुभव करें।
अब बाएँ पैर के प्रति, उसको घेरे हुए और उसके अंदर व्याप्त ऊर्जा के प्रति, उदान की ऊर्जा के सर्पिल प्रवाह के प्रति सजग हो जाएँ।
अब सजगता को गर्दन और गले में ले जाएँ।
सिर और गर्दन के प्रति सजग हो जाएँ।
यहाँ भी उदान की सूक्ष्म ऊर्जा गर्दन के आधार से सिर के ऊपरी सिरे तक सर्पिल धारा के रूप में प्रवाहित होती है।

कुछ देर इसका अनुभव करें।
सजगता को घुमाएँ, ऊर्जा सजगता के साथ-साथ जाएगी।
सजगता को गर्दन और सिर के क्षेत्र में रखें, और वहाँ पर उदान की ऊर्जा का अनुभव करें।

व्यान– इन चार प्राणों के पीछे, पृष्ठभूमि की भाँति शरीर की आधारभूत ऊर्जा स्थित होती है। पूरे शरीर में व्यान ऊर्जा समेकित रूप में फैली हुई रहती है।
व्यान पूरे शरीर में व्याप्त रहता है। यह आधारभूत शक्ति है, एक आदर्श स्वरूप है जिसके अनुसार अन्य ऊर्जाएँ कार्य करती हैं।
पूरे शरीर का अनुभव करें। पूरा शरीर ऊर्जा और प्रकाश से भरा हुआ है। यह एक गत्यात्मक, नियंत्रित ऊर्जा का क्षेत्र है।
पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ। जब आप श्वास लेते हैं तब आपको ऊर्जा के विस्तार का और श्वास छोड़ने पर शरीर के शिथिल होकर अपने सामान्य आयाम में लौट आने का अनुभव हो सकता है।
कुछ देर इस अनुभव को कायम रखें।
शिथिल रहना है, कोई परिवर्तन नहीं करना है, केवल व्यान ऊर्जा क्षेत्र का अवलोकन करना है।
अनुभव करें कि सजगता को एकाग्र करने से आपकी ऊर्जा जीवन्त हो उठी है, उसमें नयापन आ गया है।
स्वयं में शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक स्तर पर नवीनता का अनुभव करें।

अवस्था 6: अभ्यास की समाप्ति

अब प्राणिक शरीर की सजगता से भौतिक शरीर की सजगता पर लौट आएँ।
आप जहाँ पर हैं उस स्थान के प्रति सजग बन जाएँ और इस बात के प्रति भी सजग हो जायें कि आप प्राण निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं।
आप जिस कमरे में अभ्यास कर रहे हैं उसके प्रति और उस कमरे में अपनी स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।
साक्षी भाव से ध्वनियों को सुने।
गंध या मुँह के अंदर किसी भी स्वाद के प्रति सजग हो जाएँ।
आप कैसा अनुभव कर रहे हैं, इसके प्रति सजग हो जाएँ।

अपनी पसंद के शिथिलीकरण आसन में स्थित अपने शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
अपने शरीर के ठोसपन, अंगों की स्थिति, पीठ और सिर के प्रति सजग हो जाएँ।
शरीर और जमीन के बीच सम्पर्क का अनुभव करें।
अपने शरीर और जमीन के बीच सभी सम्पर्क बिन्दुओं के प्रति सजग बन जायें।
शरीर की ऊर्जा और जमीन की कठोरता का अनुभव करें।
सम्पूर्ण शरीर की सजगता।
अभ्यास को समाप्त करने के लिए तैयार हो जाएँ।
शरीर को हिलाना आरंभ करें।
अँगुलियों को धीरे-धीरे हिलाएँ, सिर को एक ओर से दूसरी ओर घुमाएँ।
इस बात पर ध्यान दें कि आप पूरी तरह बहिर्मुख हो चुके हैं।
पीठ को थोड़ा ताने और धीरे से उठ कर बैठ जाएँ।
प्राण निद्रा का अभ्यास पूरा हुआ।
यदि आप चाहें तो हथेलियों को आपस में रगड़ कर धीरे से आँखों पर रखें और जब आप तैयार हों तब आँखों को धीरे से खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्



11

प्राण का जागरण एवं संचार

मणिपुर चक्र में प्राण का जागरण

अभ्यास 1: प्राण तथा अपान का विलय

प्राण का संचार

अभ्यास 2: अतीन्द्रिय पथों में प्राण का संचार
अभ्यास 3: प्राण के मानस-दर्शन के साथ अजपाजप
अभ्यास 4: पिंगला नाड़ी में प्राण का संचार
अभ्यास 5: इड़ा एवं पिंगला नाड़ी में प्राण का संचार

मणिपुर में प्राण का जागरण

मणिपुर चक्र नाभि के ठीक पीछे मेरुदण्ड में स्थित होता है। इसका सम्बन्ध सौर ऊर्जा और प्राण शक्ति से होता है। यह तब जाग्रत होता है जब प्राण एवं अपान की विरोधी शक्तियों का समान में विलय होता है। विज्ञान भैरव तंत्र (श्लोक 64) के अनुसार–

वायुद्वयस्य संघट्टादंतवार् बहिरंतत: ।
योगी समत्वविज्ञानसमुद्गमनभाजनम ॥

शरीर के अंदर या बाहर दोनों वायुओं (प्राण एवं अपान) के विलय से योगी संतुलन प्राप्त करता है और चेतना की समुचित अभिव्यक्ति के योग्य हो जाता है।

प्राण सामान्यत: आरोहण करने वाली शक्ति है जो नाभि और कण्ठ के बीच स्थित होती है, और अपान सामान्यत: अवरोहण करने वाली शक्ति है जो नाभि और मूलाधार के बीच स्थित होती है। तांत्रिक एवं यौगिक अभ्यासों के द्वारा इन्हें नियंत्रित एवं संचालित किया जा सकता है। इसके लिए अनेक विधियाँ हैं ('प्राण एवं प्राणायाम', पृष्ठ संख्या 54-55 देखें)। प्राण विद्या के अंतर्गत विपरीत दिशाओं में चलने वाली प्राण एवं अपान शक्तियों की दिशा को श्वास, एकाग्रता और मानस-दर्शन के द्वारा परिवर्तित किया जा सकता है। इस अध्याय का यह पहला अभ्यास है।

प्राण का संचार

दूसरा भाग नाड़ियों पर केन्द्रित है, जिसमें प्राण को जाग्रत किया जाता है तथा उसके अनुभव को गहन बनाया जाता है। प्राण का संचार जिन नाड़ियों के द्वारा होता है, वे हैं इड़ा, पिंगला एवं सुषुम्ना। नाड़ियों के माध्यम से प्राण की सजगता और संचार का आरंभ और अंत मूलाधार चक्र से होता है, जो कि कुण्डलिनी का स्थान है। गहन एकाग्रता के साथ प्राण के संचार से प्रचुर मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होती है। सजगता एवं श्वास की गति के अतिरिक्त प्राण पर एकाग्रता एवं उसके मानस-दर्शन से नाड़ियों तथा चक्रों का शुद्धिकरण होता है और उसका सूक्ष्म बोध विकसित होता है। इसके द्वारा कोशों के बीच सामंजस्य और तालमेल उत्पन्न होता है। जब इनमें तालमेल हो जाता है तब साधक बाह्य अनुभवों की सीमा को पार कर आंतरिक अनुभवों के क्षेत्र में प्रवेश कर जाता है। इन विधियों का अभ्यास कुछ महीनों तक करना चाहिए जब तक कि जाग्रत प्राण का वास्तविक अनुभव न हो जाए।



मणिपुर चक्र में प्राण का जागरण

अभ्यास 1: प्राण तथा अपान का विलय

अवस्था 1: तैयारी

बैठें या लेट जाएँ, यह देख लें कि आप आराम की स्थिति में हैं।
अपने शरीर की स्थिति को ठीक कर लें ताकि अभ्यास के दौरान आपको हिलना नहीं पड़े।
यह सुनिश्चित कर लें कि शरीर में कोई तनाव न हो या आपका कम्बल कहीं पर ऊँचा-नीचा न हो।
यदि आपने कोई कसा हुआ वस्त्र पहन रखा है तो उसे या तो ढीला कर लें या उतार दें।
यदि आपने धातु की बनी कोई वस्तु पहनी हुई है तो उसे उतार दें।
अब मानसिक रूप से अपने शरीर को सिर से पैर तक शिथिल कर लें।
अपनी सजगता को धीरे-धीरे शरीर के विभिन्न भागों में यह देखने के लिए घुमाएँ कि कहीं कोई तनाव तो शेष नहीं रह गया है, यदि ऐसा है तो उसे दूर कर लें– सिर, चेहरे की मांसपेशियाँ, गर्दन, कंधे, पीठ, छाती, उदर, भुजाएँ, हाथ, नितंब, पैर और तलवे।

अवस्था 2: अंतराकाश

जब शरीर शान्त और शिथिल हो जाये, तब चेतना को अंतर्मुख कर लें और शरीर का आंतरिक निरीक्षण करें।
शरीर की मांसपेशियों, कंकाल या आंतरिक अवयवों का मानस-दर्शन नहीं करना है।
एक रिक्त स्थान के रूप में, बिल्कुल खोखले शरीर की सजगता विकसित करने का प्रयास करें। एक खाली खोल के रूप में शरीर का अनुभव करें; अंदर केवल खाली स्थान है।
पैरों की अँगुलियों तक शरीर के प्रत्येक भाग में रिक्त स्थान की सजगता को विकसित करते जाएँ।
शरीर के अंदर इस आकाश को देखें।
इस सूक्ष्म अंतराकाश का अनुभव करें।

शारीरिक रूप से स्वयं के खाली होने का अनुभव करें।

सजगता को क्रम से शरीर के प्रत्येक अंग की ओर प्रेषित करें और सम्पूर्ण आकाश के प्रति सजग हो जाएँ– दाएँ पैर की सजगता और दाएँ पैर के अंदर का आकाश; बायाँ पैर और इसके अंदर का आकाश; दायीं भुजा और अंदर का आकाश; बायीं भुजा जहाँ केवल शून्य है; पूरा धड़ और धड़ के अंदर का शून्य; सिर और सिर के अंदर का शून्य।

शरीर के अंदर के आकाश की समरूप सजगता को विकसित करते जाएँ।

अवस्था 3: पंच प्राण का मानस-दर्शन

पूरे शरीर में व्याप्त व्यान ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।

शरीर के प्रत्येक भाग में प्रकाश रेखाओं के रूप में तेजी से गतिमान व्यान का अनुभव या मानस-दर्शन करें, जो पूरे शरीर में सिर से पैरों की अंगुलियों तक व्याप्त है।

यह तात्कालिक मानस-दर्शन और अनुभूति की प्रक्रिया होनी चाहिए।

अपनी सजगता को अंतर्मुखी बनाये रखें और अपनी एकाग्र सजगता को बढ़ाते जायें।

सर्वव्यापी प्राण-शक्ति, व्यान की अनुभूति को बनाये रखें, जो पूरे शरीर में प्रकाश कणों के रूप में इधर से उधर विचरण कर रही है। संपूर्ण शरीर में इस प्राण का अति सूक्ष्म गति के रूप में अनुभव करने का प्रयास करें।

अब शरीर के अग्रांगों– पैर, हाथ, गर्दन और सिर में उदान के प्रति सजग हो जाएँ।

इस प्राण को दक्षिणावर्त घूमते ऊर्जा के सर्पिल छल्लों या प्रकाश के छल्लों के रूप में देखें।

नितंबों से नीचे पैर की अंगुलियों तक, कंधों से नीचे हाथ की अंगुलियों तक और गले से सिर तक उदान की सजगता को विकसित करें।

ऊर्जा के इन छल्लों को दक्षिणावर्त दिशा में तीव्र गति से घूमते हुए देखें।

इस अनुभव को तीव्र बनायें; तत्काल मानस-दर्शन करें, तत्क्षण अनुभव करें, शरीर के अग्रांगों (पैर, हाथ, गर्दन और सिर) में ऊर्जा की निरंतर सर्पिल गति की तात्कालिक सजगता।

अब उदर के ऊपरी भाग में मध्यपट और नाभि के बीच समान के क्षेत्र पर एकाग्रता लाएँ।

बगल की ओर गतिमान समान की ऊर्जा का मानस-दर्शन करें।
कमर के बायें से दायें और दायें से बायें चलने वाली प्रकाश तरंगों का करघे पर तीव्र गति से चलने वाली भरनी के रूप में अनुभव करें।
यह अनुभव और मानस-दर्शन तत्क्षण होना चाहिए।
इस सजगता और मानस-दर्शन को बढ़ाते जायें।
अब समान की सजगता का त्याग कर दें और उदर के निचले भाग में नाभि से मूलाधार की ओर चलने वाली अपान ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।
नीचे की ओर अवरोहण करने वाली प्रकाश ऊर्जा की तरंगों के रूप में अपान का अनुभव करें।
अब इस प्राणिक प्रकाश की गति को श्वसन प्रक्रिया के साथ जोड़ दें।
पूरक करते समय प्रकाश को नाभि से मूलाधार की ओर अवरोहण करते हुए देखें।
रेचक करते समय ऊर्जा के प्रवाह को ऊर्ध्वमुखी कर दें और उसे वापस नाभि की ओर भेजें।
श्वास के साथ इस प्राणिक गति के प्रति अपनी सजगता को बढ़ाएँ। पूरक करते समय अपान की अधोमुखी गति का अनुभव करें; और रेचक करते समय प्रवाह को विपरीत दिशा प्रदान कर ऊर्जा को नाभि की ओर वापस ऊपर भेज दें।
अब प्राण, जो वक्ष प्रदेश में मध्यपट से गले तक गतिशील ऊर्जा है, उसके प्रति सजग हो जाएँ।
अनुभव करें कि ये आरोहण करने वाली प्राण तरंगें हैं और पूरे वक्ष प्रदेश को प्रकाश से भर रही हैं।
सहज श्वास की गति और इस ऊर्जा की गति का समन्वय आरंभ करें।
जब आप पूरक कर रहे हैं तब प्राण की ऊर्ध्वमुखी गति का मध्यपट से गले तक अनुसरण करें।
रेचक के समय प्रवाह की दिशा बदल दें और ऊर्जा को गले से नीचे नाभि की ओर भेज दें।
पूरक करते समय प्रकाश तरंग ऊपर की ओर और रेचक करते समय नीचे की ओर गमन करती है।
इस प्राणिक गति के प्रति सजग बन जाएँ।
प्राण की सजगता को तीव्र बनायें। अपनी एकाग्रता को अखण्ड बनाये रखें।

अवस्था 4: रेचक के साथ मणिपुर में प्राण एवं अपान का विलय

श्वास के साथ प्राण की गति को समन्वित करते समय अपान की गति के प्रति भी सजग हो जाएँ।

जब भी आप श्वास लेते हैं, प्राण आरोहण करता है और अपान अवरोहण करता है। श्वास लेते समय इन दो शक्तियों के विपरीत दिशाओं में जाने का मानस-दर्शन करें और इनका अनुभव करें।

रेचक करते समय दोनों प्राणिक प्रवाहों की धारा पलट जाती है–प्राण गले से नीचे नाभि की ओर अवरोहण करता है और अपान मूलाधार से ऊपर नाभि की ओर आरोहण करता है।

रेचक करते समय देखें और अनुभव करें कि ये दोनों शक्तियाँ नाभि पर आपस में मिलती हैं और पूरक करते समय देखें और अनुभव करें कि ये दोनों एक-दूसरे से अलग हो जाती हैं।

प्राण एवं अपान की दो भिन्न प्रकार की गतियों के प्रति पूर्णत: सजग रहें–पूरक करते समय ये दोनों शक्तियाँ एक-दूसरे से दूर चली जाती हैं; रेचक करते समय नाभि पर समान में इनका एक-दूसरे में विलय हो जाता है।

अब, जब ये दोनों शक्तियाँ आपस में टकराती हैं तब इनके शक्तिशाली और प्रबल प्रभाव को अनुभव करना आरंभ करें।

हर बार जब प्राण और अपान नाभि पर मिलते हैं तब प्राण के केन्द्र, सौर जालक पर ऊष्मा और प्रकाश में होने वाली वृद्धि का अनुभव करें।

इस प्रक्रिया को कुछ देर जारी रखें।

पूरक और रेचक करते समय एकाग्रता को भंग किये बिना प्राण एवं अपान की गति के प्रति सजगता को बनाये रखें।

सौर जालक के क्षेत्र में विस्फोटक शक्ति के साथ प्रकाश ऊर्जा की दो तरंगों के विलग होने और मिलने का अनुभव करें।

सौर जालक में उनके टकराने के समय उत्पन्न होने वाले ताप में क्रमश: वृद्धि का अनुभव करें, नाभि में झुनझुनी जैसी अनुभूति भी हो सकती है।

सत्ताइस श्वासों तक इसका अभ्यास करें।

अवस्था 5: अभ्यास की समाप्ति

अब अभ्यास समाप्त करने के लिए तैयार हो जायें।

प्राणों की सजगता को धीरे-धीरे लुप्त होने दें।

श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।
पुन: अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
भूमि पर अपने शरीर के भार का अनुभव करें।
अपनी सजगता को बहिर्मुख करें।
बाहर की सभी ध्वनियों का अनुभव करें।
आप जिस कमरे में लेटे हुए हैं, उसमें अपने आस-पास की वस्तुओं या व्यक्तियों के प्रति सजग हो जाएँ।
धीरे-धीरे हाथ-पैर की अँगुलियों को, हाथों और पैरों को हिलाएँ।
धीरे-से अपने सिर को अगल-बगल घुमाएँ।
एक गहरी श्वास लें और अपने हाथों को सिर के ऊपर ताने।
जब आपको अनुभव हो कि आप पूर्णत: अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग हैं तब धीरे से उठ कर बैठ जाएँ और अपनी आँखें खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास टिप्पणी– प्राण तथा अपान की गतियों से परिचित होने और इन पर अधिक नियंत्रण प्राप्त करने के लिए इन शक्तियों का संचालन विभिन्न प्रकार से किया जा सकता है। श्वास का प्रयोग भी विभिन्न प्रकार से किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, ऊपर दिये गये अभ्यास में रेचक के स्थान पर पूरक के समय दोनों शक्तियों का विलय किया जा सकता है और रेचक के समय इन दोनों के एक-दूसरे के विलग होने का अनुभव किया जा सकता है। इनका एक-दूसरे के आगे-पीछे एक ही दिशा में जाने का अनुभव भी किया जा सकता है (उदाहरण के लिए, पूरक के समय दोनों अवरोहण करते हैं और रेचक के समय दोनों आरोहण करते हैं) और उसके बाद इनमें से एक अपने प्रवाह को पलट कर दूसरे के साथ मिल जाता है। हालाँकि यह परामर्श दिया जाता है कि अभ्यास में दक्षता प्राप्त करने के लिए प्रारंभ में एक ही प्रकार से अभ्यास किया जाये।

अभ्यास 2: अतीन्द्रिय पथों में प्राण का संचार

अवस्था 1: तैयारी

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ। हाथों को घुटनों पर चिन् या ज्ञान मुद्रा में रखें। सिर, गरदन तथा मेरुदण्ड एक सीध में रहें।
आप कुर्सी पर बैठ सकते हैं या शवासन में भी लेट सकते हैं।
शरीर को पूर्णतः शिथिल कर लें, देखें कि किसी प्रकार का तनाव या कड़ापन न रह गया हो। शरीर को एक मूर्ति के समान स्थिर कर लें।
एक इकाई के रूप में पूरे शरीर की स्थिरता के प्रति सजग हो जाएँ।
श्वसन प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित करें और प्रत्येक श्वास के साथ गहन शिथिलीकरण का अनुभव करें।
स्वयं से कहें कि मैं पूरे अभ्यास के दौरान हिलूँगा नहीं।

अवस्था 2: अंतराकाश

जब शरीर पूर्णतः स्थिर और शिथिल हो जाये तब अपनी सजगता को अंतर्मुख कर लें और शरीर का अंदर से अवलोकन करें।
कल्पना करें कि आपका शरीर पूर्णतः खोखला है, बिल्कुल खाली।
शरीर के अंदर शून्यता की अनुभूति का विकास करें, अनुभव करें कि आप त्वचा का खोल मात्र हैं जिसके अंदर कुछ भी नहीं है।
सिर के अंदर प्रवेश करें और देखें कि वह केवल एक खोल है।
अपनी सजगता को शरीर के धड़ के अंदर ले जाएँ। वहाँ कुछ भी नहीं है।
इसी प्रकार हाथों और पैरों के अंदर भी कुछ नहीं है, केवल खाली स्थान है।
पूरे शरीर को एक इकाई के रूप में देखते हुए उसके अंदर सूक्ष्म शून्य की इस अनुभूति का विकास करें।

अवस्था 3: चक्रों की स्थिति

इस सूक्ष्म शून्य के अंदर सुषुम्ना नाड़ी का मानस-दर्शन करें।
इसे मूलाधार चक्र से सीधे आज्ञा चक्र तक पतले, पारदर्शक, श्वेत या रुपहले ऊर्जा प्रवाह के रूप में देखें।

इस जगमगाते प्रकाश के धागे में देदीप्यमान ऊर्जा बिन्दुओं के रूप में चक्र पिरोये हुए हैं।

जब आप प्रत्येक चक्र की स्थिति को देखते हैं तब मानसिक रूप से इनका नाम लें और इन्हें चमकता हुआ देखें–'मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा'। वहाँ आपको हलके स्पंदन की अनुभूति भी हो सकती है।

अब नीचे आयें, 'आज्ञा, विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर,स्वाधिष्ठान, मूलाधार'।

अंत में सभी देदीप्यमान चक्रों की एक झलक महीन पारदर्शक सूत्र पर टँगे तारों के रूप में देखें।

अवस्था 4: मेरुदण्ड के दोनों ओर के मार्गों का मानस-दर्शन

मूलाधार पर कुछ क्षणों के लिए सजगता को केन्द्रित करें।

एक ऐसे मार्ग का मानस-दर्शन करें जो मेरुदण्ड के दायीं ओर मूलाधार से आज्ञा चक्र तक धनुष के समान वक्राकार है।

यह दायीं ओर से आज्ञा चक्र में प्रवेश करता है।

यह न तो सुषुम्ना नाड़ी है और न ही यह पिंगला नाड़ी है।

यह धनुष के समान वक्राकार है और इसकी लम्बाई मेरुदण्ड के बराबर है।

अपनी सजगता को वापस मूलाधार पर ले जाएँ और इसी प्रकार के मार्ग का मानस-दर्शन करें जो धनुष के समान वक्राकार होकर मेरुदण्ड के बायीं ओर से आज्ञा चक्र तक जाता है।

यह आज्ञा चक्र में विलीन हो जाता है।

यह न तो सुषुम्ना है और न ही इड़ा है।

देखें कि यह मार्ग धनुष के समान वक्राकार है और इसकी लम्बाई मेरुदण्ड के बराबर है।

इन दोनों मार्गों को मेरुदण्ड के दोनों ओर एक समान दो धनुषों के रूप में देखें, जो मूलाधार एवं आज्ञा चक्रों में आपस में मिलकर एक हो जाते हैं।

अवस्था 5: उज्जायी प्राणायाम का समायोजन

जब इन दोनों मार्गों की पहचान हो जाए तब आप उज्जायी प्राणायाम के साथ अपनी सजगता को जोड़कर इन वक्राकार मार्गों पर आरोहण और अवरोहण कर सकते हैं।

कण्ठ में उज्जायी का सूक्ष्म अभ्यास आरंभ करें और धीरे-से अपनी जीभ को पीछे मोड़कर खेचरी मुद्रा में ले आयें।

कुछ क्षणों के लिए अपनी सजगता को मूलाधार में ले जाएँ।

उसके बाद जब आप उज्जायी के साथ पूरक करते हैं तब अपनी सजगता को मेरुदण्ड के दायीं ओर के वक्राकार मार्ग पर ऊपर चढ़ने दें।

मार्ग पर चलने की अपनी गति को श्वास के साथ इस प्रकार मिलाएँ कि जब आपका पूरक पूर्ण होता है तब आपकी सजगता दायीं ओर से आज्ञा चक्र में प्रवेश कर जाए।

अपनी सजगता और श्वास को आज्ञा चक्र पर कुछ क्षणों तक रोक कर रखें।

उसके बाद उज्जायी के साथ रेचक करते हुए अपनी सजगता को मेरुदण्ड के बायीं ओर के वक्राकार मार्ग से होते हुए नीचे जाने दें।

मार्ग पर चलने की अपनी गति को श्वास के साथ इस प्रकार मिलाएँ कि जब आपका रेचक पूर्ण हो रहा हो तब आपकी सजगता मूलाधार चक्र में प्रवेश कर जाए।

कुछ देर इसका अभ्यास करें।

पूरक करते समय आपकी सजगता दाएँ वक्र के द्वारा मूलाधार से आज्ञा चक्र तक आरोहण करती है।

रेचक करते समय सजगता बाएँ वक्र के द्वारा आज्ञा चक्र से मूलाधार तक अवरोहण करती है।

इन दोनों वक्राकार मार्गों के प्रति अपनी सजगता को बढ़ाते जायें–एक मार्ग दायीं या पिंगला की ओर और दूसरा बायीं या इड़ा की ओर है।

अवस्था 6: प्राण के मानस-दर्शन को सम्मिलित करना

अब उज्जायी श्वास की सजगता के साथ इन दोनों धनुषाकार मार्गों पर तीव्र गति से प्रवाहित होती हुई श्वेत प्राणिक प्रकाश की धारा का मानस-दर्शन करें।

जब आप मूलाधार से श्वास लेते हैं तब श्वेत प्रकाश को दायीं ओर से एक वक्र मार्ग पर आज्ञा चक्र की ओर आरोहण करते हुए देखें।

जब आप श्वास छोड़ते हैं तब प्रकाश को आज्ञा चक्र से एक वक्र मार्ग पर मूलाधार की ओर अवरोहण करते हुए देखें।

अपनी सजगता को दाएँ, पिंगला की ओर से ऊपर और बाएँ, इड़ा की ओर से नीचे घुमाते रहें और तीक्ष्ण प्राणिक प्रकाश के अनवरत प्रवाह का अवलोकन करें।

प्रत्येक पूरक के बाद अपनी सजगता और श्वास को आज्ञा चक्र पर कुछ क्षणों तक रोक कर रखें।

अनुभव करें कि प्रकाश-धारा के रूप में आरोहण एवं अवरोहण करती हुई श्वास, चेतना और प्राण की सजगता में आप विलीन होते जा रहे हैं।

सम्पूर्ण गतिविधि जब तक सहज एवं समकालिक न हो जाए तब तक इस प्रकार अभ्यास करते जाएँ।

उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास जारी रखें, लेकिन यदि आवश्यक हो तो आप खेचरी मुद्रा को कुछ देर के लिए छोड़ सकते हैं।

अवस्था 7: दिशा परिवर्तन

जब इस गतिविधि और मानस-दर्शन में सामंजस्य स्थापित हो जाए तथा इसमें स्पष्टता आ जाए तब इसके क्रम को बदल दें और बायीं, अर्थात् इड़ा की ओर से आरोहण एवं पिंगला की ओर से अवरोहण आरंभ करें।

मूलाधार से आरंभ करें और अपनी सजगता को मेरुदण्ड के बायीं ओर धनुष के साथ बाएँ मुड़ जाने दें।

गति को इस प्रकार समकालिक करें कि पूरक के पूरा होने के साथ आप आज्ञा चक्र पर पहुँच जाएँ।

अपनी सजगता और श्वास को कुछ देर के लिए आज्ञा पर रोक कर रखें।

जब सजगता दायीं ओर मुड़ कर नीचे जाने लगती है तब रेचक करें।

गति को समकालिक बनाएँ ताकि रेचक के पूरा होने तक आप मूलाधार में पहुँच जाएँ।

कुछ देर इसका अभ्यास करें। इस प्रक्रिया के प्रति सजगता को बढ़ाते जाएँ।

इसके बाद प्राणिक प्रकाश की धारा के एक क्रम में गतिमान होने का मानस-दर्शन करना आरंभ करें।

जब आप मूलाधार से श्वास लेते हैं तब प्राण को बायीं ओर से आज्ञा चक्र की ओर आरोहण करता हुआ देखें।

जब आप आज्ञा चक्र से श्वास छोड़ते हैं तब प्रकाश को दायीं ओर से मूलाधार की ओर अवरोहण करता हुआ देखें।

इस देदीप्यमान प्रकाश की धारा का अवलोकन करते हुए अपनी सजगता को इड़ा की ओर से ऊपर और पिंगला की ओर से नीचे घुमाते रहें।
प्रत्येक पूरक के बाद अपनी सजगता और श्वास को कुछ क्षण आज्ञा चक्र पर रोक कर रखें। इस अभ्यास के प्रति अपनी सजगता को बढ़ाते जाएँ।
श्वास, चेतना और प्राण की तिहरी सजगता में स्वयं को विलीन करते रहें जब तक आप इसके साथ बिना प्रयास के एकाकार न हो जाएँ।

अवस्था 8: अभ्यास की समाप्ति

अब धीरे-से अपनी सजगता को इस अभ्यास पर से हटा लें।
पुनः अपने शरीर के अंदर के शून्य स्थान को प्रकाश एवं सूक्ष्म ऊर्जा से भरा हुआ देखें।
अपनी श्वास को सहज होने दें।
अपने भौतिक शरीर और इसकी स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।
बाहरी ध्वनियों को सुनें और मानसिक रूप से बाह्य वातावरण का अवलोकन करें।
धीरे-धीरे अपने हाथ-पैर की अँगुलियों को, हाथों को, पैरों को हिलाएँ और सिर को दोनों ओर घुमाएँ।
गहरी श्वास अंदर लेते हुए अपनी दोनों भुजाओं को सिर के ऊपर ले जाते हुए पूरे शरीर को ताने।
जब आप पूरी तरह अपने भौतिक शरीर और बाहरी वातावरण के प्रति सजग हो जाएँ तब अपनी आँखें खोल दें और उठ कर बैठ जाएँ।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 3: प्राण के मानस-दर्शन के साथ अजपा जप

अवस्था 1: तैयारी

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ और अपनी आँखों को बंद कर लें।
यह सुनिश्चित कर लें कि मेरुदण्ड और सिर एक सीध में हों, और दोनों हाथ घुटनों पर चिन् या ज्ञान मुद्रा में रखे हों।

स्वयं को शारीरिक एवं मानसिक रूप से शिथिल कर लें।
सहज रूप से अंदर-बाहर आने-जाने वाली श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।
अपनी सजगता को कण्ठ में श्वास पर ले जाएँ।
श्वसन को अधिक धीमा और गहरा बनायें ताकि श्वास अंदर लेते हुए आप पाँच तक गिन सकें, और श्वास छोड़ते समय भी आप पाँच तक गिन सकें।
यद्यपि श्वास धीमा और गहरा है, फिर भी यह स्वाभाविक है।
कण्ठ के केन्द्र पर अपनी एकाग्रता में वृद्धि करें।
अनुभव करें कि प्रत्येक श्वास कण्ठ के द्वारा अंदर जा रही है, मानो कण्ठ में सामने की ओर एक छिद्र है जिसके द्वारा आप वायु को अंदर खींच रहे हैं।
इस धीमे, गहरे श्वसन को तब तक जारी रखें जब तक आपको यह अनुभव न हो जाए कि श्वसन प्रक्रिया सहज रूप से उज्जायी में परिवर्तित हो गयी है।
हलके और लगातार चलने वाले खर्राटे जैसी श्वास में धीमी 'हिस्स' की ध्वनि निकलती है जो प्रेशर कुकर से धीरे-धीरे निकलने वाली भाप की ध्वनि के समान होती है।
जीभ भी खेचरी मुद्रा में पीछे की ओर मुड़ी हुई रहती है ताकि उसके सिरे का स्पर्श कण्ठ के पिछले भाग से हो सके और नीचे का भाग ऊपरी तालू पर दबाव डाल सके।
उज्जायी एवं खेचरी का अभ्यास एक साथ किया जाता है।
यदि जीभ थक जाए तो उसे कुछ क्षणों के लिए सीधा कर लें और पुनः पीछे की ओर मोड़ लें।

अभ्यास 2: अतीन्द्रिय पथ का मानस-दर्शन

शरीर को एक खाली खोल के रूप में अनुभव करना आरंभ करें, आंतरिक शून्य की पूर्ण सजगता।
इसके साथ ही आपको अपने अंदर जिस शांति का अनुभव हो रहा है उसके प्रति सजग हो जाएँ।
इस शांति के बीच मेरुदण्ड के अंदर स्थित नाड़ी के प्रति सजग हो जाएँ।
इस नाड़ी को मेरुदण्ड के आधार से मध्य-मस्तिष्क तक देखें। एक पारदर्शी, श्वेत या रुपहली, देदीप्यमान और चमकीली नली के रूप में इसका मानस-दर्शन करें, जो मेरुदण्ड के मध्य से आरोहण कर रही है।

उज्जायी के साथ पूरक करें और अपनी सजगता को इस नाड़ी के मध्य से मूलाधार से आज्ञा तक ले जाएँ।

उज्जायी के साथ रेचक करें और अपनी सजगता को वापस आज्ञा से नीचे मूलाधार तक ले जाएँ।

मेरुदण्ड में इसी प्रकार श्वास के साथ अपनी सजगता का आरोहण-अवरोहण जारी रखें।

यह अनुभव करने का प्रयास करें कि श्वसन प्रक्रिया अतीन्द्रिय पथ के अंदर चल रही है।

आपकी पूरी सजगता इस मार्ग पर केन्द्रित है।

श्वास के साथ इस मार्ग पर आरोहण-अवरोहण कर रही चेतना के प्रति अपनी सजगता को बढ़ाते जाएँ।

अवस्था 3: प्राण के प्रवाह का मानस-दर्शन

श्वास के साथ प्रवाहित होने वाले प्राण के प्रति सजगता का विकास करें।

जब आप उज्जायी के साथ पूरक करते हैं तब श्वेत प्रकाश कणों के रूप में ऊर्जा के प्रवाह को आरोहण करते हुए देखें।

जब आप आज्ञा चक्र में पहुँच जाते हैं तब उज्जायी के साथ रेचक करना आरंभ करें और प्रकाश कणों के रूप में ऊर्जा के प्रवाह को अवरोहण करते हुए देखें।

इस अभ्यास को कुछ मिनट तक जारी रखें, जिस प्रकार कोई बच्चा फुलझड़ी की चिन्गारियों को देखता है, उसी प्रकार ऊर्जा के प्रवाह को देखें।

प्राणिक प्रकाश की गति का अनुभव करें।

अपनी कल्पना का प्रयोग करते हुए या अपनी स्मृति से प्रकाश कणों की धारा को स्वच्छ जल की नदी पर चमकते हुए सूर्य या हवा में तेजी से घूमती हुई फुलझड़ी के समान देखें।

मेरुदण्ड में उज्जायी श्वसन के साथ ऊपर-नीचे गतिमान ऊर्जा का मानस-दर्शन करें।

जब आरोहण एवं अवरोहण नियमित हो जाए तब मेरुदण्ड में स्थित चक्रों के प्रति सजग हो जाएँ।

अनुभव करें कि प्राण क्रम से प्रत्येक चक्र को बेध रहा है, लेकिन चक्रों के नाम लेने या किसी बिंदु विशेष पर रुकने का प्रयास नहीं करें।

सजगता को श्वास के साथ ऊपर-नीचे प्रवाहित होने दें; केवल उस चक्र के प्रति सजग बनते जाएँ जिससे होकर आप आगे बढ़ते हैं।

अब आप अतीन्द्रिय पथ पर गुँथे हुए चक्रों, श्वास के संचार और गतिमान प्रकाश के रूप में प्राण के संचार का अवलोकन कर रहे हैं।

प्राण के संचार का मानस-दर्शन करें और एक के बाद एक चक्रों को बेधते हुए प्राण का इस प्रकार अनुभव करें मानो एक सूई में आपकी अपनी सजगता का धागा पिरोया हुआ है।

अवस्था 4: मंत्र सोऽहम् को सम्मिलित करना

अब चक्रों को देखने का प्रयास बन्द कर दें और अतीन्द्रिय पथ पर आरोहण एवं अवरोहण करने वाली श्वास की ध्वनि पर ध्यान केन्द्रित करें।

मंत्र सोऽहम् के प्रति सजग हो जाएँ, जोकि श्वास की सहज ध्वनि है।

पूरक करते समय 'सो' ध्वनि को सुने; रेचक करते समय 'हम्' ध्वनि को सुने।

प्राण के प्रवाह को प्रकाश कणों की धारा के रूप में 'सो' की मंद ध्वनि के साथ ऊपर और 'हम्' की उतनी ही मंद ध्वनि के साथ नीचे जाता हुआ देखें।

इस अभ्यास को कुछ देर जारी रखें।

चेतना को पूरी तरह प्राण की गति और सोऽहम् मंत्र में विलीन कर दें।

अतीन्द्रिय पथ में सोऽहम् मंत्र और उज्जायी श्वास के साथ प्राण के संचार के प्रति पूरी सजगता।

उज्जायी श्वसन की गति के साथ एकाकार हो जाएँ।

सोऽहम् मंत्र, जो श्वास के साथ आरोहण-अवरोहण करता है, उसके जप के साथ एकाकार हो जाएँ।

प्राण के उस प्रवाह में स्वयं को विलीन कर दें, जिसका अनुभव आप श्वेत प्रकाश की धारा और सोऽहम् के स्पंदन के रूप में करते हैं।

अवस्था 5: अभ्यास की समाप्ति

अब अभ्यास को रोक दें, खेचरी मुद्रा को मुक्त कर दें और पुन: स्वाभाविक श्वसन करें। अतीन्द्रिय मार्ग और सोऽहम् मंत्र की सजगता को छोड़ दें।

श्वास पर ध्यान दें और शरीर के अंदर गतिमान श्वास का अनुभव करें।

स्थूल शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

अपनी सजगता को धीरे-धीरे बहिर्मुख करना आरंभ करें।
अपने आस-पास की ध्वनियों को सुने।
अपने चारों ओर के वातावरण का मानस-दर्शन करें और स्वयं को ध्यान के आसन में स्थिर देखें।
यह सुनिश्चित कर लें कि आप अपने भौतिक शरीर में वापस आ गये हैं।
अपनी स्वाद,गंध, स्पर्श, घ्राण इंद्रियों को जाँच लें।
उसके बाद धीरे-धीरे अपनी अँगुलियों को, हाथ-पैर को हिलाएँ, और अपने सिर को दोनों ओर घुमाएँ।
पूरे शरीर को ताने, कुछ गहरी श्वासें लें, उसके बाद अपनी आँखों को बंद रखते हुए ही सावधानी के साथ उठ कर बैठ जाएँ
अपनी आँखों को तभी खोलें जब आप आश्वस्त हों कि आपका मन पूर्णतः बहिर्मुख हो चुका है।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 4: पिंगला नाड़ी में प्राण का संचार

अवस्था 1: तैयारी

बैठ कर या लेट कर किसी आरामदायक स्थिति में आ जाएँ।
यदि आप लेटे हुए हैं तो शवासन अच्छा रहेगा, हालाँकि आप दायीं या बायीं करवट भी लेट सकते हैं, जैसा कि आप अधिकतर अभ्यासों में कर सकते हैं।
यदि बैठे हैं तो यह सुनिश्चित कर लें कि आपका शरीर पूर्णतः शिथिल है।
मेरुदण्ड सीधा, सिर और गरदन एक सीध में, दोनों हाथ घुटनों पर चिन् या ज्ञान मुद्रा में रहें।
आँखें और मुँह धीरे से बंद कर लें।
अभ्यास आरंभ करने के लिए तैयार हो जाएँ।
भौतिक शरीर और उसकी स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।
स्वयं को पूर्णतः स्थिर और शांत कर लें, और शरीर के भार को दोनों ओर संतुलित कर लें। अपनी स्थिरता का अवलोकन करते हुए पूर्णतः शिथिल और तनावमुक्त हो जाएँ।

शरीर में कोई हलचल नहीं हो रही है; शरीर मूर्ति के समान अचल और तनावमुक्त है।
अपनी सजगता को शरीर के अंदर ले जाएँ।
शरीर को त्वचा के खोल के रूप में देखें और उसके प्रति सजग हो जाएँ।
शरीर के अंदर केवल शून्य स्थान है।
अपने शरीर के अंदर की शून्यता के प्रति सजग हो जाएँ।
इस स्थान को देखें; इस स्थान के प्रति पूर्णत: सजग हो जाएँ।
इस शून्य स्थान के अंदर अपने मेरुदण्ड का मानस-दर्शन करें।
मेरुदण्ड के मध्य में एक पारदर्शक या रुपहली-श्वेत नाड़ी और उस पर गुँथे हुए चक्रों को देखें, मानो चमकती हुई मणियाँ एक धागे पर टँकी हुई हैं।

अवस्था 2: पिंगला नाड़ी के मार्ग का पता लगाना

अब हम लोग पिंगला नाड़ी की सजगता को विकसित करना आरंभ करेंगे।
इस अभ्यास में श्वास को प्राण की गति के साथ समन्वित करने का प्रयास नहीं करें।
मूलाधार से प्रारंभ कर हम लोग पिंगला नाड़ी का पता लगाना आरंभ करेंगे– पहले यह दाएँ घूमती है और फिर स्वाधिष्ठान चक्र में दायीं ओर से प्रवेश करती है।
यह स्वाधिष्ठान की बायीं ओर से निकलती है और मणिपुर चक्र में बायीं ओर से प्रवेश करती है।
यह मणिपुर की दायीं ओर से निकलती है और अनाहत चक्र में दायीं ओर से प्रवेश करती है।
यह अनाहत की बायीं ओर से निकलती है और विशुद्धि चक्र में बायीं ओर से प्रवेश करती है।
अंतत: यह दायीं ओर घूमती है और आज्ञा चक्र में दाएँ से प्रवेश करती है।
आज्ञा से यह अवरोहण करना आरंभ करती है–अवरोहण के मार्ग में यह आज्ञा की दायीं ओर से निकलती है और विशुद्धि से होकर आगे बढ़ जाती है।
उसके बाद यह बाएँ मुड़ कर अनाहत से होती हुई आगे बढ़ जाती है।
अब यह दाएँ मुड़ कर मणिपुर से होती हुई आगे बढ़ जाती है।
मणिपुर से यह बाएँ मुड़ती हुई स्वाधिष्ठान की ओर बढ़ जाती है।

अंतत: यह दाएँ मुड़ जाती है और मूलाधार में लौट आती है जहाँ से यह निकली थी।
पिंगला नाड़ी की सजगता का विकास करें।
अपनी सजगता को इस घुमावदार पथ पर धीमी और एक समान गति से एक-एक कर प्रत्येक चक्र पर ले जाएँ।
इस गति को श्वास के साथ समन्वित करने का प्रयास नहीं करें; केवल पिंगला नाड़ी के मार्ग को अपने मन में दृढ़तापूर्वक बैठा लें।
यह सुनिश्चित कर लें कि आप सही दिशा में जा रहे हैं, दाएँ से बाएँ और बाएँ से दाएँ।
अन्य सभी बातों को भुला दें और यहाँ अपनी पूर्ण सजगता को एकाग्र करें।
यदि आपसे कोई त्रुटि हो जाती है तो मूलाधार पर वापस जाएँ और पुन: आरंभ करें।
पिंगला नाड़ी मूलाधार की दायीं ओर से निकलती है और घूम कर स्वाधिष्ठान तक जाती है, वहाँ से बाएँ घूमती हुई मणिपुर से आगे जाती है, दाएँ घूमती हुई अनाहत से आगे बढ़ जाती है, बाएँ घूम कर विशुद्धि से आगे चली जाती है, दाएँ घूमती है और आज्ञा में चली आती है। अवरोहण पथ आज्ञा के दाएँ से निकलता है और विशुद्धि की ओर घूम जाता है, बाएँ घूम कर अनाहत से आगे बढ़ जाता है, दाएँ घूम कर मणिपुर से आगे बढ़ जाता है, स्वाधिष्ठान से आगे बढ़ता हुआ बाएँ घूम जाता है, फिर मूलाधार में आने के लिए दाएँ घूम जाता है।
पिंगला की सजगता का अभ्यास जारी रखें।

अवस्था 3: पिंगला नाड़ी में प्राण का अनुभव

इस मार्ग में प्राण के प्रवाह का अनुभव करने के लिए तैयार हो जाएँ।
आप जब अपनी सजगता को पिंगला नाड़ी के साथ ऊपर ले जाते हैं तब उसके साथ प्रकाश की घूमती हुई रेखाओं को देखें।
प्राण की गति का अनुभव करने का प्रयास करें।
इस गति का प्रकाश की किरणों के रूप में मानस-दर्शन करें।
इस अवस्था में यदि आपको प्राण के प्रवाह के प्रति सजग होने में कठिनाई हो तो आप पिंगला नाड़ी का केवल एक पतले प्रकाश मार्ग के रूप में मानस-दर्शन करें।

जब पिंगला नाड़ी में आपकी चेतना सहजतापूर्वक प्रवाहित होने लगे तब पुन: वास्तविक प्राण के संचार का अनुभव करने का प्रयास करें– पहले कल्पना करें, उसके बाद अपनी सजगता को उस मार्ग पर ले जाएँ, उसकी वास्तविक गति का अनुभव करें, प्राण की वास्तविक अनुभूति, उसे प्रवाहमान तरंग या प्रकाश किरण के रूप में देखें।

प्रारंभ में प्राय: कल्पना के द्वारा ही इस मार्ग पर प्राण की गति को देखा या उसका अनुभव किया जाता है।

प्रारंभ में यदि आपको सफलता नहीं मिलती है तो इससे हतोत्साह न हों; इसके लिए अत्यधिक अभ्यास की आवश्यकता होती है।

अवस्था 4: श्वास को सम्मिलित करना

जब आप पिंगला के मार्ग से परिचित हो जाते हैं तब आप आरोहण-अवरोहण करती हुई सजगता के साथ श्वास को समन्वित करना आरंभ कर सकते हैं।

पूरक के साथ श्वास मूलाधार की दायीं ओर से ऊपर जाती है और घूम कर स्वाधिष्ठान में प्रवेश करती है।

यह स्वाधिष्ठान की बायीं ओर से निकलती है और घूम कर मणिपुर में चली जाती है, मणिपुर की बायीं ओर से निकलती है और घूम कर अनाहत में प्रवेश कर जाती है, अनाहत की बायीं ओर से निकलती है और विशुद्धि में प्रवेश कर जाती है, विशुद्धि की दायीं ओर से निकलती है और आज्ञा में दायीं ओर से प्रवेश करती है।

रेचक के साथ श्वास आज्ञा की दायीं ओर से नीचे उतरती है, विशुद्धि की बायीं ओर से, अनाहत की दायीं ओर से, मणिपुर की बायीं ओर से, स्वाधिष्ठान की दायीं ओर से और फिर मूलाधार में समाप्त हो जाती है।

अभ्यास को जारी रखें।

चेतना एवं प्राण को श्वास की गति के साथ समन्वित कर पिंगला नाड़ी में ऊपर-नीचे ले जाएँ।

चक्रों से होकर पिंगला नाड़ी में आरोहण-अवरोहण करती चेतना की मंद और लयबद्ध गति का अवलोकन करें; प्राण की गति और श्वास के प्रति भी सजग रहें। यदि आपको अभ्यास में किसी भी प्रकार की कठिनाई का

अनुभव हो तो जब आप चक्रों से होते हुए ऊपर-नीचे जाते हैं तब एक-एक कर उनके नाम लेते जाएँ। आरोहण में– मूलाधार दाएँ, स्वाधिष्ठान बाएँ, मणिपुर दाएँ, अनाहत बाएँ, विशुद्धि के दाएँ होते हुए आज्ञा। अवरोहण में– आज्ञा दाएँ, विशुद्धि बाएँ, अनाहत दाएँ, मणिपुर बाएँ, स्वाधिष्ठान के दाएँ होते हुए मूलाधार।

इस प्रक्रिया को तब तक जारी रखें जब तक यह सरल और सहज न हो जाए; आपको इसके बारे में सोचना न पड़े।

अवस्था 5: अभ्यास की समाप्ति

धीरे-धीरे अपनी सजगता को पिंगला नाड़ी से हटा लें।

अपने वातावरण और आस-पास की ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।

आप जिस कमरे में हैं, उसके प्रति और उसमें बैठे लोगों तथा उसमें रखी वस्तुओं के प्रति सजग हो जाएँ।

धीरे-धीरे हाथ-पैर की अँगुलियों को, हाथों और पैरों को हिलाएँ, धीरे से अपने सिर को अगल-बगल घुमाएँ।

अपने पूरे शरीर को तानें।

अपने शरीर में पूर्णत: लौट आने का अनुभव करें।

जब आपको अपने पूरे भौतिक शरीर की अनुभूति होने लगे तब आप धीरे-से उठ कर बैठ जाएँ और आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 5: इड़ा एवं पिंगला नाड़ी में प्राण का संचार

अवस्था 1: तैयारी

किसी आरामदायक स्थिति में बैठ जाएँ या शवासन में लेट जाएँ।

यदि आप शवासन में लेटे हुए हैं तो आपके पैरों के बीच लगभग तीस सेन्टीमीटर की दूरी होनी चाहिए, दोनों हाथ शरीर से पाँच या दस सेन्टीमीटर दूर हों, हथेलियाँ ऊपर की ओर हों, सिर, गरदन और मेरुदण्ड एक सीध में हों, आँखें और मुँह हल्के से बंद हों।

अपने शरीर का पूरा भार जमीन पर डाल दें।

अनुभव करें कि आपका शरीर प्रत्येक श्वास के साथ जमीन में धँसता जा रहा है, स्वयं को पूर्णत: शिथिल कर दें।
यदि आप बैठे हुए हैं तो यह सुनिश्चित कर लें कि आपने जिस आसन को चुना है, पूरे अभ्यास के दौरान आप उसमें आराम से बैठ पायेंगे।
अपने हाथों को अपनी पसंद की मुद्रा में घुटनों पर रखें।
अपने शरीर को दोनों ओर संतुलित कर लें।
अपनी सजगता को पूरे शरीर में घुमा कर यह सुनिश्चत कर लें कि शरीर के किसी भाग में कोई तनाव या कड़ापन नहीं है।

अवस्था 2: अंतराकाश

मानसिक रूप से अपने शरीर का निरीक्षण करना आरंभ करें; शरीर के प्रति पूर्ण सजगता का विकास करें।
अपनी शारीरिक अवस्था के प्रति सजग हो जाएँ और स्वयं को अपने शरीर के साथ एक आरामदायक स्थिति में ले आयें ताकि अभ्यास के दौरान किसी पीड़ा, तनाव या कड़ेपन के कारण आपका ध्यान भंग न हो।
अपने ध्यान को भ्रूमध्य में केन्द्रित कर दें।
अपनी बंद आँखों के सामने उस स्थान का अवलोकन करें जिसे चिदाकाश, चित्त या चेतना का आकाश कहते हैं।
अब स्थूलाकाश के प्रति सजग हो जाएँ जिससे पूरा शरीर भरा हुआ है।
संपूर्ण शरीर में व्याप्त आकाश के प्रति सजग हो जाएँ।
प्राण विद्या के अभ्यास में स्थूलाकाश की सजगता को विकसित करना आवश्यक होता है।
अपनी चेतना को आंतरिक शून्य की ओर ले जाएँ और उसके अनुभव को प्रखर बनाएँ।

अवस्था 3: चक्रों की स्थिति

स्थूलाकाश के अंदर मेरुदण्ड के प्रति सजग हो जाएँ।
मेरुदण्ड में अपने-अपने स्थानों पर चमकीले हीरों या प्रकाश बिंदुओं के रूप में चमकते चक्रों का मानस-दर्शन करें।
मेरुदण्ड के आधार में ऊर्जा के प्रथम स्रोत मूलाधार से प्रारंभ करें।

दूसरे प्रकाश बिंदु स्वाधिष्ठान चक्र का मानस-दर्शन मेरुदण्ड के निचले छोर में पुच्छ अस्थि पर करें।

उसके बाद प्राण के तीसरे केन्द्र, मणिपुर चक्र के प्रकाश के प्रति सजग हो जाएँ, जो नाभि के पीछे अतीन्द्रिय पथ में स्थित होता है।

अनाहत चक्र प्रकाश ऊर्जा का चौथा बिंदु है, जो वक्ष प्रदेश के पीछे स्थित होता है।

इसके बाद ऊपर पाँचवें प्रकाश बिन्दु, विशुद्धि चक्र पर आएँ जो गले में कण्ठ के पीछे स्थित है।

अंततः मेरुदण्ड के शीर्ष पर मध्य मस्तिष्क में प्रकाश के समान चमकती हुई मणि के रूप में आज्ञा चक्र को देखें।

अब एक झलक में इन सभी ऊर्जा केन्द्रों को अतीन्द्रिय पथ में उनके स्थानों पर एक शुद्ध चाँदी के तार में गुँथी हुई सुन्दर चमकीली, बहुमूल्य मणियों के रूप में देखें।

अवस्था 4: इड़ा एवं पिंगला नाड़ियाँ

जब आप अतीन्द्रिय पथ में चक्रों की सजगता का विकास कर लें तब इड़ा एवं पिंगला नाड़ियों के प्रति सजग हो जाएँ, जो प्रत्येक चक्र पर एक-दूसरे को आर-पार करती हुई आगे बढ़ती हैं–मेरुदण्ड के नीचे मूलाधार से आरंभ कर मेरुदण्ड के शीर्ष पर स्थित आज्ञा चक्र तक जाती है।

पिंगला सूर्य या प्राण शक्ति और इड़ा चंद्र या मानसिक शक्ति का संवहन करती है।

इन दोनों नाड़ियों के प्रारंभिक बिंदु, मूलाधार पर अपनी सजगता को केन्द्रित करें।

मूलाधार से पिंगला दायीं ओर और इड़ा बायीं ओर मुड़ जाती है; ये दोनों प्रत्येक चक्र को पार करती हुई आज्ञा तक जाती हैं।

चक्रों एवं नाड़ियों के प्रति अपनी अंतर्दृष्टि का विकास करें।

इस सजगता को बढ़ाते जायें, भले ही यह अनुभव कल्पना पर ही आधारित क्यों न हो।

स्थूलाकाश और उसके अंदर अतीन्द्रिय पथ के प्रति सजग हो जाएँ।

अतीन्द्रिय पथ के अंदर चक्रों एवं नाड़ियों के प्रति सजग हो जाएँ।

एक बार पुन: अपनी सजगता को मूलाधार चक्र में ले जाएँ और केवल पिंगला नाड़ी के प्रति सजग हो जाएँ।

मूलाधार से पिंगला दायीं ओर मुड़ कर स्वाधिष्ठान से होती हुई आगे बढ़ती है; स्वाधिष्ठान से यह बायीं ओर मुड़ कर मणिपुर को पार करती है; मणिपुर से दायीं ओर मुड़ कर अनाहत की ओर जाती है; अनाहत से यह बायीं ओर मुड़ती है और विशुद्धि को पार करती है; विशुद्धि से दायें मुड़ कर आगे बढ़ती है और आज्ञा में जाकर समाप्त हो जाती है।

अपनी सजगता को पिंगला नाड़ी के साथ नीचे की ओर ले जाएँ।

आज्ञा से पिंगला दायीं ओर घूम कर विशुद्धि की ओर जाती है; विशुद्धि से यह बाएँ घूम जाती है और अनाहत से आगे बढ़ जाती है; अनाहत से यह दाएँ घूम जाती है और मणिपुर की ओर चली जाती है; मणिपुर से यह बाएँ घूम जाती है और स्वाधिष्ठान की ओर चली जाती है; यह स्वाधिष्ठान से दाएँ घूम जाती है और मूलाधार में वापस पहुँच जाती है।

सजगता को पिंगला नाड़ी के माध्यम से तब तक घुमाना जारी रखें जब तक उसका मानसिक मार्ग स्पष्ट न हो जाए।

अब पिंगला नाड़ी की सजगता को छोड़ दें और मूलाधार से आरंभ कर ऊपर तक इड़ा नाड़ी के प्रति सजग हो जाएँ।

मूलाधार से इड़ा बाएँ घूम जाती है और स्वाधिष्ठान की ओर जाती है; स्वाधिष्ठान से यह दाएँ मुड़ जाती है और मणिपुर की ओर चली जाती है; मणिपुर से यह बाएँ मुड़ जाती है और अनाहत की ओर चली जाती है; अनाहत से यह दाएँ घूम जाती है और विशुद्धि की ओर जाती है; विशुद्धि से यह बाएँ घूम जाती है और आज्ञा चक्र में समाप्त हो जाती है।

इड़ा नाड़ी से नीचे जाने के लिए अपनी सजगता को विपरीत दिशा में ले जाएँ।

आज्ञा से इड़ा बाएँ मुड़ जाती है और विशुद्धि को पार करती है; विशुद्धि से यह दाएँ घूम जाती है और अनाहत को पार करती है; अनाहत से बाएँ मुड़ जाती है और मणिपुर की ओर जाती है; मणिपुर से यह दाएँ घूमती है और स्वाधिष्ठान को पार करती है; उसके बाद यह बायीं ओर से मुड़ती हुई मूलाधार में लौट आती है।

कुछ देर इड़ा नाड़ी से सजगता को घुमाना जारी रखें।

जब इड़ा नाड़ी की सजगता स्पष्ट रूप से विकसित हो गयी हो तब इस अभ्यास को बंद कर दें।

केवल शरीर के अंदर शून्य स्थान में चक्रों की स्थितियों की, और मूलाधार से निकलती हुई नाड़ियों एवं उनके द्वारा प्रत्येक चक्र को पार करने की प्रक्रिया के प्रति सजगता को बनाए रखें।

अवस्था 5: श्वास एवं प्राण की सजगता को सम्मिलित करना

अब हम श्वास और प्राण के संचार की सजगता को सम्मिलित करेंगे।

पूरक की सहायता से अपनी चेतना को पिंगला नाड़ी द्वारा मूलाधार से स्वाधिष्ठान तक ले जाएँ।

रेचक के साथ अपनी सजगता को इड़ा नाड़ी के द्वारा स्वाधिष्ठान से वापस मूलाधार पर ले आएँ।

प्राण की सजगता को सम्मिलित करें।

श्वास लेते समय श्वास के प्रति सजग रहें और साथ ही पिंगला के द्वारा मूलाधार से स्वाधिष्ठान की ओर जाते समय प्राण की गति के प्रति भी सजग हो जाएँ, उसके बाद श्वास छोड़ते समय ये इड़ा के द्वारा स्वाधिष्ठान से मूलाधार की ओर अवरोहण करते हैं।

अपनी सजगता, श्वास एवं प्राण को मूलाधार तथा स्वाधिष्ठान के बीच घुमाते हुए इस अभ्यास को जारी रखें।

इस अभ्यास को कुछ देर जारी रखें और जब यह अभ्यास अच्छी तरह होने लग जाये तब अगले चरण की ओर बढ़ें।

इसके बाद पूरक के साथ सजगता को पिंगला के मार्ग से ऊपर ले जाएँ– मूलाधार से दाएँ घूम जाएँ और स्वाधिष्ठान को पार करें, उसके बाद बाएँ घूम जाएँ और मणिपुर तक आ जाएँ।

रेचक करते समय इड़ा के मार्ग से नीचे मूलाधार की ओर लौट आएँ– मणिपुर की दायीं ओर से निकलें और दायीं ओर से स्वाधिष्ठान में प्रवेश करें, फिर बायीं ओर घूम जाएँ और पुनः मूलाधार में बायीं ओर से प्रवेश करें।

प्रत्येक पूरक के साथ आपकी सजगता पिंगला के मार्ग से मणिपुर तक आरोहण करती है और प्रत्येक रेचक के साथ इड़ा नाड़ी के मार्ग से मूलाधार की ओर अवरोहण करती है।

इस प्रक्रिया के प्रति सजगता को बढ़ाते जायें।

जब यह अच्छी तरह होने लगे तब मूलाधार से अनाहत तक का अभ्यास करें।

चेतना, श्वास और प्राण एक साथ पिंगला के द्वारा अनाहत तक जाते हैं और इड़ा के द्वारा अनाहत से मूलाधार तक लौट आते हैं।

प्रत्येक श्वास के साथ इस सजगता को तीव्रतर करते जाएँ।

अब सजगता को पिंगला के द्वारा ऊपर विशुद्धि तक ले जाएँ तथा इड़ा के द्वारा विशुद्धि से मूलाधार तक वापस ले आएँ।

अपनी सजगता की गति के प्रति सजग रहते हुए पूरक के साथ आरोहण करें।

उसी सजगता के साथ रेचक के समय अवरोहण करें।

जागरूक रहें, सोना नहीं है।

अब पिंगला के द्वारा मूलाधार से आज्ञा तक आरोहण करें और इड़ा के द्वारा आज्ञा से मूलाधार तक अवरोहण करें।

जब भी आप आज्ञा पर पहुँचते हैं, वहाँ कुछ क्षण अपनी श्वास को रोकें और सजगता को बनाए रखें।

इसके बाद अगले रेचक के साथ इड़ा के मार्ग से अवरोहण करते हुए मूलाधार में लौट आएँ।

प्रत्येक पूरक के साथ पिंगला मार्ग से आपकी सजगता आज्ञा तक जाती है, जहाँ उसे आप कुछ क्षणों के लिए रोक लेते हैं।

उसके बाद प्रत्येक रेचक के साथ इड़ा नाड़ी के द्वारा सजगता नीचे मूलाधार की ओर अवरोहण करती है।

इस प्रक्रिया के प्रति सजगता को बढ़ाते जायें।

इसी प्रकार कुछ देर अभ्यास जारी रखें।

अवस्था 6: अभ्यास की समाप्ति

अब नाड़ियों एवं चक्रों की सजगता को छोड़ दें और श्वास की सजगता पर लौट आएँ।

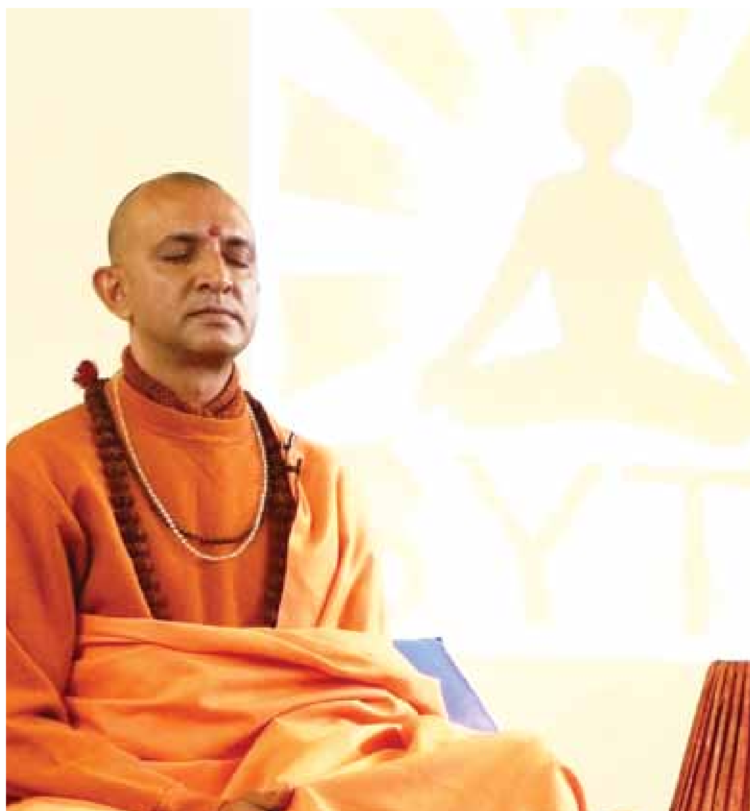
शरीर के अंदर और बाहर के आकाश के प्रति सजग हो जाएँ।

अपनी सहज श्वसन प्रक्रिया पर अपनी सजगता को ले जाएँ।

बाहरी वातावरण और अपने आस-पास की सभी ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।

अपने शरीर की स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।
अपनी सजगता को पूर्णत: बहिर्मुख कर लें और देखें कि सभी इन्द्रियाँ इन्द्रियजन्य संवेदनाओं, जैसे, ध्वनि, गंध, मुँह के स्वाद और स्पर्श आदि की सूचना दे रही हैं।
धीरे-धीरे अपने हाथ-पैर की अंगुलियों, तलवों, पैरों, हाथों को हिलाएँ और सिर को दोनों ओर घुमाएँ।
एक गहरी श्वास अंदर लें और पूरे शरीर को ताने।
उसके बाद, जब आप अपने भौतिक शरीर के प्रति पूरी तरह सजग हो जाएँ तब धीरे से उठ कर बैठ जाएँ और आँखों को खोल लें।

हरि ॐ तत्सत्



12

प्राण का उत्थान एवं संचय

अभ्यास 1: मूलाधार से मणिपुर तक संचार
अभ्यास 2: मणिपुर से आज्ञा चक्र तक संचार
अभ्यास 3: मूलाधार से आज्ञा तक (पिंगला नाड़ी के द्वारा)
अभ्यास 4: मूलाधार से आज्ञा तक (सुषुम्ना के द्वारा)

इस अध्याय में प्राण को दिशान्तरित करने की क्षमता को जाँच कर उसे और अधिक विकसित करने पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। प्राण का जागरण मूलाधार में होता है और सजगता के साथ उसे आज्ञा तक ले जाया जाता है, जहाँ उसे संचित किया जाता है। इस प्रक्रिया में प्राण केवल एक दिशा में संचालित होता है, ऊपर की ओर। यह संचरण पूरक के समय होता है। रेचक के समय प्राण को आज्ञा में छोड़ कर केवल श्वास तथा सजगता नीचे मूलाधार में लौट आती हैं। प्राण विद्या की इस अवस्था में आज्ञा चक्र अभ्यास का केन्द्र बिंदु, और आगे की अवस्था में प्राण के वितरण के लिए नियंत्रण केन्द्र बन जाता है।

प्रारंभ में प्राण की चेतन और नियंत्रित ऊर्ध्व गति सहज श्वास के साथ पिंगला नाड़ी के द्वारा होती है। कुछ समय के बाद अभ्यास में दृढ़ता लाने के लिए उज्जायी प्राणायाम तथा खेचरी मुद्रा को भी उसमें सम्मिलित कर दिया जाता है। यह स्मरण रखना चाहिए कि अभ्यास के दौरान खेचरी मुद्रा को आराम से करने में थोड़ा समय लग सकता है, विशेष रूप से लेटी हुई अवस्था में।

अभ्यास 1 और 2 में पिंगला नाड़ी का दो अवस्थाओं में प्रयोग किया जाता है– पहली अवस्था में मूलाधार से मणिपुर तक जाना और दूसरी अवस्था में

मणिपुर से आज्ञा चक्र तक जाना। केवल सीखने के उद्देश्य से पिंगला नाड़ी के परिक्रमण को इस प्रकार विभाजित किया गया है। अभ्यास 3 में अभ्यास 1 और 2 के कौशल को संयुक्त कर दिया जाता है और उज्जायी प्राणायाम एवं दृढ़ एकाग्रता की सहायता से साधक पिंगला नाड़ी के माध्यम से ऊर्जा को मूलाधार से आज्ञा तक उठाना आरंभ करता है। इसके लिए गहन एकाग्रता की आवश्यकता होती है और इसमें पूर्णता प्राप्त करने में समय लगता है। अभ्यास 4 में सुषुम्ना नाड़ी का प्रयोग किया जाता है।

जो प्राण आज्ञा चक्र में संचित किया गया है उसे प्रत्येक अभ्यास के अंत में मूलाधार में लौटा दिया जाना चाहिए। प्राण की वापसी प्राण विद्या की एक महत्त्वपूर्ण अवस्था है, क्योंकि इससे ऊर्जा एवं चेतना, दोनों अपनी सामान्य अवस्था में लौट आती हैं। इस प्रक्रिया को अभ्यास की प्रारंभिक अवस्था जैसी तीव्र सजगता एवं एकाग्रता के साथ किया जाना चाहिए।

प्राण के मूलाधार में लौट आने के बाद इस पर ध्यान देना आवश्यक है कि सभी इंद्रियाँ सामान्य रूप से कार्य कर रही हैं और चेतन रूप से नियंत्रण में हैं। शरीर में हल्कापन होना चाहिए, इंद्रियबोध में कोई बाधा नहीं हो और समझ भी विद्यमान हो। साधक को अपने शरीर की स्थिति के प्रति और इस तथ्य के प्रति भी सजग रहना चाहिए कि अब शरीर को हिलाया जाना है। इस प्रकार कुछ मिनटों तक सजगता एवं इंद्रियबोध को क्रमबद्ध ढंग से जाँच लिया जाना चाहिए। जब यह कर लिया गया हो, तभी, और केवल तभी प्राण विद्या का अभ्यास समाप्त होगा।

कभी-कभी ऐसा होता है कि कुछ इंद्रियबोध ही कार्य कर रहे होते हैं। जैसे, दृश्यबोध में समझ सम्मिलित नहीं होती है, या दृश्य एवं श्रवणबोध तो विद्यमान रहता है लेकिन समय की सजगता नहीं रहती है। इस समस्या का अत्यंत सरल समाधान है– अभ्यास के अंतिम भाग को दुहराएँ। प्राण को आज्ञा से मूलाधार में वापस ले जाने की कई आवृत्तियाँ करें। कुछ देर बाद आँखों को खोला जा सकता है और इंद्रियों की सामान्य चेतनता की पुनः जाँच की जा सकती है।

प्रारंभिक अभ्यासियों को शायद ही इस समस्या का सामना करना पड़ता है; अधिकतर अभ्यास के उन्नत स्तरों पर ही ऐसा होता है। यही कारण है कि अभ्यासी को बताए गये क्रम में ही एक अवस्था से दूसरी अवस्था में आगे बढ़ना चाहिए। न तो एक अवस्था को छोड़ने का प्रयास करना चाहिए, और

न ही किसी क्रम में शीघ्रता करनी चाहिए। प्रत्येक अवस्था को क्रमशः दृढ़ करते जाना चाहिए। प्राण विद्या के अभ्यास को प्रारंभिक अवस्थाओं से ही आरम्भ करना चाहिये और इन्हें किसी योग्य व्यक्ति के मार्गदर्शन में ही किया जाना चाहिए ताकि प्राण को देखने का अनुभव हो सके और आत्मविस्मृति का खतरा कम हो।

अभ्यास 1: मूलाधार से मणिपुर तक संचार

अवस्था 1: तैयारी

जब आप अपने चयनित आसन में स्थिर हो गये हों तब अपने शरीर और मन को शान्त कर लें।

यदि आप बैठे हों, तो यह ध्यान रखें कि आपका भार दोनों ओर संतुलित रहे।

अपनी श्वसन प्रक्रिया का निरीक्षण आरंभ करें।

श्वास अंदर लेते और बाहर छोड़ते समय शरीर को पूरी तरह विश्राम की अवस्था में ले आयें। आप बिल्कुल स्थिर हैं।

स्वयं को मानसिक रूप से कहें, "मैं पूरे अभ्यास के दौरान नहीं हिलूँगा। मैं सजग और जागरूक रहूँगा।"

अपने शरीर के अंदर जाएँ और संपूर्ण शरीर के आंतरिक आकाश की एकीकृत सजगता का इस प्रकार विकास करें मानो आपके अंदर केवल हवा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, केवल भारहीन हवा है; आपका भौतिक अंग केवल स्पर्शेन्द्रिय है, आपकी त्वचा।

आप एक गुब्बारे के समान अंदर से खाली हैं।

इस आंतरिक शून्य की अनुभूति को तीव्र करें।

अवस्था 2: चक्रों एवं नाड़ियों का मानस-दर्शन

सुषुम्ना नाड़ी का मानस-दर्शन एक पतले, पारदर्शक या श्वेत धागे के रूप में करें, जो मेरुदण्ड-पथ में मूलाधार से आज्ञा चक्र तक सीधे ऊपर जाता है।

इस नाड़ी का स्पष्ट रूप से मानस-दर्शन करें और देखें कि चमकीले चक्र इस नाड़ी में मणियों या प्रकाश बिंदुओं के समान गुँथे हुए हैं।

सुषुम्ना के आधार में प्रकाश ऊर्जा के प्रथम स्रोत, मूलाधार चक्र पर ध्यान केन्द्रित करें।

इसे दमकता हुआ देखें और इस बिंदु पर हल्के स्पंदन का अनुभव करें।

अपनी सजगता को ऊपर ले जाएँ और अनुत्रिक के छोर पर दूसरे प्रकाश बिंदु, स्वाधिष्ठान चक्र को देखें।

अपनी कल्पना से इसे अधिक चमकता हुआ देखें और इसके हल्के स्पंदन का अनुभव करें।

नाभि के पीछे सुषुम्ना नाड़ी में तीसरे प्रकाश बिन्दु, मणिपुर चक्र के प्रति सजग हो जाएँ।

मणिपुर चक्र में हल्के स्पंदन का और प्रत्येक स्पंदन के साथ प्रकाश बिन्दु या मणि की चमक में वृद्धि का अनुभव करें।

अंततः इन तीन चक्रों– मूलाधार, स्वाधिष्ठान और मणिपुर का एक साथ मानस-दर्शन करें और उस दृश्य को अधिक प्रखर बनायें।

इड़ा एवं पिंगला नाड़ियों के प्रति सजग हो जाएँ।

उनके घुमावदार प्रकाश को प्रत्येक चक्र पर एक-दूसरे को काटते हुए देखें।

मूलाधार से पिंगला दायीं ओर और इड़ा बायीं ओर घूम जाती है। वे दोनों एक-दूसरे को स्वाधिष्ठान पर काटती हैं, उसके बाद पिंगला बायीं ओर और इड़ा दायीं ओर घूम कर मणिपुर में एक-दूसरे को पार करती हैं।

मूलाधार, स्वाधिष्ठान एवं मणिपुर के बीच जब इड़ा और पिंगला इन तीन चक्रों से घूमती हुई जाती हैं तब वहाँ चमकते हुई अंग्रेजी के आठ की आकृति का मानस-दर्शन करें।

अवस्था 3: प्राण को घुमाना

जब आठ की आकृति स्पष्ट दिखाई देने लगे तब अपनी सजगता को मूलाधार में ले जाएँ और इसे पिंगला नाड़ी का अनुसरण कर रहे प्राण के साथ प्रवाहित होने दें।

नीलाभ श्वेत प्रकाश की यह धारा मूलाधार से निकल कर दायीं ओर से स्वाधिष्ठान में प्रवेश करती है, उसके बाद स्वाधिष्ठान से बाहर निकल जाती है और बायीं ओर से मणिपुर में प्रवेश कर जाती है। सजगता को

घुमाएँ और इड़ा नाड़ी के माध्यम से अवरोहण आरंभ करें। यह मणिपुर से निकल कर दायीं ओर से स्वाधिष्ठान में प्रवेश करती है, स्वाधिष्ठान से निकल कर बायीं ओर से मूलाधार में प्रवेश करती है।
सावधानी और एकाग्रता के साथ इस मार्ग का अनुसरण करें।
इस अभ्यास को तब तक जारी रखें जब तक आपकी सजगता आठ की आकृति पर ऊपर-नीचे निर्बाध संचालित न होने लगे।

अवस्था 4: श्वास की सजगता

जब यह सुगमतापूर्वक होने लग जाए तब अपनी सजगता की सहज, घुमावदार गति को श्वास के साथ समन्वित कर लें।
पूरक करते समय प्राण एवं सजगता को पिंगला नाड़ी में मूलाधार से मणिपुर तक प्रकाश-धारा के रूप में आरोहण करते हुए देखें।
श्वास एवं प्राण को बिल्कुल एक साथ मणिपुर में पहुँचना चाहिए।
उसके बाद रेचक के साथ प्राण इड़ा के माध्यम से इस प्रकार मूलाधार की ओर अवरोहण करता है मानो यह श्वास पर सवार हो।
श्वास और प्राण को बिल्कुल एक साथ मूलाधार में प्रवेश करना चाहिए।
पूरी तरह सतर्क एवं सजग रहें।
प्राण की गति को श्वास के साथ समन्वित करते रहें।

अवस्था 5: अभ्यास की समाप्ति

इस अभ्यास को बंद कर दें और बाहरी ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।
मानसिक रूप से पुन: अपने आस-पास के वातावरण की रचना करें।
कुछ क्षणों के लिए अपनी श्वास पर ध्यान केन्द्रित करें और पूरी तरह अपने भौतिक शरीर में वापस आ जाएँ।
अपनी इंद्रियों के सही ढंग से कार्य करने की जाँच कर लें और बाह्य जगत् के प्रति सजग हो जाएँ।
धीरे-धीरे अपने शरीर को हिलाना आरंभ करें और आँखें खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 2: मणिपुर से आज्ञा चक्र तक संचार

अवस्था 1: तैयारी

अभ्यास के लिए किसी आरामदायक आसन में आ जाएँ।
आप बैठ कर या लेट कर अभ्यास कर सकते हैं।
महत्त्वपूर्ण यह है कि अभ्यास के दौरान शरीर आरामपूर्वक, सहज और स्थिर रहे।
यदि शरीर आरामदायक स्थिति में स्थिर हो गया हो तो यह देखें कि शरीर एक सीध में हो।
यह सुनिश्चित कर लें कि शरीर का भार दोनों ओर समान रूप से संतुलित हो।
अपने सिर, गरदन और मेरुदण्ड के प्रति इस प्रकार सजग हो जाएँ मानो वे एक मध्य रेखा बना रहे हों और शरीर का दायाँ एवं बायाँ भाग एक-दूसरे का प्रतिबिम्ब हो।
शरीर पूर्णत: एक सीध में संतुलित, विश्राम की अवस्था में और आराम से हो।
शरीर में विकसित हो रही स्थिरता और आंतरिक शून्य के प्रति सजग हो जाएँ।
शरीर के अंदर आंतरिक शून्य पर कुछ क्षण तक ध्यान केन्द्रित करें और इस अनुभूति को तीव्र बनाएँ।

अवस्था 2: चक्रों की स्थिति

सुषुम्ना नाड़ी और उस पर प्रकाश बिन्दुओं या चमकती हुई मणियों के समान गुँथे हुए चक्रों के प्रति सजग हो जाएँ।
पहला मूलाधार चक्र है, दूसरा स्वाधिष्ठान चक्र और तीसरा मणिपुर चक्र है।
मणिपुर चक्र पर ध्यान एकाग्र करें, इस प्रकाश बिन्दु का सम्बन्ध सौर जालक से है।
इसके ऊपर सुषुम्ना नाड़ी में चौथा प्रकाश बिन्दु, अनाहत चक्र है जो उरोस्थि के पीछे मेरुदण्ड की आंतरिक दीवार पर स्थित होता है।
अनाहत के इस प्रकाश बिन्दु पर ध्यान एकाग्र करें।
पाँचवाँ प्रकाश बिन्दु, विशुद्धि चक्र कण्ठ कूप के पीछे ग्रीवा जालक में स्थित होता है।

इस उज्जवल बिन्दु पर ध्यान एकाग्र करें।
मेरुदण्ड के शीर्ष पर मध्य मस्तिष्क में भ्रूमध्य के ठीक पीछे छठा प्रकाश बिन्दु, आज्ञा चक्र स्थित होता है।
इस बिन्दु पर अपना ध्यान एकाग्र करें।
मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञा चक्र के प्रति सजगता को इस प्रकार तीव्र बनाते जाएँ कि इन चारों को आप एक झलक में देख सकें।
इन सब को चमकते हुए, देदीप्यमान और स्पन्दित होते हुए देखें।

अवस्था 3: इड़ा एवं पिंगला का मानस-दर्शन

प्रत्येक चक्र पर एक-दूसरे को काटती हुई इड़ा एवं पिंगला नाड़ियों के चमकते हुए पथों के प्रति सजग हो जाएँ।
मणिपुर से पिंगला बायीं ओर तथा इड़ा दायीं ओर घूम जाती है। अनाहत पर एक-दूसरे को पार करती हुई पिंगला बाएँ और इड़ा दाएँ घूम जाती है। वे विशुद्धि को पार करती हैं, उसके बाद पिंगला दायीं ओर घूम कर आज्ञा में प्रवेश कर जाती है, जबकि इड़ा बाएँ घूम कर आज्ञा में प्रवेश करती है।
चार चमकीले प्रकाश बिन्दुओं के बीच अंतर्ग्रंथित इड़ा एवं पिंगला के घुमावदार मार्गों का मानस-दर्शन करें।

अवस्था 4: प्राण को घुमाना

जब यह दृश्य पूर्णत: स्पष्ट हो जाए तब अपनी सजगता को मणिपुर में ले जाएँ और सजगता के साथ पिंगला नाड़ी का अनुसरण करते हुए आरोहण आरंभ करें।
यह दीप्तिमान प्रकाश की धारा मणिपुर से निकल कर दायीं ओर से अनाहत में प्रवेश कर जाती है।
उसके बाद यह अनाहत से निकलती है और बायीं ओर से विशुद्धि में प्रवेश कर जाती है।
विशुद्धि से निकलकर यह दायीं ओर घूमती हुई आज्ञा में प्रवेश कर जाती है।
अब प्राण के साथ इड़ा-मार्ग से अवरोहण आरंभ करें।
इड़ा बायीं ओर से आज्ञा से निकलती है और बायीं ओर से ही विशुद्धि में प्रवेश करती है।

फिर विशुद्धि से निकलकर यह दायीं ओर से अनाहत में प्रवेश कर जाती है। अनाहत से निकलकर यह मणिपुर की ओर घूम जाती है और बायीं ओर से उसमें प्रवेश कर जाती है।

अब इन दोनों अभ्यासों को संयुक्त कर दें और मणिपुर से आज्ञा तक पिंगला के द्वारा आरोहण एवं आज्ञा से मणिपुर तक इड़ा के द्वारा अवरोहण करें।

सावधानी और एकाग्रता के साथ इस मार्ग का अनुगमन करते जाएँ।

अवस्था 5: श्वास की सजगता

जब यह अभ्यास सफलतापूर्वक होने लगे तब प्राण की गति और सजगता को श्वास के साथ समन्वित कर दें।

जब आप श्वास लेते हैं तब पिंगला नाड़ी के द्वारा मणिपुर से आज्ञा तक श्वास के साथ ही प्राण के प्रवाह का अनुभव या मानस-दर्शन करते हुए आरोहण करें।

उसके बाद प्राण श्वास के साथ इड़ा नाड़ी के घुमावदार मार्ग द्वारा मणिपुर तक अवरोहण करता है।

रेचक का अंत और प्राण का मणिपुर में प्रवेश एक साथ होना चाहिए।

प्राण की गति को श्वास के साथ समन्वित करते हुए सजगता को इन पथों में घुमाते रहें।

अवस्था 6: अभ्यास की समाप्ति

अगले रेचक के बाद नाड़ियों और प्राण के अवलोकन की सजगता को छोड़ दें।

ध्यान को श्वास पर एकाग्र करें।

श्वास की ध्वनि पर, नासिकाओं, छाती और उदर में श्वास की अनुभूति पर ध्यान केन्द्रित करें।

शरीर के अंदर विद्यमान श्वास का अनुभव करें।

श्वास को थोड़ा गहरा बनायें और भौतिक शरीर का अनुभव करें।

अपनी शारीरिक भंगिमा के प्रति, शरीर के विभिन्न अंगों– सिर, गरदन और धड़ की स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ। शरीर के भार का अनुभव करें।

अब जिस कमरे में अभ्यास कर रहे है उसे देखें; उसका अधिक-से-अधिक विस्तृत रूप से मानस-दर्शन करें।

मानसिक रूप से स्वयं को कमरे के अंदर देखें।
बाहरी वातावरण की ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।
इन ध्वनियों के माध्यम से सजगता को पूर्णतः बहिर्मुख करें।
शरीर को हिलाने के लिए तैयार हो जाएँ।
अब अभ्यास पूरा हुआ।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 3: मूलाधार से आज्ञा तक (पिंगला नाड़ी के द्वारा)

अवस्था 1: तैयारी

अभ्यास के लिए तैयार हो जाएँ।
ऐसे आरामदायक आसन का चयन करें जिसमें आप पूरे अभ्यास के दौरान सुखपूर्वक रह सकें।
पूरा शरीर शान्त और स्थिर रहे।
शरीर को व्यवस्थित करें, शारीरिक स्थिति में यदि कोई परिवर्तन करना हो तो कर लें और फिर किसी प्रकार की हलचल न करें।
शारीरिक एवं मानसिक रूप से विश्रान्त हो जाएँ, शान्ति और स्थिरता को विकसित होने दें।
शरीर की पूरी संरचना, उसकी आकृति और स्वरूप के प्रति सजग हो जाएँ।
सजगता को अंतर्मुख कर लें और अन्तराकाश के प्रति, पूरे शरीर के अंदर के आकाश के प्रति सजग हो जाएँ।
उज्जायी एवं खेचरी मुद्रा का अभ्यास आरंभ करें, और अन्तराकाश में होने वाली अनुभूतियों के प्रति सजग हो जाएँ।
इस अभ्यास को कुछ देर जारी रखें।

अवस्था 2: पिंगला नाड़ी में प्राण का जागरण

अब आप मूलाधार से आरंभ होने वाली पिंगला नाड़ी में प्राण को जाग्रत करने जा रहे हैं।
मूलाधार से निकलकर यह दायीं ओर चली जाती है।

उसके बाद यह वापस मुड़ कर स्वाधिष्ठान को पार करती है।
फिर यह बायीं ओर घूमती हुई मणिपुर में आ जाती है।
दायीं ओर घूम कर यह अनाहत में पहुँच जाती है।
बायीं ओर घूम कर यह विशुद्धि से मिलती है।
और, फिर दायीं ओर घूमती हुई यह आज्ञा में प्रवेश कर जाती है।
आज्ञा से अपनी चेतना को सुषुम्ना के द्वारा नीचे की ओर सीधे मूलाधार में ले आएँ।
पूरक के साथ अपने प्राण का जागरण आरंभ करें।
उज्जायी प्राणायाम का प्रयोग करें; लंबी गहरी श्वास लें और अनुभव करें कि उज्जायी श्वास प्राण को आज्ञा की ओर खींच रही है।
उज्जायी प्राणायाम का प्रयोग करते हुए प्राण को मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि होते हुए आज्ञा तक ले जायें।
उज्जायी प्राणायाम में रेचक करते हुए सुषुम्ना के द्वारा सीधे मूलाधार तक आ जायें।
हालाँकि पूरक करते समय प्राण आज्ञा तक जाता है, लेकिन रेचक करते समय प्राण नहीं, केवल सजगता मूलाधार में वापस आती है।
ऊर्जा आरोहण करती है, लेकिन केवल सजगता अवरोहण करती है।
हर बार जब आप आज्ञा में प्रवेश करते हैं और कुछ क्षणों के लिए श्वास को वहाँ रोक कर रखते हैं, तब वहाँ पर अपनी सजगता को बनाये रखें और आज्ञा में देदीप्यमान प्रकाश के रूप में बढ़ती हुई प्राणिक ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।
तेजी से आज्ञा की ओर प्रवाहित और वहाँ संचित होती प्रकाश रेखाओं का अनुभव करते जाएँ, केवल अपनी सजगता को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा वापस लाएँ।
अधिकतम 49 चक्रों का अभ्यास करें।

अवस्था 3: प्राण को मूलाधार में लौटाना

आपने प्रकाश ऊर्जा के रूप में प्राण को आज्ञा में संचित कर लिया है। अपनी ऊर्जा के संतुलन को बनाए रखने के लिए अभ्यास के समाप्त हो जाने पर प्राण को समुचित ढंग से उसके मूल स्रोत मूलाधार में वापस ले आना चाहिए।

अपनी एकाग्रता शक्ति का प्रयोग करते हुए, और प्राण की गति को श्वास के साथ समन्वित करते हुए अपना ध्यान आज्ञा पर केन्द्रित करें और उज्जायी रेचक के साथ सुषुम्ना के द्वारा अवरोहण करते हुए प्राण को उसके स्रोत, मूलाधार पर वापस ले जाएँ।

जब आप प्राण को मूलाधार में लाकर संचित करते हैं, तब अपनी श्वास को कुछ क्षणों के लिए वहाँ रोक कर रखें, उसके बाद प्राण को साथ लिए बिना पूरक के साथ केवल अपनी सजगता को आज्ञा तक ले जाएँ।

प्रत्येक श्वास के साथ आप प्राण को मूलाधार में वापस ले जा रहे हैं।

सतर्क रहें और पूरी एकाग्रता के साथ अभ्यास को तब तक जारी रखें जब तक आप ऊर्जा को पूरी तरह उसके स्रोत में वापस नहीं ले आते।

अवस्था 4: अभ्यास की समाप्ति

उज्जायी श्वसन बंद कर दें और सामान्य श्वसन के प्रति सजग हो जाएँ।

मुँह में यदि किसी स्वाद का अनुभव हो रहा हो या श्वास के साथ कोई गंध आ रही हो तो उसके प्रति सजग हो जाएँ।

शरीर के जिन भागों का स्पर्श जमीन से हो रहा है, उनके प्रति सजग हो जायें।

धीरे-धीरे और सावधानीपूर्वक अपनी सजगता को बहिर्मुख करना आरंभ करें, अपने आस-पास के वातावरण के प्रति सजग हो जाएँ, दिन के समय का अनुमान लगाएँ।

बाहरी ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।

मानसिक रूप से अपने आस-पास के वातावरण का पुन: निर्माण करें।

कुछ मिनटों के लिए अपनी श्वास पर ध्यान एकाग्र करें और अपने भौतिक शरीर में पूर्णत: वापस आ जाएँ।

धीरे-धीरे अपने शरीर को हिलाएँ; धीरे-से अपनी आँखों को खोल दें।

यदि आँखें खोलने पर आपको लगे कि आप पूरी तरह अपने भौतिक शरीर में वापस नहीं आ पाए हैं और आपकी सजगता सामान्य नहीं हो पायी है, तो इसका अर्थ यह है कि आपने प्राण को आज्ञा से पूर्णत: हटाया नहीं है।

इसलिए अपनी आँखों को पुन: बंद कर लें और शान्ति तथा स्थिरता के साथ उज्जायी प्राणायाम करते हुए प्राण को आज्ञा से मूलाधार तक ले जाने की क्रिया को तीन बार दुहराएँ।

उसके बाद एक बार पुनः निर्देशानुसार धीरे-से अपनी सजगता को बहिर्मुख करें।
यदि आप चाहें तो हथेलियों को रगड़ कर आँखों पर रखें और धीरे-से आँखें खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 4: मूलाधार से आज्ञा तक (सुषुम्ना के द्वारा)

अवस्था 1: तैयारी

एक आरामदायक आसन में आ जाएँ, रीढ़ की हड्डी और सिर एक सीध में हों।
आँखें और मुँह धीरे-से बंद हों।
अपने पूरे शरीर और उसकी स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ; पूरे शरीर का एक इकाई के रूप में अनुभव करें।
शरीर को धीरे-धीरे स्थिर होते हुए अनुभव करें।
शरीर की स्थिरता पर ध्यान एकाग्र करें।
अपने शरीर के प्रति और शरीर के अंदर जिस स्थिरता का अनुभव हो रहा है, उसके प्रति पूर्ण सजगता।

अवस्था 2: चक्रों की सजगता

मेरुदण्ड के प्रति सजग हो जाएँ।
अपनी सजगता को मेरुदण्ड के ठीक नीचे मूलाधार क्षेत्र में ले जाएँ, और मूलाधार चक्र के प्रति सजग हो जाएँ।
मानसिक रूप से 'मूलाधार' दोहराएँ।
मेरुदण्ड के छोर पर स्वाधिष्ठान तक जाएँ।
मानसिक रूप से 'स्वाधिष्ठान' दोहराएँ।
अब अपनी सजगता को मेरुदण्ड में ऊपर, नाभि के ठीक पीछे ले जाएँ और मानसिक रूप से 'मणिपुर' दोहराएँ।
उसके बाद मेरुदण्ड में और ऊपर, हृदय के पीछे आ जाएँ।
अनाहत की स्थिति का अनुभव करें और मानसिक रूप से 'अनाहत' दुहराएँ।

अपनी सजगता को मेरुदण्ड में ऊपर, गरदन तक ले जाएँ।
कण्ठ कूप के ठीक पीछे विशुद्धि की स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ और मानसिक रूप से 'विशुद्धि' दुहराएँ।
अपनी सजगता को मेरुदण्ड के शीर्ष पर, भ्रूमध्य के ठीक पीछे मध्य मस्तिष्क में ले जाएँ।
वहाँ आज्ञा की स्थिति को देखें और मानसिक रूप से 'आज्ञा' दुहराएँ।
अंत में सिर के ऊपरी भाग पर आ जाएँ।
वहाँ सहस्रार का अनुभव करें और मानसिक रूप से 'सहस्रार' दुहराएँ।
अपनी सजगता की दिशा बदल दें और चक्रों से होते हुए पुनः नीचे चले आएँ, हर चक्र पर उसका नाम दुहराएँ।
मेरुदण्ड में चक्रों के नामों की पुनरावृत्ति करते हुए ऊपर-नीचे जाना-आना तब तक जारी रखें जब तक प्रत्येक चक्र की स्थिति का आप सुगमतापूर्वक अनुभव न करने लगें।
उसके बाद एक आंतरिक झलक में एक साथ सभी चक्रों के प्रति सजग हो जाएँ।
सभी चक्रों का एक साथ उनके सही स्थानों पर चाँदी के धागे में पिरोये गये नन्हें, देदीप्यमान प्रकाश बिन्दुओं, चमकीले हीरों या लाल माणियों के रूप में मानस-दर्शन करें।

अवस्था 3: सुषुम्ना नाड़ी में प्राण का मानस-दर्शन

अब मेरुदण्ड में मूलाधार से आज्ञा तक अतीन्द्रिय पथ का मानस-दर्शन करें।
सभी चक्रों को सुषुम्ना नाड़ी से जुड़ा हुआ देखें, जो प्रत्येक चक्र के केन्द्र को बेधती हुई ऊपर जाती है।
मेरुदण्ड में मूलाधार से आज्ञा तक जाने वाले इस पथ की सजगता को बढ़ाते जायें।
अब हम प्राण को जाग्रत करने जा रहे हैं।
याद रखें कि प्राण का मानस-दर्शन प्रकाश रेखाओं या तीव्र गति से गतिमान प्रकाश कणों के रूप में किया जाता है।
प्राण के अस्तित्व का अनुभव प्राप्त करने के लिए पहले सुषुम्ना नाड़ी में प्राणिक ऊर्जा के आरोहण-अवरोहण के प्रति सजग हो जाएँ।

प्राणिक ऊर्जा के उद्गम स्थान मूलाधार चक्र से उसके वितरण केन्द्र आज्ञा चक्र तक प्राण की गति का अनुभव करें।
प्राण का अनुभव एक चित्र के रूप में नहीं, बल्कि शरीर के अंदर वास्तव में गतिमान ऊर्जा के रूप में करना है।
मूलाधार से आज्ञा चक्र तक मेरुदण्ड के समानान्तर प्राणिक मार्ग सुषुम्ना में प्राण के प्रवाह की अनुभूति अभ्यास के साथ बिल्कुल स्पष्ट होती जाती है।

अवस्था 4: आज्ञा में प्राण का संचय

जब सुषुम्ना नाड़ी का स्पष्ट अनुभव होने लगे तब सहज रूप से पूरक करें और प्राण की सजगता को सुषुम्ना में मूलाधार से आज्ञा तक ले जाएँ।
सजगता को आज्ञा पर एकाग्र करें और प्राण को वहाँ संचित करते हुए श्वास को दो सेकेण्ड तक रोक कर रखें।
उसके बाद प्राण को आज्ञा में छोड़ कर रेचक करते हुए उसी मार्ग से नीचे मूलाधार में लौट आएँ।
आपको चक्रों का नाम नहीं दुहराना है; जब आप उन्हें पार करते हुए बढ़ते हैं तब केवल उनकी स्थिति के प्रति सजग रहना है।
पुनः श्वास लेते समय मूलाधार से आज्ञा तक सुषुम्ना के द्वारा प्राण शक्ति के आरोहण का अनुभव करें।
जब आप श्वास को आज्ञा पर दो सेकेण्ड के लिए रोकते हैं तब सजगता को वहाँ केन्द्रित करें।
चेतना और प्राण के श्वास के साथ प्रत्येक आरोहण के अंत में आज्ञा में एक क्षणिक कुंभक लग जाता है; श्वसन अनवरत चलने वाली प्रक्रिया नहीं है।
पूरक के साथ आरोहण करने के बाद रेचक करने से पूर्व श्वास को आज्ञा पर दो सेकेण्ड के लिए रोक लें।
रेचक के साथ सजगता को मूलाधार में वापस ले आएँ।
जब आप श्वास को दो सेकेण्ड के लिए आज्ञा में रोकते हैं, तब उसके साथ सजगता और प्राण को आज्ञा पर केन्द्रित करें, उसके बाद रेचक करते हुए मूलाधार में लौट आएँ; इसी प्रकार अभ्यास जारी रखें।

प्रत्येक पूरक के साथ मूलाधार से आज्ञा तक आरोहण करने वाले प्राण के प्रति सजग रहें।

प्रत्येक रेचक के साथ आज्ञा से मूलाधार तक नीचे जाने वाली श्वास के प्रति सजग रहें।

पूरक और रेचक के बीच आज्ञा पर दो सेकेण्ड के लिए कुम्भक के रूप में एक छोटा अंतराल हो जाता है।

कुम्भक के दौरान आज्ञा चक्र में प्राण पर अपनी सजगता को केन्द्रित कर दें।

सुषुम्ना में प्राण के प्रवाह के प्रति अपनी सजगता को बढ़ाते जाएँ।

सोएँ नहीं और अपने मन को भटकने नहीं दें।

पूरक के दौरान सजगता और प्राण सुषुम्ना में एक साथ आरोहण करते हैं तथा रेचक के दौरान सजगता नीचे अवरोहण करती है।

सुषुम्ना नाड़ी में ऊपर की ओर प्रवाहित होने वाले प्राण की गति का तीव्रता से अनुभव किया जाना चाहिए।

इस अभ्यास में सजगता को भी घुमाया जाता है।

सुषुम्ना नाड़ी में प्राण के प्रवाह की वास्तविक अनुभूति को उत्पन्न करने के लिए सजगता को घुमाएँ, उसके बाद रेचक के साथ सजगता के नीचे लौटने पर विश्रान्त हो जाएँ।

प्रत्येक पूरक के साथ मूलाधार से आज्ञा तक आरोहण करने वाले प्राण के प्रति सजगता को बढ़ाते जायें, इस प्राण का स्वरूप सुषुम्ना में आरोहण करने वाले श्वेत प्रकाश की धारा के समान होता है।

पूरक के अंत में श्वास एवं प्राण को भ्रूमध्य, अर्थात् आज्ञा चक्र पर पूर्ण एकाग्रता के साथ दो सेकेण्ड तक केन्द्रित करें, और वहाँ पर संचित होती हुई ऊर्जा का अनुभव करें।

उसके बाद रेचक करते हुए सुषुम्ना के द्वारा आज्ञा से मूलाधार तक केवल सजगता के साथ अवरोहण करें।

इसका अभ्यास 27 बार किया जा सकता है।

अवस्था 5: प्राण को मूलाधार में लौटाना

अब आप प्राण को आज्ञा चक्र से, जहाँ इसे संचित किया गया है, मूलाधार में वापस लायेंगे।

अपनी पूरी सजगता को आज्ञा चक्र पर केन्द्रित कर दें; आपने जिस प्राणिक ऊर्जा को वहाँ संचित किया है, उसके प्रति सजग हो जाएँ।
इस प्रबल शक्ति का मानस-दर्शन चौंधिया देने वाले दीप्तिमान श्वेत प्रकाश के रूप में करें।
आज्ञा पर ऊष्मा या स्पंदन जैसी किसी भी अनुभूति के प्रति सजग हो जाएँ।
उसके बाद धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक रेचक के साथ सुषुम्ना के द्वारा प्राण को मूलाधार की ओर वापस ले जाना आरंभ करें।
सुषुम्ना के द्वारा श्वेत प्रकाश की धारा के अवरोहण का मानस-दर्शन करें।
संपूर्ण प्राण को वापस ले आना अत्यंत आवश्यक है, इसलिए क्रमिक ढंग से प्राण को तब तक मूलाधार में लौटाते रहें जब तक आपको यह विश्वास न हो जाए कि अब आज्ञा में लेष मात्र भी प्राण शेष नहीं रह गया है।

अवस्था 6: अभ्यास की समाप्ति

जब आप आश्वस्त हो जाएँ कि संपूर्ण प्राण लौटा दिया गया है तब चक्रों एवं नाड़ियों की सजगता को छोड़ दें और श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।
धीरे-से पुन: अन्नमय कोश, अर्थात् स्थूल भौतिक शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
आस-पास की, दूर और निकट की सभी ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ; अपने चारों ओर के वातावरण का पुनर्निर्माण करें।
यह जाँच कर लें कि सभी इंद्रियाँ सही ढंग से कार्य कर रही हैं।
मुँह में स्वाद के प्रति सजग हो जाएँ, जीभ और ओठों को थोड़ा हिलाएँ।
कुछ क्षणों के लिए अपनी श्वास पर ध्यान केन्द्रित करें और घ्राण शक्ति के प्रति सजग हो जाएँ।
यदि आपको अनिश्चितता का अनुभव हो रहा हो या अपनी इन्द्रियों तथा भौतिक शरीर का सही ढंग से अनुभव नहीं हो रहा हो, तो सुषुम्ना के द्वारा प्राण को नीचे ले जाने की प्रक्रिया को कुछ और बार दुहरायें।
यह जाँच लें कि आप पूरी तरह अपने भौतिक शरीर में लौट आए हैं, उसके बाद धीरे से शरीर को हिलाएँ, हथेलियों को रगड़ कर आँखों पर रखें और अपनी आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास टिप्पणी: प्रारम्भ में अभ्यासी को 27 चक्रों से अधिक अभ्यास नहीं करना चाहिए। समय के साथ चक्रों की संख्या को धीरे-धीरे अधिकतम 49 तक बढ़ाया जा सकता है। यद्यपि जब प्राण के जागरण की स्पष्ट अनुभूति होने लगे तब 49 चक्रों तक गिनती करना आवश्यक नहीं रह जाता है। एक बार जब प्राण के जागरण की वास्तविक अनुभूति हो जाए और मूलाधार से आज्ञा चक्र तक प्राण शक्ति के संचालित होने का स्पष्ट अनुभव होने लगे, तब साधक प्राण विद्या में आगे बढ़ सकता है, उपचार के उद्‌देश्य से प्राण का विस्तार और वितरण कर सकता है।



13

प्राण का प्रसार, साम्यता एवं संकुचन

उज्जायी के साथ प्रसार आरंभ करना

अभ्यास 1: प्रसार एवं साम्यता
अभ्यास 2: प्रसार एवं संकुचन

प्राण का जागरण एवं प्रसार

अभ्यास 3: प्रसार एवं साम्यता (चक्रों की सजगता के साथ)
अभ्यास 4: प्रसार एवं संकुचन (पंच प्राणों की सजगता के साथ)

इस अध्याय में पहले प्राणमय कोश के 'प्रसार एवं साम्यता' और उसके बाद उसके 'प्रसार एवं संकुचन' के अभ्यास को सम्मिलित किया गया है। इन दोनों अभ्यासों में उज्जायी प्राणायाम का प्रयोग किया जाता है, जिससे सुगमता से सूक्ष्म तथा अतीन्द्रिय अनुभव प्राप्त होते हैं। उज्जायी प्राणायाम के आवेग से पूरक करते समय प्राणमय कोश का प्रसार होता है और रेचक करते समय वह या तो साम्यावस्था में आता है या संकुचित होता है।

यद्यपि उज्जायी का अभ्यास किया जा रहा है, तथापि सजगता प्रसार एवं साम्यता या प्रसार एवं संकुचन के अनुभव के साथ पूर्णत: एकाकार हो जानी चाहिए। समग्र चेतना, सम्पूर्ण कल्पना शक्ति प्रसार और साम्यता या

संकुचन पर केन्द्रित हो जाती है, उज्जायी प्राणायाम की प्रक्रिया पृष्ठभूमि में साथ-साथ चलती रहती है।

कुछ अभ्यासियों को उज्जायी प्राणायाम से अपनी सजगता को अलग करने में कठिनाई हो सकती है। ऐसी स्थिति में इस बात के प्रति सजग हो जाना चाहिए कि जप या अजपा में सजगता किस प्रकार श्वास से मंत्र पर चली जाती है। इसकी विधि भी समान ही है, अर्थात् पूरक और रेचक उसी प्रकार चलते हैं, लेकिन सजगता प्राणमय कोश के प्रसार और साम्यता या संकुचन पर रहती है। जब प्राण के प्रसार और संकुचन या साम्यता का स्पष्ट अनुभव होने लगता है तब सजगता को धीरे-धीरे श्वास से हटा दिया जाता है।

उच्च अभ्यास में शरीर के रोम कूप श्वसन क्रिया के माध्यम बन जाते हैं। यह उज्जायी श्वसन सर्वव्यापी बन जाता है। प्रारम्भ में कल्पना का सहारा लिया जा सकता है; यद्यपि जब अभ्यास गहरा होता जाता है तब साधक इस अनुभव के प्रति सजग हो जाता है कि शरीर का प्रत्येक रोम कूप श्वास के साथ ऊर्जा को ग्रहण कर रहा है और बाहर निकाल रहा है। पूरक में शरीर के प्रत्येक रोम कूप के द्वारा ऊर्जा अंदर जाती है और वह गुब्बारे के समान फूल जाता है। रेचक में ऊर्जा शीघ्रतापूर्वक प्रत्येक रोम कूप से बाहर निकल जाती है और शरीर रूई के समान हल्का हो जाता है। प्राण विद्या के संपूर्ण अभ्यास में उज्जायी की मूल श्वसन प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता है।

सत्ताईस चक्रों से आरंभ कर उनचास चक्रों तक ले जाएँ। एक सत्र में उनचास चक्रों से अधिक अभ्यास नहीं किया जाना चाहिए। प्रत्येक अवस्था के अभ्यास को धैर्यपूर्वक किया जाना चाहिए, विधियों में निपुणता प्राप्त करनी चाहिए और प्राण वितरण की ओर बढ़ने से पूर्व अनुभव में स्थिरता आ जानी चाहिए।

उज्जायी के साथ प्रसार आरंभ करना

अभ्यास 1: प्रसार एवं साम्यता

अवस्था 1: तैयारी

किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ और हाथों को घुटनों पर चिन् या ज्ञान मुद्रा में रख लें। काया स्थैर्यम् का अभ्यास करते हुए शरीर के अंदर शांति और स्थिरता का विकास करें।

अवस्था 2: उज्जायी प्राणायाम प्रारंभ करना

उज्जायी प्राणायाम प्रारंभ करें और सजगता को सूक्ष्म होने दें। प्राणमय कोश के प्रति अधिक संवेदनशील होते हुए उज्जायी श्वास की ध्वनि और लय का अनुसरण करें।

तब तक उज्जायी करते जाएँ जब तक केवल श्वास और सूक्ष्म शरीर की अनुभूति की सजगता न रह जाए।

अवस्था 3: प्रसार एवं साम्यता

अब प्राणमय कोश का प्रसार करने के लिए तैयार हो जाएँ।

प्रत्येक पूरक के साथ शरीर का प्रसार होता है, मानो यह प्रत्येक रोम छिद्र के द्वारा श्वास ले रहा हो।

प्रत्येक रेचक के साथ शरीर विश्राम की अवस्था में आता है, मानो यह प्रत्येक रोम छिद्र के द्वारा श्वास छोड़ रहा है।

उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास जारी रखें और अनुभव करें कि प्रत्येक पूरक के साथ प्रत्येक रोम छिद्र द्वारा ऊर्जा अंदर प्रवेश कर रही है; पूरक करते हुए शरीर का प्रसार करें, और रेचक करते हुए विश्राम का अनुभव करें।

यहाँ उज्जायी में अन्य अभ्यासों के समान किसी नाड़ी का अनुसरण नहीं किया जा रहा है; बल्कि उज्जायी श्वास पूरे शरीर में व्याप्त हो रही है। जब आप उज्जायी का प्रयोग करते हुए पूरक करते हैं तब प्रत्येक रोम छिद्र से श्वास अंदर जाती है और शरीर का प्रसार होता है।

जब आपका शरीर उज्जायी का प्रयोग करते हुए रेचक करता है तब प्रत्येक रोम छिद्र से ऊर्जा बाहर निकल जाती है और शरीर विश्राम करता है।

अपनी शारीरिक चेतना को श्वास की सजगता एवं प्राण के संचार के साथ समन्वित करें।

अब पूरक करते समय यह मानस-दर्शन करें कि शरीर के अंदर सभी दिशाओं में चमकता हुआ नील-श्वेत प्रकाश बिजली की गति से कौंध रहा है।

अपने सम्पूर्ण शरीर के अंदर कौंधती हुई असंख्य चिंगारियों को देखें।

उसके बाद, जब आप रेचक के साथ शरीर को विश्राम की अवस्था में लाने लगते हैं तब उन प्रकाश किरणों की गति को मन्द होते हुए देखें या उनकी चमक को कम होते हुए देखें।

इस समस्त प्रक्रिया को उज्जायी प्राणायाम के साथ समन्वित करते हुए किया जाता है।
पूरक करते हुए प्रसार करें।
रेचक करते हुए साम्यता लाएँ।
अभ्यास करते जाएँ।
आपको उज्जायी प्राणायाम का इतना अभ्यस्त हो जाना चाहिए कि यह स्वत: चलता रहे, जिससे आपकी सम्पूर्ण चेतना और सजगता प्रसार एवं साम्यता की अनुभूति पर ही केन्द्रित रहें।
अब श्वसन प्रक्रिया से अपना ध्यान हटा लें।
सम्पूर्ण चेतना प्राण शक्ति का अनुसरण करती रहे, जोकि प्राणमय कोश का प्रसार करती और साम्यता लाती है।
आपकी पूरी सजगता प्रसार और साम्यता में ही लगी रहे, श्वास पर नहीं, यद्यपि उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास पृष्ठभूमि में चलता रहता है।
इसी प्रकार 49 चक्रों तक अभ्यास करते जाएँ।

अवस्था 4: अभ्यास की समाप्ति

अब अभ्यास को समाप्त करने के लिए तैयार हो जाएँ।
प्रसार एवं साम्यता का अनुभव करना बन्द कर दें।
उज्जायी प्राणायाम करना बंद कर दें और आंतरिक आकाश के प्रति सजग हो जाएँ।
धीरे-धीरे श्वास को गहरा बनायें और एक बार पुन: भौतिक शरीर की संरचना का अनुभव करें।
शरीर की स्थूलता और उसके भार का अनुभव करें, और शरीर के नीचे जमीन या कुर्सी के आधार का अनुभव करें।
सजगता को और अधिक बहिर्मुख करें, जिस कमरे में आप हैं उसका स्मरण करें और मानसिक रूप से उसका विस्तार से मानस-दर्शन करें।
कमरे के अंदर या बाहर की, पास की या दूर की ध्वनियों के प्रति सजग बन जायें।
दिन के समय के प्रति सजग बन जायें और इस बात के प्रति अवगत हों कि आप प्राणमय कोश के प्रसार और साम्यता का अभ्यास कर रहे थे।
अब अभ्यास पूरा हुआ।

सजगता को भौतिक शरीर में वापस ले आएँ और शरीर को हिलाने के लिए तैयार हो जाएँ।
शरीर को धीरे-धीरे हिलाएँ और जब आप पूरी तरह तैयार हों, पूरी तरह बहिर्मुख हो गये हों तब धीरे-से अपनी आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास टिप्पणी : अगला अभ्यास, अभ्यास 1 के समान ही है, अन्तर केवल इतना है कि रेचक के समय प्राणमय कोश की साम्यता के स्थान पर उसका संकुचन किया जायेगा। जब चेतना एवं प्राण को संपूर्ण शरीर से वापस आज्ञा चक्र की ओर भेज दिया जाता है और उन्हें वहाँ रोक लिया जाता है तब शरीर में संकुचन होता है। यह संकुचन एक बंध होता है। इसे पूरे शरीर में मानसिक मूल बंध का अनुभव माना जा सकता है। यदि अवधारणा और मानस-दर्शन स्पष्ट हों तो पूरा शरीर अतीन्द्रिय रूप से प्रसार एवं संकुचन करेगा। यदि आप इसे नहीं कर पा रहे हों तो इसका अर्थ है कि आपको प्राण विद्या की प्रारंभिक विधियों के अधिक अभ्यास की आवश्यकता है।

अभ्यास 2: प्रसार एवं संकुचन

अवस्था 1: तैयारी

अपनी पसंद के किसी आरामदायक आसन में आ जाएँ।
स्वयं को अच्छी तरह व्यवस्थित कर लें ताकि अभ्यास के दौरान आप स्थिर रहें।
जब शरीर आराम की स्थिति में आ जाए तब इसे स्थिर हो जाने दें।
कुछ क्षणों के लिए भौतिक शरीर की सजगता को बनाए रखें, तथा और अधिक स्थिर हो जाएँ।
सजगता को श्वसन प्रक्रिया पर ले आएँ।
शरीर के अंदर प्रवाहित होने वाली प्रत्येक श्वास का अवलोकन करें।
श्वास की लय स्वाभाविक एवं सहज है।

अवस्था 2: उज्जायी प्राणायाम को प्रारंभ करना

धीरे-धीरे उज्जायी प्राणायाम प्रारंभ करें और जीभ को खेचरी मुद्रा में पीछे मोड़ लें।

कण्ठ में हल्के, गहरे उज्जायी श्वसन पर अपनी पूरी सजगता को केन्द्रित कर दें।

लय में चल रहे इस प्रवाह पर कुछ देर के लिए अपना पूरा ध्यान लगा दें; यह इतना सूक्ष्म है कि इसे सुनना कठिन है।

अवस्था 3: प्रसार एवं संकुचन

अब प्राणमय कोश के प्रसार एवं संकुचन के लिए तैयार हो जाएँ।

उज्जायी प्राणायाम के साथ पूरक करें और संपूर्ण शरीर के द्वारा प्राण को अंदर लें।

प्रत्येक रोमछिद्र के द्वारा प्राण अंदर प्रवेश करता है और ऊर्जा का प्रसार होता है।

उज्जायी प्राणायाम के साथ रेचक करें और शरीर के प्रत्येक अंग के द्वारा ऊर्जा को बाहर निकलने दें।

ऊर्जा को रोमछिद्रों के द्वारा निकल जाने दें और अनुभव करें कि प्राणमय शरीर संकुचित हो रहा है।

पूरक करते हुए मानसिक रूप से अनुभव करें कि ऊर्जा सभी दिशाओं में फैल रही है।

यह भौतिक प्रसार नहीं, बल्कि मानसिक प्रसार है।

सिर से पैर तक पूरा शरीर प्राण शक्ति से ओतप्रोत हो चुका है; इसे गहरायी तक अनुभव करें।

इसके साथ ही आपके प्राणिक शरीर का सभी दिशाओं में प्रसार हो रहा है।

जब आप रेचक करते हैं तब विश्राम करें और चेतन रूप से अपने शरीर के सभी अंगों से अपने प्राण को खींच लें।

जिस प्रकार ज्वार-भाटा के कारण समुद्र का पानी पीछे की ओर लौटने लगता है, ठीक उसी प्रकार रेचक की स्थिति में प्राण लौट जाता है और उसका संकुचन होता है।

शरीर एक समरूप इकाई के रूप में प्रसार और संकुचन करता है।

पूरक के साथ प्रसार करें।

रेचक के साथ विश्राम की अवस्था में आते हुए संकुचन करें।
कुछ देर इस अभ्यास को जारी रखें, लेकिन 49 चक्र से अधिक नहीं करें।

अवस्था 4: अभ्यास की समाप्ति

अब अभ्यास को समाप्त करने के लिए तैयार हो जाएँ।
प्रसार एवं संकुचन करना बन्द कर दें।
उज्जायी प्राणायाम और खेचरी मुद्रा का अभ्यास भी बन्द दें।
भौतिक शरीर के अंदर सहज रूप से होने वाले सामान्य श्वसन के प्रति सजग हो जाएँ। शरीर में हो रहे पूरक एवं रेचक के प्रति सजग हो जाएँ।
अपनी पसंद के जिस आसन में आप बैठे हैं उसमें अपने शरीर का, उसके आकार और स्वरूप का अनुभव करें।
धीरे-धीरे बाह्य वातावरण के प्रति, आप जिस कमरे में बैठे हुए हैं उसके प्रति, तथा बाहरी ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।
क्रमिक ढंग से अपनी इन्द्रियों को जाँच लें।
अपनी सजगता को पूरी तरह बहिर्मुख कर लें और यह सुनिश्चित कर ले कि आप पूरी तरह अपने भौतिक शरीर में वापस आ चुके हैं।
जब आप पूर्णत: आश्वस्त हों तब अपने शरीर में हलचल करें और धीरे से अपनी आँखों को खोल दें।
अब अभ्यास पूरा हुआ।

हरि ॐ तत्सत्

प्राण का जागरण एवं प्रसार

अभ्यास 3: प्रसार एवं साम्यता (चक्रों की सजगता के साथ)

अवस्था 1: तैयारी

किसी आरामदायक आसन में आ जाएँ और शरीर को विश्राम की अवस्था में लाते हुए सुनिश्चित कर लें कि यह तनावमुक्त हो चुका है।
श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।
उज्जायी प्राणायाम प्रारंभ करें और जीभ को खेचरी मुद्रा में ले आएँ।

मन में यदि कोई विचार उठ रहा हो तो उसे देखें, फिर उसे विलीन हो जाने दें। उज्जायी की ध्वनि पर तब तक ध्यान केन्द्रित रखें जब तक शरीर और मन शान्त और स्थिर न हो जाएँ।

अवस्था 2: पिंगला नाड़ी का अनुगमन

अपनी सजगता को शरीर के अंदर ले जाएँ और अंतराकाश का अवलोकन करें।

शरीर के अंदर चक्रों एवं नाड़ियों की स्थितियों का मानस-दर्शन करें।

अपनी सजगता को पिंगला नाड़ी पर ले जाएँ, जो मेरुदण्ड के एक छोर से दूसरे छोर तक वक्राकार मार्ग में घूमती हुई जाती है।

पिंगला नाड़ी में प्रवाहित होती हुई ऊर्जा के प्रति सजगता को तीव्र बनाएँ।

सावधानीपूर्वक अपनी सजगता को पिंगला नाड़ी के साथ ऊपर ले जाएँ–मूलाधार से यह दाएँ घूम कर स्वाधिष्ठान को पार कर जाती है; स्वाधिष्ठान से बाएँ घूम कर मणिपुर के पार जाती है; मणिपुर से यह दाएँ घूमती है और अनाहत को पार करती है; अनाहत से यह बाएँ घूम कर विशुद्धि को पार कर जाती है; विशुद्धि से यह दाएँ घूम जाती है और अंतत: आज्ञा चक्र में दाएँ से ही प्रवेश कर जाती है।

पिंगला नाड़ी के प्रति सजगता का विकास करें। अब उज्जायी श्वसन को पिंगला नाड़ी के प्रति सजगता के साथ समन्वित करें।

जब आप श्वास अंदर लेते हैं तब श्वास और सजगता पिंगला के साथ मूलाधार से आज्ञा की ओर आरोहण करती हैं।

जब आप श्वास छोड़ते हैं तब श्वास और सजगता एक सीधी रेखा में सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा आज्ञा से मूलाधार तक अवरोहण करती हैं।

श्वास को सजगता के आरोहण एवं अवरोहण के साथ समन्वित करें।

इसे तब तक जारी रखें जब तक यह परिक्रमण सहज रूप से न होने लगे।

अवस्था 3: प्राण का जागरण और उत्थान

इस अवस्था में प्राण के अनुभव को जाग्रत करना आरंभ करें।

पिंगला नाड़ी में प्रकाश कणों के प्रवाह का मानस-दर्शन करें।

पूरक के साथ प्राण की सजगता को पिंगला नाड़ी में मूलाधार से आज्ञा चक्र तक ले जाएँ।

प्राण को वहाँ संचित कर दें और श्वास को कुछ देर के लिए वहीं पर रोक कर रखें।

उसके बाद रेचक करें और प्राण को आज्ञा में ही छोड़ कर सुषुम्ना के द्वारा अपनी सजगता को मूलाधार में वापस ले आएँ।

मन की पूर्ण एकाग्रता और सतर्कता के साथ मूलाधार से आज्ञा तक के प्राणिक प्रवाह के प्रति सजगता का विकास करें।

अन्दर ली गयी श्वास के प्रवाह, प्राण की गति और आपकी सजगता के बीच कोई अंतर नहीं है; ये सभी मिलकर एक हो जाते हैं।

सजगता, श्वास और प्राण एक शक्ति के रूप में पिंगला नाड़ी के द्वारा मूलाधार से आज्ञा तक आरोहण करते हैं।

अब, जब आप चक्रों से होते हुए आगे बढ़ते हैं तब मानसिक रूप से प्रत्येक चक्र का नाम दुहराएँ और सजगता को बढ़ाते जाएँ।

जब आप पूरक के साथ आरोहण करते हैं तब मानसिक रूप से बोलते जाएँ– 'मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा।'

आज्ञा पर पहुँचने तक पूरक समाप्त हो जाना चाहिए।

आज्ञा पर श्वास को कुछ क्षणों के लिए रोक कर पाँच बार दुहराएँ– 'आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा।'

उसके बाद रेचक करें और श्वास तथा सजगता को सुषुम्ना के द्वारा सीधे मूलाधार में ले आएँ।

पुन: अगले पूरक के साथ प्राण को ऊपर उठाएँ।

मूलाधार पर प्राण के जागरण का और पिंगला नाड़ी के द्वारा प्राण शक्ति के उत्थान का अनुभव करें।

जब आपको इसका अनुभव हो जाएगा, केवल तभी आप प्राण विद्या की यात्रा में आगे बढ़ पायेंगे, इसलिए सावधानीपूर्वक इस सजगता का विकास करें।

सोना नहीं है।

अभ्यास के प्रति पूर्णत: सतर्क और सजग रहें, मन भटकना नहीं चाहिए।

इस अभ्यास को कुछ देर जारी रखें।

सावधानीपूर्वक सजगता के साथ मूलाधार से आज्ञा तक प्राण के प्रवाह का अवलोकन करें; अपनी श्वास और चेतना को पिंगला नाड़ी के माध्यम से प्राण शक्ति के साथ ऊपर जाने दें।

अपनी सजगता और श्वास को आज्ञा पर रोक कर रखें और प्राण की अनुभूति को तीव्र बनाएँ।

आज्ञा पर प्राण शक्ति में होने वाली वृद्धि का अनुभव करें; आज्ञा पर प्रकाश को अधिक-से-अधिक देदीप्यमान होता हुआ देखें।

अवस्था 4: प्रसार एवं साम्यता

कुछ देर के लिए उज्जायी श्वसन के लयबद्ध और समरूप प्रवाह के प्रति पूर्णत: सजग रहें।

उसके बाद श्वसन प्रक्रिया के प्रति सजगता का विकास करें और प्रत्येक रोमछिद्र से श्वास के अंदर आने और बाहर जाने की प्रक्रिया को अनुभव करना आरंभ करें।

जब आप पूरक करते हैं तब अनुभव करें कि आप पूरे शरीर की त्वचा से श्वास अंदर ले रहे हैं।

जब आप रेचक करते हैं तब अनुभव करें कि सिर से पैरों की अंगुलियों तक के लाखों सूक्ष्म रोमछिद्रों से वायु बाहर निकल रही है।

एक महत्त्वपूर्ण जीवंत इकाई के रूप में त्वचा एक संपूर्ण अंग के समान श्वास ले रही है।

कल्पना करें कि जब आप श्वास ले रहे हैं तब आपका पूरा शरीर एक गुब्बारे के समान, जिसमें हवा भरी जा रही हो, हल्के-हल्के बाहर की ओर फैलना आरंभ कर रहा है।

उसके बाद जब आप एक साथ अपने सभी रोमछिद्रों से श्वास छोड़ रहे हों तब पूरे शरीर को विश्राम की अवस्था में आने दें।

श्वास बाहर छोड़ते समय साम्यता का अनुभव।

पूरी एकाग्रता के साथ प्रत्येक श्वास को देखना जारी रखें और अनुभव करें कि पूरा शरीर श्वास ले रहा है।

पूरक करने पर आपके शरीर के अंदर का स्थान हवा से भरे जा रहे गुब्बारे की तरह समान रूप से फैल रहा है।

रेचक करने पर आपका शरीर अपने सामान्य आकार में वापस आ जाता है तथा शरीर और मन पूरी तरह विश्राम करते हैं।

प्रसार एवं साम्यता के इस अभ्यास को जारी रखें।

पूरक करने पर आपका पूरा शरीर तीव्र प्रकाश ऊर्जा की रेखाओं से भर जाता है।
रेचक करने पर आप विश्राम की अवस्था में आते हैं और इस प्रकाश ऊर्जा की गति और चमक मंद पड़ जाती है और धूमिल हो जाती है।
इस प्राणिक ऊर्जा का स्पष्ट रूप से अनुभव करें और पूरे शरीर में प्राण की गति के प्रति सजग हो जाएँ।

अवस्था 5: प्राण को मूलाधार में लौटाना

अब आप प्राण को मूलाधार में लौटाने जा रहे हैं।
श्वास लें और अपनी सजगता को आज्ञा पर रोक कर रखें; वहाँ पर आपने प्राण का जो संचय किया है, उसका अनुभव करें। आज्ञा पर चमकते हुए प्राणिक प्रकाश को देखें।
उसके बाद श्वास छोड़ते हुए, प्राण को सुषुम्ना के द्वारा सीधे मूलाधार में ले जाएँ।
श्वास लें और केवल सजगता को आज्ञा में ले जाएँ, श्वास छोड़ें और सजगता एवं प्राण को सुषुम्ना के द्वारा मूलाधार में ले जाएँ।
यह अभ्यास तब तक जारी रखें जब तक आप इस बात से आश्वस्त न हो जाएँ कि समस्त प्राण को मूलाधार में लौटाया जा चुका है।

अवस्था 6: अभ्यास की समाप्ति

जब समस्त प्राण मूलाधार चक्र में लौट जाएँ तब चक्रों एवं नाड़ियों की सजगता का त्याग कर दें।
उज्जायी प्राणायाम और खेचरी मुद्रा को भी छोड़ दें।
भौतिक शरीर के अंदर चलने वाले स्वाभाविक श्वास की सहज गति के प्रति सजग हो जाएँ।
अपने पूरे शरीर और इसकी स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।
धीरे-धीरे बाहरी वातावरण, कमरे और बाहरी ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।
क्रमिक ढंग से अपनी इन्द्रियों की जाँच कर यह सुनिश्चित कर लें कि आप सामान्य अवस्था में वापस आ गये हैं।
यदि आवश्यक हो तो अतिरिक्त प्राण को मूलाधार में लौटाने के लिए आज्ञा से मूलाधार की ओर कुछ और बार अवरोहण करें।

अपनी सजगता को पूर्णतः बहिर्मुख कर लें और यह सुनिश्चित कर लें कि आप पूरी तरह अपने अन्नमय कोश, अर्थात् स्थूल शरीर में लौट आए हैं।

धीरे-धीरे अपने अंगों को हिलाना आरंभ करें और जब आप पूरी तरह अपने शरीर में वापस आ चुके हों, तब धीरे-से अपनी आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 4: प्रसार एवं संकुचन (पंच प्राणों की सजगता के साथ)

अवस्था 1: तैयारी

जब आप अपने चयनित आसन में सुखपूर्वक स्थिर हो गये हों तब अपने शरीर और मन को शांत हो जाने दें।

यदि आप बैठे हुए हैं तो यह सुनिश्चित कर लें कि आपके शरीर का भार दोनों ओर समान रूप से संतुलित है।

उज्जायी प्राणायाम आरंभ करें।

जब आप श्वास लेते और छोड़ते हैं तब शरीर को पूर्णतः विश्राम की अवस्था में आने दें।

आप पूरी तरह अचल हैं। आप स्वयं को मानसिक रूप से कहें, "मैं पूरे अभ्यास के दौरान नहीं हिलूँगा। मैं सजग और सतर्क रहूँगा।"

शरीर के अंदर जाएँ और एक इकाई के रूप में शरीर के आंतरिक आकाश के प्रति सजगता का विकास करें, मानो आप अंदर से बिल्कुल खाली हैं; वहाँ केवल वायु भरी हुई है और एक बाहरी खोल है।

अंदर कुछ भी नहीं, केवल भारहीन वायु है, आपका केवल एक भौतिक अंग है, त्वचा। आप एक गुब्बारे के समान खोखले हैं।

अंदर के शून्य स्थान के प्रति सजगता को बढ़ातें जायें।

अवस्था 2: पंच प्राणों का मानस-दर्शन

प्रकाश की रेखाओं के रूप में पूरे शरीर में व्याप्त व्यान ऊर्जा का अनुभव या उसका मानस-दर्शन करें।

शरीर के प्रत्येक भाग में प्रकाश की नील-श्वेत धाराओं को शीघ्रतापूर्वक कौंधते हुए देखें, जो सिर से पैर तक पूरे शरीर में व्याप्त हो रही हैं।
पूर्ण सजगता के साथ इस सूक्ष्म गति का अनुभव करें।
उसके बाद हाथों, पैरों और सिर में प्रकाश ऊर्जा की कुण्डलियों, छल्लों या गोलों के रूप में उदान का मानस-दर्शन करें, जो शरीर के छोरों की ओर दक्षिणावर्त गतिमान रहता है।
यह नितंबों से पैरों की अंगुलियों तक, कंधों से हाथों की अंगुलियों तक और गले से सिर के शीर्ष तक तीव्र गति के साथ कुण्डलित होता हुआ जाता है।
शरीर के छोरों पर निरंतर गतिमान इस कुण्डलित ऊर्जा का तत्काल मानस-दर्शन करें।
उसके बाद मध्यपट और नाभि के बीच समान ऊर्जा पर ध्यान केन्द्रित करें।
करघे पर द्रुत गति से चलने वाले शटल की तरह बाएँ से दाएँ और पुनः वापस आती हुई प्रकाश तरंगों के रूप में इसका अनुभव करें।
अनुभव और मानस-दर्शन एक साथ होना चाहिए।
समान को छोड़ अपान के प्रति सजग हो जाएँ। यह ऊर्जा नाभि और मूलाधार के बीच अवरोहण करने वाली प्रकाश तरंगों के रूप में गतिमान रहती है।
अंत में प्राण के प्रति सजग हो जाएँ, जो मध्यपट और कण्ठ के बीच आरोहण करने वाली प्रकाश तरंगों के रूप में गतिमान है।
शरीर के अंदर अपने निश्चित स्थानों में गतिमान इन पाँच प्राणों के प्रति सजग रहें।

अवस्था 3: पिंगला नाड़ी का अनुगमन

पंच प्राणों की सजगता को छोड़ दें।
मूलाधार एवं आज्ञा चक्र के बीच मेरुदण्ड का मानस-दर्शन करें।
मेरुदण्ड के अंदर पारदर्शक या रुपहले-श्वेत अतीन्द्रिय मार्ग को देखें।
इस पर धागे में गुँथी हुई चमकीली मणियों के रूप में चक्रों को देखें।
उसके बाद देदीप्यमान पिंगला नाड़ी को बुनना आरंभ करें; यह मूलाधार के दाएँ से निकलती है, दाएँ घूम कर स्वाधिष्ठान को पार करती है, उसके बाद बाएँ घूम कर मणिपुर से आगे निकल जाती है। वहाँ से

यह दाएँ घूम कर अनाहत को पार करती है, तत्पश्चात् बाएँ घूमती हुई विशुद्धि को पार करती है और अंततः दाएँ घूम कर आज्ञा में चली आती है।
आज्ञा से अवरोहण करती हुई पिंगला नाड़ी दाएँ घूम कर विशुद्धि को पार करती है, बाएँ घूम कर अनाहत, दाएँ घूम कर मणिपुर, बाएँ घूम कर स्वाधिष्ठान और अंततः दाएँ घूम कर मूलाधार में लौट आती है, जहाँ से इसने अपनी यात्रा आरंभ की थी।
अपनी सजगता को धीरे-धीरे और समान गति से इस मार्ग पर ऊपर-नीचे ले जाएँ, पिंगला के प्रति सजगता को बढ़ाते जायें।
अब प्राणिक प्रकाश की तरंगों या रेखाओं की पिंगला में चक्राकार गति का मानस-दर्शन और अनुभव करें।
इस मार्ग पर प्राण प्रवाह की संवेदना का वास्तव में अनुभव करें।
जब आप प्राण का मानस-दर्शन करते हैं तब उज्जायी श्वास को आरोहण और अवरोहण करने वाली सजगता के साथ समन्वित करें।
पूरक के साथ प्राण मूलाधार से आरोहण आरंभ कर स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत और विशुद्धि से होता हुआ आज्ञा तक जाता है।
रेचक के साथ प्राण आज्ञा से आरंभ कर विशुद्धि, अनाहत, मणिपुर, स्वाधिष्ठान से अवरोहण करता हुआ मूलाधार में पहुँच जाता है।
पिंगला नाड़ी के पथ पर श्वास, प्राण और चेतना की मन्द, समरूप गति का अवलोकन करते जायें।
अब तक आपको इस प्रक्रिया का इतना अभ्यस्त हो जाना चाहिए कि आपको इसके विषय में सोचने की भी आवश्यकता न पड़े।

अवस्था 4: प्राण का उत्थान

प्राण की गति के निरंतर बढ़ते अनुभव को प्रगाढ़ बनाते हुए, पूर्ण एकाग्रता के साथ अभ्यास करते रहें।
अब प्राण को ऊपर आज्ञा चक्र में ले जाकर संचित करना आरंभ करें।
प्राण शक्ति को जाग्रत करना और पिंगला नाड़ी द्वारा मूलाधार से आज्ञा तक ले जाना जारी रखें।
प्रत्येक पूरक के साथ आज्ञा में पहुँचने पर आप कुछ देर अंतर्कुम्भक करें और मानसिक रूप से पाँच बार 'आज्ञा' शब्द दुहराएँ।

रेचक करने पर केवल सजगता एवं श्वास मूलाधार में लौटती हैं।
सहज एवं मन्द गति से उज्जायी श्वसन करते जाना है।
पिंगला नाड़ी के समानान्तर मूलाधार से आज्ञा तक सजगता और प्राण की गति पर ध्यान एकाग्र करें।
आपकी सजगता सहज रूप से इस घुमावदार मार्ग में एक के बाद दूसरे चक्र में स्वाभाविक रूप से भ्रमण करती रहती है।
जब आपको आज्ञा में देदीप्यमान ऊर्जा के संचित होने का अनुभव हो तब पिंगला नाड़ी में ऊर्ध्वगामी प्राण की सजगता को छोड़ दें और धीमी गति से हो रहे गहरे उज्जायी श्वसन पर ध्यान केन्द्रित करें।
पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

अवस्था 5: प्रसार एवं संकुचन

प्रकाश और ऊर्जा से परिपूर्ण अपने शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
सामान्य श्वसन प्रक्रिया की अपनी अवधारणा को बदल दें और ऐसे श्वसन का अनुभव करें जो नाक और फेफड़ों से नहीं, बल्कि आपकी त्वचा के प्रत्येक रोम छिद्र से हो रहा हो।
पूरक और रेचक की लंबाई समान होनी चाहिए।
प्रत्येक रोम छिद्र स्वतंत्र रूप से श्वसन करता है और अन्य छिद्रों के साथ उसका सामंजस्य भी रहता है।
जब आप पूरक करते हैं तब अनुभव करें कि आप त्वचा की संपूर्ण सतह से श्वास अंदर ले रहे हैं।
जब आप रेचक करते हैं तब असंख्य सूक्ष्म रोम छिद्र एक साथ वायु को बाहर निकाल देते हैं।
सिर से लेकर पैर तक की त्वचा एक इकाई के रूप में श्वसन करती है।
हर बार जब आप श्वास अंदर लेते हैं तब वास्तव में यह अनुभव करने का प्रयास करें कि आपके रोम छिद्रों का प्रसार हो रहा है।
अनुभव करें कि आपकी त्वचा शरीर का एक अत्यंत गत्यात्मक अंग है।
जब आप सभी रोम छिद्रों से श्वास अंदर लेते हैं तब अनुभव करें कि सिर से पैर तक आपका अंतराकाश बाहर की ओर फैल रहा है।
इस हल्के प्रसार की संवेदना का इस प्रकार अनुभव करें मानो आप एक गुब्बारा है जिसमें हवा भरी जा रही है।

उसके बाद जब आप प्रत्येक रोम छिद्र से श्वास बाहर निकालते हैं तब अनुभव करें कि आपके अंतराकाश में हल्का-सा संकुचन हो रहा है।
पूरक के साथ शरीर के प्रसार और रेचक के साथ संकुचन के अनुभव को प्रगाढ़ बनाते जायें।

अवस्था 6: प्राणिक सजगता को सम्मिलित करना

अब शरीर के अंतराकाश में प्रकाश के रूप में व्याप्त प्राण पर इस अभ्यास के प्रभाव के प्रति सजग हो जाएँ।
जब आप पूरक करते हैं तब शरीर में फैलते इस प्रकाश का बिजली की चमक के रूप में मानस-दर्शन करें; यह श्वेताभ नील या रुपहले श्वेत रंग का है, जो प्रत्येक दिशा में कौंध रहा है।
जब आप रेचक करते हैं तब यह प्राणिक ऊर्जा संकुचित होती है।
पूरक के साथ यह प्रकाश पुंज फैलता है और रेचक के साथ इसमें संकुचन होता है।
अपना पूरा ध्यान इस प्रकाश के क्षेत्र, प्राणमय कोश पर केन्द्रित कर दें, जो श्वास के साथ फैलता और सिकुड़ता है। इसे तब तक जारी रखें जब तक प्राण की छवि लुप्त न हो जाए।

अवस्था 7: प्राण को मूलाधार में लौटाना

अब आप प्राण को मूलाधार में लौटाने जा रहे हैं।
अपनी सजगता को आज्ञा में ले जाएँ; आपने पहले जो प्राण वहाँ संचित किया है, उसका अनुभव करें। आज्ञा में चमकता हुआ प्राणिक प्रकाश देखें।
उसके बाद रेचक करते हुए प्राण को सुषुम्ना से सीधे मूलाधार में ले जाएँ।
पूरक करें और केवल सजगता को आज्ञा में ले जाएँ, रेचक करें और प्राण के लेषमात्र अवशेष को भी सुषुम्ना के द्वारा सीधे मूलाधार में वापस ले जाएँ।
इस अभ्यास को तब तक जारी रखें जब तक यह सुनिश्चित न हो जाए कि समस्त प्राण मूलाधार में वापस आ चुके हैं।

अवस्था 8: अभ्यास की समाप्ति

जब समस्त प्राण लौटाए जा चुके हों तब अपनी सजगता को सामान्य श्वास पर ले जाएँ।
शरीर के अंदर सहज रूप से चल रही श्वसन प्रक्रिया का अवलोकन करें।
धीरे-धीरे अपने संपूर्ण शरीर और उसकी स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।
श्वास एवं शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
अपनी सजगता को शरीर से परे ले जाएँ और बाह्य वातावरण के प्रति सजग बनें।
उस कमरे को याद करें जिसमें आप बैठे हुए हैं।
अपने आस-पास की ध्वनियों को सुनें।
अपनी इंद्रियों को क्रम से जाँचें; स्वाद, घ्राण, स्पर्श और श्रवण।
अपनी सजगता को पूर्णरूपेण बहिर्मुखी बनाएँ।
सजगता को भौतिक शरीर में वापस ले आएँ।
जब आप तैयार हों तब धीरे से शरीर को हिलाना आरंभ करें और हल्के से अपनी आँखों को खोल दें। अब अभ्यास पूरा हुआ।

हरि ॐ तत्सत्



14

प्राण का वितरण

आंतरिक वितरण

अभ्यास 1: प्रसार एवं साम्यता
अभ्यास 2: प्रसार एवं संकुचन

बाह्य वितरण

अभ्यास 3: प्रसार एवं साम्यता
अभ्यास 4: प्रसार एवं संकुचन

प्राण शक्ति का दर्शन

अभ्यास 5: प्राण शक्ति का दर्शन

प्राण के वितरण में प्राण पर एकाग्रता और उसकी दिशा सम्मिलित होती है। आज्ञा से पूरे शरीर में प्राण का संचार प्रसार-साम्यता या प्रसार-संकुचन की मानसिक प्रक्रिया के द्वारा होता है। जब आज्ञा से प्राण का वितरण होता है तब प्रसार होता है, और जब प्राण को आज्ञा में लौटाया जाता है तब साम्यता आती है या संकुचन होता है। आंतरिक वितरण का अर्थ है स्वयं अपने शरीर के अंदर ही प्राण को संचालित करना। प्राण का मानस-दर्शन किया जाता है, और सजगतापूर्वक इच्छानुसार शरीर के विशिष्ट भागों के

साथ-साथ पूरे शरीर में इसका वितरण किया जाता है। बाह्य वितरण का अर्थ है आस-पास के वातावरण में बाह्य स्तर पर प्राण का प्रसार। प्राण के वितरण की कोई सीमा नहीं होती है और इसका वितरण सभी दिशाओं में किया जा सकता है।

वितरण के दौरान मानस-दर्शन की क्षमता का प्रयोग किया जाता है; प्राण को प्रकाश की धाराओं के रूप में देखा जाता है और उन्हें आज्ञा से शरीर में और उसके बाहर भी संचारित किया जाता है। बाह्य वितरण के पूर्व त्रिकोण, वृत्त या क्रॉस के आकार के एक यंत्र का मानस-दर्शन किया जाता है, जो या तो शरीर को घेरे हुए रहता है या शरीर के भीतर से होकर गुजरता है। यह शरीर की सीमा को अंकित करता है और अभ्यास के अंत में चेतना को सामान्य स्थिति में लौटाने में मदद करते हुए, एक सुरक्षा-कवच के रूप में कार्य करता है। इस सहायक यंत्र का मानस-दर्शन कर लेने के पश्चात् प्रसार एवं साम्यता या प्रसार एवं संकुचन की विधि का उपयोग करते हुए प्राण का प्रसार बाहर की ओर किया जाता है।

ऊर्जा वितरण के इन अभ्यासों के लिए प्राण को क्रमश: जाग्रत किया जाता है, उसे ऊपर उठाया जाता है और आज्ञा में संचित किया जाता है, उसका आंतरिक और/या बाह्य वितरण किया जाता है तथा अंत में उसे उसके स्रोत मूलाधार में लौटा दिया जाता है। साधक को प्रत्याहार एवं धारणा की क्रमिक अवस्थाओं से ले जाते हुए यह प्रक्रिया उसके मन पर एक अद्भुत संतुलनकारी प्रभाव डालती है। मन को बलपूर्वक रोकने या शांत करने के बदले ये अभ्यास ऊर्जा को बढ़ाते हैं और उसे संतुलित करते हैं, जिससे मन पर अप्रत्यक्ष रूप से प्रशान्तक प्रभाव पड़ता है। ये अभ्यासी को ध्यान के अन्य अभ्यासों की अपेक्षा अधिक गहरे स्तर के अनुभव प्रदान करने में सहायक हैं।

इस अध्याय में एक ऐसा अभ्यास है जिसमें मानसिक रूप से शरीर के एक-एक अंग का तब तक विलोप किया जाता है जब तक प्राणमय कोश का प्रत्यक्ष अनुभव न हो जाए। इस अभ्यास का प्रयोजन प्राण का, विशुद्ध प्रकाश का दर्शन या प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करना है। हो सकता है कि प्राण का वास्तविक दर्शन किये बिना ही प्राण विद्या का अभ्यास लगातार वर्षों तक चलता रहे। तथापि जब तक यह दर्शन या अनुभव प्राप्त नहीं हो जाता, तब तक प्राण विद्या में पूर्णता प्राप्त नहीं की जा सकती है। आँखें बंद कर जब भी

मानसिक रूप से प्राण साधना की जाए, तब बिना किसी प्रयास के प्रकाश का सहज रूप से दर्शन हो जाना चाहिए। जिस प्रकार बिना किसी प्रयास के अंधकार छा जाता है, उसी प्रकार प्रकाश का दर्शन भी शीघ्रता से अनायास हो जाना चाहिए। इसे प्रारंभिक अभ्यासों में सम्मिलित नहीं किया गया है, क्योंकि इसका प्रभाव अत्यंत प्रबल और कभी-कभी भयभीत करने वाला भी होता है। यही कारण है कि इसको आरंभ करने से पहले पूर्व के अनुभव और उसकी समझ का होना आवश्यक है।

आंतरिक वितरण

अभ्यास टिप्पणी: प्राण विद्या में हृदय का प्रसार एवं संकुचन बिल्कुल निषिद्ध रहता है। केवल यही एक अंग है जिसके लिए इस प्रक्रिया का निषेध किया गया है। वे व्यक्ति जो किसी गुरु या प्राण विद्या के निपुण शिक्षक के अनुशासित मार्गदर्शन का अनुपालन कर रहे हों, वे ही हृदय की मांसपेशियों के प्रसार और संकुचन का अभ्यास कर सकते हैं।

अभ्यास 1: प्रसार एवं साम्यता

अवस्था 1: तैयारी

अभ्यास के लिए आप लेट सकते हैं, खड़े रह सकते हैं, ध्यान के किसी आसन में बैठ सकते हैं या कुर्सी पर बैठ सकते हैं। यह सुनिश्चित कर लें कि शरीर आराम की स्थिति में है, आवश्यकतानुसार स्थिति में परिवर्तन कर लें।

जब शरीर चयनित आसन में स्थिर हो जाए तब इसे विश्राम की अवस्था में शांत हो जाने दें, साथ ही यह सुनिश्चित कर लें कि रीढ़ की हड्डी सीधी हो।

सजगता को शरीर के अंदर और बाहर आने-जाने वाली सहज श्वास पर केन्द्रित कर दें।

कुछ देर श्वास का अनुगमन करें और शरीर और मन को शांत होने दें।

बिना किसी प्रयास के सहज रूप से उज्जायी प्राणायाम होने लगे और खेचरी मुद्रा लग जाए।

अवस्था 2: प्राण का जागरण और उत्थान

पूरक करते हुए पिंगला नाड़ी के अतीन्द्रिय पथ में मूलाधार से आज्ञा तक ऊपर जायें।

रेचक करते समय सजगता एवं श्वास पिंगला नाड़ी द्वारा आज्ञा से मूलाधार तक वापस नीचे आते हैं।

श्वास एवं सजगता को पिंगला नाड़ी में कुछ देर ऊपर-नीचे घुमाते रहें।

जब यह अभ्यास सही ढंग से होने लग जाएँ तब श्वास और सजगता के साथ गतिमान प्राण का मानस-दर्शन करें।

पिंगला नाड़ी में श्वेत प्रकाश की धाराएँ ऊपर-नीचे आ-जा रही हैं।

अगले पूरक के अंत में जाग्रत प्राण को आज्ञा में संचित करने के लिए कुछ क्षणों के लिए वहाँ पर रुक जाएँ। केवल सजगता को मूलाधार में लौटा कर ले जाएँ।

इस प्रकार अभ्यास तब तक जारी रखें जब तक आज्ञा उज्ज्वल प्रकाश का भंडार न बन जाए।

अवस्था 3: प्रसार एवं साम्यता

सजगता को आज्ञा से श्वास पर ले जाएँ।

उज्जायी की कोमल, लयबद्ध ध्वनि पर ध्यान एकाग्र करें।

श्वास के साथ ही प्रसार एवं साम्यता के प्रति सजगता का विकास करें।

यह गतिविधि पेशीय स्तर पर नहीं होनी चाहिए।

शरीर में कोई हलचल नहीं होनी चाहिए; यह प्राणिक एवं अतीन्द्रिय प्रसार है।

उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास करते समय प्राणमय कोश में प्रसार एवं साम्यता के प्रति सजग हो जाएँ।

प्रत्येक श्वास के साथ प्रसार एवं साम्यता की अनुभूति को विकसित करते जाएँ।

अवस्था 4: वितरण

प्रसार एवं साम्यता की अनुभूति को बनाए रखें और शरीर के विभिन्न अंगों में प्राण के वितरण के लिए तैयार हो जाएँ।

पूरक के साथ प्राण को आज्ञा से शरीर के अंगविशेष की ओर भेजें, और रेचक के साथ प्राण को विश्रान्त करते हुए वापस आज्ञा में ले आयें।

उदाहरण के लिए, इस प्रकार वितरण आरंभ करें–

दायाँ हाथः सबसे पहले आज्ञा से दाएँ हाथ में प्राण का संचार करें।

पूरक के साथ आज्ञा से प्राण का वितरण दाएँ हाथ में करें।

रेचक के साथ विश्राम करें और प्राण को वापस आज्ञा चक्र में ले आयें।

पूरक के साथ ऊर्जा को दाएँ हाथ की ओर प्रवाहित करें; दाएँ हाथ में और उसके चारों ओर प्राण का संचार करें।

रेचक के साथ दाएँ हाथ को विश्राम की अवस्था में ले आयें।

आज्ञा केन्द्र है; आज्ञा से ही वितरण की संपूर्ण प्रक्रिया आरंभ होती है।

प्राण को दाएँ हाथ की अँगुलियों, हथेली, भुजा के निचले भाग, भुजा के ऊपरी भाग, दाएँ हाथ के प्रत्येक भाग में भेजिए।

अपने दाएँ हाथ की प्रत्येक कोशिका को प्राण से भर दें।

आज्ञा से पूरे दाएँ हाथ की ओर प्राण की गति का अनुभव करें।

प्राण को दाएँ हाथ से वापस ले जाकर आज्ञा में लौटा दें।

बायाँ हाथः जिस प्रकार दाएँ हाथ के साथ किया गया, उसी प्रकार अभ्यास करें।

आज्ञा में वापस आ जाएँ और कुंभक करें।

बाएँ हाथ की ओर जाएँ और इसकी अँगुलियों के छोरों तक पूरे हाथ को प्राण से भर दें।

प्राण को वापस आज्ञा में ले जाएँ।

प्राण आज्ञा से बाएँ हाथ की ओर जाता है और बाएँ हाथ से वापस आज्ञा में आ जाता है।

आप केवल प्राण का वितरण कर रहे हैं और प्राण के क्षेत्र के प्रसार और उसकी साम्यता का अनुभव कर रहे हैं।

आज्ञा में वापस आ जाएँ और कुछ क्षणों तक वहाँ श्वास को रोकें।

रेचक करें और विश्राम की अवस्था में आ जाएँ।

दायाँ पैरः पूरक के साथ दाएँ पैर को प्राण से भर दें।

यह शरीर के अंदर आज्ञा से प्रवाहित होकर पीठ के दाएँ भाग और दाएँ नितंब से हो कर आपके दाएँ पैर में जाता है। अपनी ऊर्जा को उस ओर प्रवाहित करें और प्रसार का अनुभव करें।

अपने दाएँ पैर से प्राण को वापस आज्ञा में ले आयें; इसका अर्थ है साम्यता।

प्राण को आज्ञा से पीठ के दाएँ भाग और दाएँ नितंब से होकर दाएँ पैर की अँगुलियों के छोरों तक प्रेषित करते रहें।

प्राण को वापस आज्ञा में ले आयें; वहाँ कुछ देर श्वास को और अपनी चेतना को भी रोक कर रखें।

बायाँ पैर: इसी प्रकार बाएँ पैर में अँगुलियों के छोरों तक प्राण को भर दें।
प्राण की आपूर्ति करें और प्रसार करें; उसे वापस ले जायें और विश्राम करें।
सभी प्राण आज्ञा से आते हैं और आज्ञा में ही लौट जाते हैं।
अपने प्राण को आज्ञा में लौटा लें और कुछ क्षणों के लिए रुक जाएँ।

दायीं छाती: अपनी छाती के दाएँ भाग में प्राण की आपूर्ति करें; छाती के दाएँ भाग से प्राण को लौटा कर आज्ञा में ले जाएँ।
प्राण की आपूर्ति करें और प्रसार करें; उसे वापस ले जायें और विश्राम करें।
अपने प्राण को आज्ञा में लौटा लें और कुछ क्षणों के लिए रुक जाएँ।

बायीं छाती: हृदय की मांसपेशियों को छोड़ कर प्राण की आपूर्ति आज्ञा से अपनी छाती के बाएँ भाग में करें।
अपनी छाती की बायीं ओर से प्राण को लौटा कर आज्ञा में ले जाएँ।
प्राण की आपूर्ति करें और प्रसार करें; उसे वापस लें और विश्राम करें।

उदर: आज्ञा से संपूर्ण उदर क्षेत्र में प्राण की आपूर्ति करें।
संपूर्ण उदर क्षेत्र से प्राण को वापस आज्ञा में ले जायें।
प्राण की आपूर्ति करें और प्रसार करें; उसे वापस ले जायें और विश्राम करें।
यह प्रक्रिया तब तक जारी रखें जब तक शरीर के सभी भागों में वितरण पूरा न हो जाए।

अवस्था 6: प्राण को मूलाधार में लौटाना

जब वितरण पूरा हो जाए तब प्राण को वापस आज्ञा में ले जाएँ।
रेचक के साथ प्राण को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा आज्ञा से मूलाधार तक ले जायें और वहीं छोड़ दें।
यह क्रिया सजगता के साथ करें।
इस प्रक्रिया को तब तक जारी रखें जब तक सभी प्राण अपने स्रोत मूलाधार में वापस न आ गये हों।

अवस्था 7: अभ्यास की समाप्ति

जब यह प्रक्रिया पूरी हो जाए तब खेचरी मुद्रा को खोल दें और उज्जायी श्वसन बंद कर दें।

सजगता को शरीर के अंदर और बाहर आने-जाने वाली सामान्य श्वास पर ले जाएँ। श्वास की स्वाभाविक लय पर अपना ध्यान केन्द्रित करें।

श्वास के साथ गतिमान शरीर के विभिन्न अंगों पर ध्यान दें – उदर, छाती, पीठ के कुछ भाग।

भौतिक शरीर के भीतर गतिमान श्वास का अनुभव करें।

सजगता को पूरी तरह शरीर पर ले जाएँ।

शरीर की रचना और उसके आकार के प्रति सजग हो जाएँ।

जमीन के साथ शरीर के स्पर्श का अनुभव करें।

शरीर के आस-पास के स्थान के प्रति सजग हो जाएँ।

आप जिस कमरे में हैं, उसका अनुभव करें।

कमरे के अंदर रखी वस्तुओं और उसमें अपने स्थान का मानस-दर्शन करें।

यह जाँच लें कि आपकी ज्ञानेन्द्रियाँ क्रियाशील हैं और सामान्य रूप से कार्य कर रही हैं।

अपने आस-पास की ध्वनियों, जमीन का स्पर्श कर रहे शरीर के भागों, गंध और मुँह के स्वाद के प्रति सजग हो जाएँ।

यह जाँच लें कि आपकी सजगता पूर्णत: बहिर्मुख हो गयी है।

अब अभ्यास पूरा हुआ। जब आप तैयार हों तब धीरे से आखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास टिप्पणी: कभी-कभी शरीर के किसी भाग या अंग में प्राण का वितरण करते समय अप्रत्यक्ष रूप से हृदय की धड़कन के द्वारा प्रसार एवं साम्यता की अनुभूति होती है। शरीर के किसी विशेष भाग में प्राण के संचार पर ध्यान एकाग्र करते समय ऐसा हो सकता है कि अभ्यासी अपनी नाड़ी की धड़कन के प्रति सजग हो जाए। प्रारंभ में यह अनुभव किंचित् असामान्य हो सकता है; यह प्रसार और साम्यता के अनुभव जैसा ही होता है, लेकिन नाड़ी की धड़कन में पूर्णतया तल्लीनता हो जाती है। पूरी सजगता नाड़ी की धक्, धक्, धक् की ध्वनि पर ही नहीं, बल्कि उसके प्रसार एवं साम्यता की अनुभूति पर भी चली जाती है। विशेष रूप से यह तब होता है जब प्राण का वितरण शरीर के निचले भागों में किया जा रहा होता है। यदि ऐसा होता है तो केवल उस अनुभव को देखें; कुछ देर बाद वह समाप्त हो जाएगा।

अभ्यास 2: प्रसार एवं संकुचन

अवस्था 1: तैयारी

किसी सुविधाजनक आसन में बैठ जाएँ।
वैकल्पिक रूप से आप लेट सकते हैं, खड़े हो सकते हैं या कुर्सी पर भी बैठ सकते हैं।
महत्त्वपूर्ण यह है कि पूरे अभ्यास के दौरान शरीर आरामदायक स्थिति में और स्थिर रहे, साथ ही मेरुदण्ड भी सीधा रहे।
फिर भी यदि आपको शरीर को हिलाने की आवश्यकता हो तो धीरे-से हिलाएँ, लेकिन सजगता के साथ, और पुनः स्थिर हो जाएँ।
शरीर को अंतिम रूप से व्यवस्थित कर लें और उसके बाद स्थिर एवं शांत हो जाएँ।
कुछ क्षणों तक शरीर को स्थिर हो जाने दें।
विचारों को विलुप्त हो जाने दें और शारीरिक या मानसिक तनाव को समाप्त हो जाने दें।
ध्यान को सहज श्वास पर केन्द्रित कर दें।
श्वास की लय के प्रति पूर्णतः सजग हो जाएँ।
अंदर-बाहर आने-जाने वाली हर श्वास के प्रति सजग रहें।

अवस्था 2: प्राण का जागरण एवं उत्थान

उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास आरंभ करें।
जब उज्जायी सहज रूप से होने लगे तब श्वास के साथ पिंगला नाड़ी के मार्ग का अनुसरण करें।
पूरक के साथ श्वास और सजगता मूलाधार से आज्ञा तक आरोहण करती हैं।
रेचक के साथ श्वास और सजगता आज्ञा से अवरोहण करती हैं और मूलाधार में लौट जाती हैं।
उज्जायी श्वसन के साथ पिंगला मार्ग का अनुसरण जारी रखें।
जब लय नियमित हो जाए तब श्वास और सजगता के साथ चलने वाले प्राण के प्रवाह का मानस-दर्शन करें।
उज्जवल प्रकाश की धाराएँ पिंगला नाड़ी के अतीन्द्रिय पथ में ऊपर-नीचे आरोहण-अवरोहण कर रही हैं।

सजगता प्राण के उज्जवल प्रकाश के प्रवाह के साथ पूर्णत: एकाकार हो जाती है।

उसके बाद जाग्रत प्राण को आज्ञा में संचित करना आरंभ करें।

प्रत्येक पूरक के अंत में प्राण को आज्ञा में संचित करने के लिए कुछ क्षणों तक वहाँ रुक जाएँ। रेचक के दौरान केवल सजगता मूलाधार की ओर अवरोहण करती है।

प्राण पिंगला में आरोहण करता है और प्राण का भंडार आज्ञा में संचित हो जाता है, केवल सजगता मूलाधार में वापस आती है।

इस प्रकार आज्ञा में प्राण के भंडार को भरना जारी रखें।

अवस्था 3: प्रसार एवं संकुचन

जब पर्याप्त ऊर्जा संचित हो जाए तब आज्ञा पर कुछ श्वासों तक सजगता बनाए रखें और प्राण के इस संचित कोष का अनुभव प्रकाश के रूप में करें।

अब सजगता को उज्जायी प्राणायाम पर ले आएँ और प्राणमय कोश के प्रसार एवं संकुचन का अनुभव करना आरंभ करें।

उज्जायी पूरक के साथ प्राणमय कोश का प्रसार होता है; उज्जायी रेचक के साथ वह संकुचित होता है।

उज्जायी प्राणायाम के साथ इस प्राणिक एवं अतीन्द्रिय प्रसार और संकुचन के प्रति सजगता के समन्वय को बढ़ाते जायें।

अवस्था 4: वितरण

जब प्रसार एवं संकुचन सहजतापूर्वक होने लगे तब शरीर के विभिन्न भागों में प्राण का वितरण आरंभ करें।

दायाँ हाथ: दाएँ हाथ में प्राण की आपूर्ति करें और उसका प्रसार करें।

प्राण को दाएँ हाथ से लौटा कर आज्ञा में ले जाएँ और उसे संकुचित करें।

बायाँ हाथ: पूरक करें, बाएँ हाथ में प्राण की आपूर्ति करें और उसका प्रसार करें।

प्राण को लौटा कर आज्ञा में ले जाएँ और उसे संकुचित करें।

आज्ञा से वितरित करें और लौटा कर पुन: आज्ञा में ले जाएँ; आपूर्ति-प्रसार, वापस लेना-संकुचन।

अपने प्राण को वापस आज्ञा में ले जाएँ; श्वास और प्राण को आज्ञा में कुछ देर के लिए रोक कर रखें और मानसिक रूप से बाएँ हाथ को विश्राम की अवस्था में ले आयें।

दायाँ पैर: आज्ञा से पीठ के दाएँ भाग और नितंब से होते हुए दाएँ पैर में जाएँ, पैर की अँगुलियों के छोरों तक, पूरा दायाँ पैर।

प्राण की आपूर्ति करें और प्रसार का अनुभव करें; प्राण को वापस ले जायें और संकुचन का अनुभव करें।

अपने प्राण को वापस आज्ञा में ले आयें, श्वास और प्राण को वहाँ पर कुछ देर के लिए रोक लें तथा मानसिक रूप से दाएँ पैर को विश्राम करने दें।

बायाँ पैर: प्राण के साथ बाएँ पैर का प्रसार करें।

संकुचन के साथ बाएँ पैर से प्राण को आज्ञा में लौटा ले जायें।

आज्ञा से पीठ के बाएँ भाग और नितंब से होते हुए बाएँ पैर में प्राण को प्रेषित करें।

प्राण को बाएँ नितंब और पीठ के बाएँ भाग से वापस आज्ञा में ले जायें।

प्राण को कुछ देर आज्ञा में रोक कर रखें और बाएँ पैर को विश्राम करने दें।

उदर: पूरे उदर-प्रदेश में प्राण की आपूर्ति करें।

आपूर्ति और प्रसार; वापस लौटाना और संकुचन।

आज्ञा से वितरण और आज्ञा में लौटना।

अपने प्राण को आज्ञा में लौटा लें, वहाँ कुछ देर रोकें और पूरे उदर को विश्राम करने दें।

दायीं छाती: छाती के दाएँ भाग में प्राण की आपूर्ति करें।

आपूर्ति और प्रसार; लौटाना और संकुचन।

आज्ञा से वितरण और आज्ञा में लौटना।

अपने प्राण को आज्ञा में लौटा लें, वहाँ कुछ देर रोकें और छाती के दाएँ भाग को विश्राम करने दें।

बायीं छाती: हृदय की मांसपेशियों को बचाते हुए छाती के बाएँ भाग में प्राण की आपूर्ति करें और उसका प्रसार करें।

प्राण को छाती के बाएँ भाग से आज्ञा में लौटाएँ और पुन: हृदय की पेशियों को बचाते हुए संकुचन करें।

आज्ञा से आपूर्ति करें; आज्ञा में लौटा दें।

आज्ञा में प्राण को कुछ देर रोक कर रखें और छाती के बाएँ भाग को विश्राम करने दें।

मस्तिष्क : प्रसार करें एवं साम्यता लायें; उसके बाद लौटा लें और संकुचित करें।

संकुचन करते समय प्रमस्तिष्क को इतना संकुचित किया जाता है कि मस्तिष्क के केन्द्र एवं उसकी परिधि के किसी भी भाग में कोई अंतर नहीं रह जाता है।

मस्तिष्क केन्द्र में एक बिंदु के रूप में संकुचित हो जाता है।

उसके बाद एक गेंद के रूप में इसका प्रसार किया जाता है और पुनः एक बिंदु के रूप में संकुचित किया जाता है।

कभी-कभी इस अभ्यास को करना कठिन होता है।

एक बिंदु के रूप में इसका अनुभव करने में समय लगता है।

जब यह अनुभव होने लगे तब प्राण का वितरण प्रमस्तिष्क के क्षेत्र में किया जा सकता है।

प्रमस्तिष्क क्षेत्र का प्रसार, विश्राम या संकुचन करते समय सिर में दर्द हो सकता है, सिर में भारीपन का अनुभव हो सकता है; यदि ऐसा हो तो अभ्यास को तुरन्त रोक दें।

इसके अतिरिक्त प्रमस्तिष्क क्षेत्र में प्राण के वितरण में कोई हानि नहीं है।

अवस्था 5: प्राण को मूलाधार में लौटाना

जब सभी भागों में वितरण पूरा हो जाए तो प्राण को आज्ञा में लौटा लें।

उसके बाद रेचक के साथ सुषुम्ना के मार्ग से प्राण को मूलाधार में ले जाएँ और वहाँ छोड़ दें।

इस प्रक्रिया को तब तक जारी रखें जब तक समस्त प्राण मूलाधार में वापस न आ जाएँ।

अवस्था 6: अभ्यास की समाप्ति

जब प्राणों को वापस ले जाने की प्रक्रिया पूरी हो जाए तब खेचरी मुद्रा को खोल दें और उज्जायी प्राणायाम बंद कर दें।

सजगता को शरीर के अंदर-बाहर आने-जाने वाली सहज श्वास पर लगा दें।

श्वास की स्वाभाविक लय पर ध्यान केन्द्रित करें।

श्वास के साथ शरीर के जिन भागों में हलचल होती है, उन पर ध्यान दें– उदर, छाती, पीठ के विभिन्न भाग।
भौतिक शरीर के अंदर चल रही श्वास का अनुभव करें।
सजगता को श्वास से शरीर पर ले जाएँ।
अपने चयनित आसन में स्थित अपने शरीर के भार का अनुभव करें।
अपने हाथों, पैरों, धड़, गरदन और सिर की स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।
शरीर की आकृति और स्वरूप के प्रति सजग हो जाएँ।
अपनी सजगता को शरीर के बाहर ले जाएँ और कमरे में अपने आस-पास की व्यवस्था को स्मरण करें।
कमरे की वस्तुओं का और कमरे में अपनी स्थिति का मानस-दर्शन करें।
यह जाँच लें कि ज्ञानेद्रियाँ क्रियाशील हैं और सामान्य ढंग से कार्य कर रही हैं।
अपने आस-पास की ध्वनियों, जमीन से शरीर के स्पर्श, गंध और मुँह में स्वाद के प्रति सजग हो जाएँ।
यह भी जाँच लें कि सजगता पूर्णत: बहिर्मुख हो चुकी है।
अब अभ्यास पूरा हुआ। जब आप तैयार हों तो धीरे-से आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

बाह्य वितरण

अभ्यास टिप्पणी: जब आप बाह्य वितरण आरंभ करते हैं तब अपनी कल्पना शक्ति या मानस-दर्शन की मानसिक शक्ति पर निर्भर रह सकते हैं। इससे आपको केवल मानसिक अनुभव प्राप्त होगा। तथापि जब आपके भीतर प्राण का अनुभव जाग्रत हो जाता है तब प्रकाश रेखाएँ स्पष्ट हो जाएँगी और आपको प्रत्यक्ष प्राणिक अनुभव होगा। प्राण को शरीर के बाहर सभी दिशाओं में वितरित किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में किसी प्रकार का निषेध नहीं है। आंतरिक वितरण में निपुणता प्राप्त करने के बाद वे लोग जो प्राण को अन्य लोगों तक प्रेषित करना चाहते हैं या केवल अपने आस-पास के वातावरण को आविष्ट करना चाहते हैं, बाह्य वितरण का प्रयोग कर सकते हैं।

अभ्यास 3: प्रसार एवं साम्यता

अवस्था 1: तैयारी

किसी सुविधाजनक आसन में बैठ जाएँ।
यदि आवश्यक हो तो आप लेट कर, खड़े होकर या कुर्सी पर बैठ कर भी अभ्यास कर सकते हैं।
सबसे महत्त्वपूर्ण यह है कि शरीर आराम की स्थिति में हो और मेरुदण्ड सीधा रहे।
शरीर को व्यवस्थित, स्थिर और शांत हो जाने दें।
अपना पूरा ध्यान शरीर पर केन्द्रित कर दें और विचारों को समाप्त हो जाने दें।
शरीर और मन को विश्राम की स्थिति में ले आयें तथा हर प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक तनाव को दूर हो जाने दें।
उज्जायी प्राणायाम एवं खेचरी मुद्रा का अभ्यास आरंभ करें।
उज्जायी की कोमल, सूक्ष्म ध्वनि का अनुसरण करें और सजगता को अंतर्मुख होने दें।

अवस्था 2: प्राण का जागरण एवं उत्थान

श्वास की सजगता बनाये रखें और उसके साथ ही पिंगला नाड़ी के प्रति भी सजगता का विकास करें।
पिंगला के समानान्तर श्वास और सजगता की गति का अनुसरण आरंभ करें।
पूरक करने पर श्वास मूलाधार से आज्ञा की ओर आरोहण करती है और रेचक करने पर श्वास आज्ञा से मूलाधार की ओर अवरोहण करती है।
अब पिंगला में प्राण के आरोहण एवं अवरोहण का मानस-दर्शन करें।
पिंगला नाड़ी में उज्जवल प्रकाश की धाराएँ आरोहण एवं अवरोहण करती हैं।
सजगता एवं श्वास प्राण के उज्जवल प्रकाश के साथ चलते हैं।
इस प्रक्रिया को कुछ देर जारी रखें।
अब जाग्रत प्राण को आज्ञा में संचित करना आरंभ करें।
प्रत्येक पूरक के अंत में प्राण को आज्ञा में संचित करते समय कुछ क्षणों तक रुकें, और उसके बाद रेचक के साथ केवल सजगता को मूलाधार में वापस ले जाएँ।

प्राण पिंगला के द्वारा प्राण के भंडार, आज्ञा की ओर आरोहण करता है। केवल सजगता और श्वास मूलाधार में वापस आते हैं।
प्राण के भंडार, आज्ञा में प्राण का संचय करते जाएँ।
जब पर्याप्त ऊर्जा संचित हो जाए तब अपनी सजगता को आज्ञा में रोक लें और प्राण के देदीप्यमान प्रकाश का अनुभव करें।

अवस्था 3: बाह्य वितरण

अब अपने शरीर के चारों ओर एक त्रिकोण या एक वृत्त का मानस-दर्शन करें या एक क्रॉस को अपने शरीर के आर-पार जाते हुए देखें।
यह मानस-दर्शन आभायुक्त होना चाहिए।
यह यंत्र शरीर को एक सुरक्षा कवच प्रदान करता है।
अब शरीर के बाहर किसी भी दिशा में किसी भी सीमा तक प्राण का प्रसार किया जा सकता है।
यदि यह प्रसार केवल मानसिक रूप से किया जा रहा है तो अनुभव भी मानसिक ही होगा।
यदि यह वास्तव में प्राण है तो प्रकाश रेखाएँ अत्यंत स्पष्ट हो जाएँगी।
प्रारंभ में अभ्यास मानसिक स्तर पर होगा।
प्रसार एवं साम्यता की विधि का प्रयोग करते हुए शरीर के बाहर प्राण का प्रसार करना आरंभ करें।
प्रत्येक उज्जायी श्वास के साथ प्रसार एवं साम्यता की अनुभूति को बढ़ाते जाएँ। सभी दिशाओं में प्राण के प्रसार का मानस-दर्शन करें।
आज्ञा से आरंभ कर प्राण का इच्छानुसार विस्तार करें।
प्रत्येक पूरक के साथ आज्ञा से प्राण का विस्तार होता है, और प्रत्येक रेचक के साथ प्राण विश्रान्त होकर पुन: आज्ञा में लौट आता है।
शरीर के बाहर, वातावरण में प्राण का प्रसार करते जाएँ।
उन्चास चक्रों तक इसका अभ्यास करें।

अवस्था 4: प्राण को मूलाधार में लौटाना

जब अभ्यास पूरा हो जाए तब प्राण को आज्ञा में वापस ले आयें और उज्जायी प्राणायाम के प्रति सजग हो जाएँ।
यह जाँच लें कि सभी प्राण आज्ञा में वापस आ गए हैं।

शरीर को चारों ओर से घेरे हुए सुरक्षा यंत्र का एक बार पुन: मानस-दर्शन करें।
अब प्राण को इसके स्रोत, मूलाधार में वापस ले जाने की तैयारी करें।
अगले रेचक के साथ प्राण को नीचे मूलाधार में लौटा दें।
केवल सजगता को आज्ञा में वापस लाएँ, कुछ देर रुकें, और उसके बाद प्राण को मूलाधार में ले जाएँ।
सजगता के साथ यह अभ्यास तब तक करते जाएँ जब तक सभी प्राण मूलाधार में न लौट गए हों।

अवस्था 5: अभ्यास की समाप्ति

खेचरी मुद्रा और उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास समाप्त कर दें।
सजगता को शरीर के अंदर-बाहर आने-जाने वाली सहज श्वास पर ले जाएँ।
श्वास की स्वाभाविक लय पर ध्यान केन्द्रित करें।
भौतिक शरीर के भीतर गतिमान श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।
अपने चयनित आसन में शरीर की स्थिति का अनुभव करें।
शरीर में होने वाली अनुभूतियों के प्रति सजग हो जाएँ।
सजगता का विस्तार करें और शरीर को चारों ओर से घेरे हुए स्थान का अनुभव करें।
कमरे की वस्तुओं का और उसमें अपनी स्थिति का विस्तृत रूप से मानस-दर्शन करें।
यह जाँच लें कि इन्द्रियाँ क्रियाशील हैं और सामान्य रूप से कार्य कर रही हैं।
अपने आस-पास की ध्वनियों के प्रति, कुर्सी या जमीन का स्पर्श कर रहे अपने अंगों के प्रति सजग हो जाएँ, गंधों और अपने मुहँ के अंदर के स्वाद के प्रति सजग हो जाएँ।
यह भी जाँच लें कि सजगता पूर्णत: बहिर्मुखी हो चुकी है।
अब अभ्यास पूरा हुआ।
यदि आप चाहें तो हथेलियों को आपस में रगड़ कर आँखों पर रखें और धीरे-से आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 4: प्रसार एवं संकुचन

अवस्था 1: तैयारी

इस अभ्यास में वातावरण के शुद्धिकरण के लिए और उसे ऊर्जा प्रदान करने के लिए प्राण का बाह्य वितरण किया जाता है।

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ या शवासन में लेट जाएँ।

स्वयं को आरामदायक स्थिति में लाकर स्थिर हो जाएँ।

शरीर एवं मन को शांत हो जाने दें।

यदि आप बैठे हुए हैं तो यह सुनिश्चित कर लें कि आपके शरीर का भार दोनों ओर संतुलित है।

अपनी श्वसन प्रक्रिया का अवलोकन करना आरंभ करें।

श्वास अंदर लेते और बाहर छोड़ते हुए शरीर को पूरी तरह विश्राम की अवस्था में ले आयें।

बिल्कुल स्थिर हो जाएँ।

स्वयं को मानसिक रूप से कहें, "मैं अभ्यास के दौरान नहीं हिलूँगा। मैं सजग एवं सतर्क रहूँगा।"

यह स्मरण रखना है कि आपको सजगता के प्रवाह को टूटने नहीं देना है; आपकी एकाग्रता में विक्षेप नहीं होना चाहिए।

अवस्था 2: प्राण का जागरण एवं उत्थान

अपने शरीर के आंतरिक आकाश के प्रति सजग हो जाएँ।

इस आंतरिक आकाश में नाड़ियों और चक्रों का मानस-दर्शन करें।

पिंगला नाड़ी के प्रति तीव्र सजगता का विकास करें।

उसके बाद उज्जायी श्वास को पिंगला की सजगता के साथ समन्वित करें और जीभ को खेचरी मुद्रा में पीछे की ओर मोड़ लें।

जब आप श्वास अंदर लेते हैं, तब श्वास पिंगला मार्ग में मूलाधार से आज्ञा तक ऊपर की ओर जाती है।

जब आप श्वास छोड़ते हैं, तब श्वास सुषुम्ना के द्वारा आज्ञा से मूलाधार की ओर अवरोहण करती है।

पिंगला नाड़ी में प्राण की गति का अनुभव करें। नीले-श्वेत या सुनहरे प्रकाश की तीव्र देदीप्यमान धारा के रूप में उसका मानस-दर्शन करें।

पिंगला नाड़ी में मूलाधार से आज्ञा तक अपनी श्वास और सजगता के साथ प्राण को प्रेषित करें।

आज्ञा पर श्वास को पाँच सेकण्ड तक रोक कर मानसिक रूप से दोहराएँ 'आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा'।

उसके बाद श्वास छोड़ते हुए, केवल अपनी श्वास एवं सजगता को पिंगला के द्वारा नीचे की ओर मूलाधार तक लाएँ और प्राण को आज्ञा में ही संचित रहने दें।

पूरी एकाग्रता के साथ पिंगला नाड़ी में प्राण का जागरण जारी रखें और ऊर्जा की गति का तीव्रता से अनुभव करें।

इस अभ्यास को तब तक करते रहें जब तक प्राण के वास्तविक जागरण का अनुभव न हो जाए।

प्रारंभ में 49 चक्रों तक अभ्यास करें।

जब आप अभ्यास में निपुण हो जाएँगे तब आपको प्राण के जागरण का स्पष्ट अनुभव होगा।

अवस्था 3: प्राण का वितरण

सावधानीपूर्वक और व्यवस्थित ढंग से आज्ञा चक्र तक प्राण का उत्थान हो जाने पर अपनी एकाग्रता को वहाँ पर केन्द्रित कर प्राण की प्रदीप्त आभा को देखें।

इस चक्र में संचित ऊर्जा का अनुभव करें।

उसके बाद अपने शरीर के चारों ओर एक चमकीले सुरक्षात्मक वृत्त या ऊर्ध्वमुखी त्रिकोण का निर्माण करें या अपने शरीर से आर-पार जाते हुए एक चमकीले क्रॉस को देखें।

जब आपको अपने शरीर के चारों ओर इस प्रकार का एक सुरक्षात्मक चमकीला आकार स्पष्ट दिखने लगे तब अनुभव करें कि आप इसके द्वारा सुरक्षित हैं।

उज्जायी एवं खेचरी का अभ्यास करते हुए पूरक करें; यह मानस-दर्शन करें कि प्राण की प्रकाश रेखाओं ने आपके शरीर को ओतप्रोत कर रखा है और वे शरीर से बाहर निकल कर आपको चारों ओर से घेरी हुई आकृति को भी प्रकाश से भर रही हैं।

अपनी इच्छाशक्ति का प्रयोग करते हुए सभी दिशाओं में प्राण का प्रसार करें, या अपने इच्छानुसार उसे किसी एक विशेष दिशा में भेजें।

रेचक के साथ जब प्राण अपने भंडार, आज्ञा में वापस जाता है तब वहाँ पर एक निश्चित बंध या संकुचन का अनुभव करें।

इससे अनुभव अधिक प्रगाढ़ हो जाता है और प्राण का अगला विकिरण अधिक प्रबल हो जाता है।

सर्वप्रथम प्राणिक प्रकाश वृत्त, त्रिकोण या क्रॉस को भरते हुए आपके भौतिक शरीर को सुरक्षा प्रदान करता है।

कुछ देर प्राण को इस ज्यामितीय आकार को भरने के लिए प्रेषित करते रहें और आज्ञा में वापस लाकर संकुचित करते रहें।

उसके बाद देखें कि प्राण इस आकार के परे विस्तार कर उस कमरे को भर रहा है जिसमें आप अभ्यास कर रहे हैं।

प्राणिक प्रकाश को पूरे कमरे में चलायमान देखें। आपके प्रत्येक पूरक के साथ देदीप्यमान प्रकाश की किरणें बाहर की ओर फैल रही हैं।

रेचक करें और प्राण को आज्ञा में वापस ले आयें तथा अनुभव करें कि उस चक्र में एक विशेष संकुचन हो रहा है।

उज्जायी पूरक एवं रेचक का अभ्यास जारी रखते हुए देखें कि प्राण का बाहर की ओर अधिक-से-अधिक प्रसार होता जा रहा है।

इस अनुभव के साथ कुछ देर अभ्यास जारी रखें।

अनुभव करें कि आपका वातावरण शुद्ध और ऊर्जा से परिपूर्ण हो रहा है।

अवस्था 4: प्राण को मूलाधार में लौटाना

अभ्यास को समाप्त करने के लिए प्राण को आज्ञा में वापस ले आयें और उज्जायी प्राणायाम करते हुए सजगता को इस चक्र पर कुछ देर के लिए रोक कर रखें।

यह सुनिश्चित कर लें कि आपने अपने संपूर्ण प्राण आज्ञा में लौटा दिए हैं।

अपने भौतिक शरीर को आपने जिस चमकीले वृत्त, त्रिकोण या क्रॉस से घेर रखा है, उसके प्रति सजग हो जाएँ।

इस चमकीले आकार से घिरे अपने शरीर का मानस-दर्शन करें।

अब प्राण को उसके स्त्रोत, मूलाधार में लौटाने की तैयारी करें।

अगले रेचक के साथ प्राण को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा नीचे की ओर मूलाधार में वापस ले जाएँ।

केवल श्वास और सजगता को आज्ञा में वापस ले जाएँ, वहाँ कुछ क्षणों तक रुकें, उसके बाद प्राण, श्वास और सजगता को नीचे की ओर ले जाकर मूलाधार में लौटा दें।

इस अभ्यास को सजगतापूर्वक तब तक करते रहें जब तक संपूर्ण प्राण मूलाधार में लौटा न दिए गये हों।

अवस्था 5: अभ्यास की समाप्ति

खेचरी मुद्रा खोल दें और उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास बंद कर दें।

शरीर के अंदर चल रही सहज श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।

अपने चयनित आसन में स्थित भौतिक शरीर का अनुभव करें।

हाथों, पैरों, सिर, गरदन और मेरुदण्ड की स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।

शरीर के नीचे जमीन के स्पर्श और उससे उत्पन्न होने वाली संवेदना का अनुभव करें।

शरीर के चारों ओर के वातावरण–निकट और दूर की ध्वनियों तथा त्वचा का स्पर्श करने वाली हवा के तापक्रम के साथ सामंजस्य स्थापित कर लें।

कमरे की व्यवस्था को, दिन के उस समय को, आपने जो वस्त्र पहने हैं उनके रंग को याद करें।

यह सुनिश्चित कर लें कि स्वाद, गंध, स्पर्श, श्रवण की इंद्रियाँ पूरी तरह बहिर्मुखी हो गयी हैं और सामान्य रूप से कार्य कर रही हैं।

यदि आवश्यक हो तो प्राण को मूलाधार में लौटाने की प्रक्रिया को कुछ और बार दुहरा लें।

जब आप इस बात से आश्वस्त हों कि इन्द्रियाँ सामान्य रूप से क्रियाशील हैं तब शरीर को थोड़ा हिलाएँ और धीरे-से आँखों को खोल दें।

अब अभ्यास पूरा हुआ।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 5: प्राण शक्ति का दर्शन

अवस्था 1: तैयारी

शवासन में लेट कर अभ्यास की तैयारी करें।
पूरे शरीर और मन को शांत और स्थिर हो जाने दें।
शरीर को पूर्णतः जमीन पर ढीला छोड़ दें।
जमीन को शरीर का भार सँभालने दें।
किसी भी प्रकार के शारीरिक, मानसिक या भावनात्मक तनाव का अनुभव हो रहा हो तो उसे दूर करें।
पूरा शरीर तनावमुक्त और आराम की स्थिति में है।
शरीर के भीतर गतिमान सहज श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।
प्रत्येक पूरक एवं रेचक पर ध्यान दें।
सहज श्वास का अनुगमन करते हुए सभी तनावों को दूर हो जाने दें और मन को शांत हो जाने दें।

अवस्था 2: शरीर का विलोपन

अब शरीर के विलय के लिए तैयार हो जाएँ।
अभ्यास प्रारंभ करने के लिए अपनी सजगता को दाएँ पैर के अँगूठे पर ले जाएँ।
अँगूठे का स्पष्ट रूप से आंतरिक दर्शन करें।
अब यह मानस-दर्शन करें कि दायाँ अँगूठा अग्नि के पास रखे मक्खन की तरह धीरे-धीरे पिघल रहा है।
धीरे-धीरे इसके स्वरूप को विलुप्त होते देखें।
शनैः-शनैः इसे पूरी तरह पिघलने या विलुप्त हो जाने दें।
अनुभव करें कि अँगूठा वास्तव में विलुप्त हो रहा है।
अब दाएँ पैर की प्रत्येक अँगुली के पिघलने या विलोपन का अभ्यास करें।
जब आप ऐसा कर पाते हैं, तब क्रम से शरीर के अन्य भागों का विलोपन आरंभ करें।

क्रमश: शरीर के प्रत्येक भाग के पिघल कर पूरी तरह विलुप्त हो जाने की कल्पना करते जाएँ।
अँगूठे से लेकर पूरा दायाँ पैर सजगता के साथ विलुप्त हो जाता है।
दाएँ टखने से दाएँ पैर और दाएँ नितंब का पिघलना जारी रखें।
पूरा दायाँ पैर पिघलता जा रहा है और विलुप्त होता जा रहा है।
भौतिक शरीर की अवधारणा को शून्य में बदल जाने दें।
अपनी सजगता को बाएँ पैर और उसकी अँगुलियों पर ले जाएँ।
एक-एक कर अँगुलियों को लुप्त करना आरंभ करें।
उसी प्रकार बाएँ तलवे से बाएँ पैर, बाएँ नितंब का विलोप करें।
यदि चमकीली नील-श्वेत प्रकाश रेखाएँ प्रकट होने लगती हैं तो इसका अर्थ है कि प्राण प्रकट हो रहा है।
भौतिक शरीर की सजगता प्राणिक शरीर की सजगता में विलीन होती जा रही है।
इसे तब तक जारी रखें जब तक प्राणमय कोश के स्वरूप का सहज रूप से अनुभव न होने लगे।
सजगता को श्रोणी प्रदेश में ले जाएँ और पूरी श्रोणी, उदर, दाएँ और बाएँ वक्ष का विलोपन आरंभ कर दें।
पूरा धड़ सजगता के साथ पिघल कर विलुप्त होता जा रहा है।
दाएँ कंधे से लेकर पूरे दाएँ हाथ का विलोपन आरंभ करें।
क्रम से एक-एक कर सभी अँगुलियों को तब तक पिघलाते जाएँ जब तक पूरा दायाँ हाथ विलुप्त न हो जाए।
सजगता को बाएँ कंधे पर ले जाएँ और धीरे-धीरे अँगुलियों के साथ पूरे बाएँ हाथ को पिघला कर विलुप्त कर दें।
अब गरदन और सिर की ओर जाएँ, तथा अनुभव करें कि वे गर्मी से पिघल रहे हैं, मानो मोमबत्ती की ज्योति की गर्मी से मोम पिघल रहा हो।
कुछ क्षणों के लिए अनुभव करें कि प्राणमय कोश भौतिक शरीर, शारीरिक संरचना की सीमा से मुक्त हो गया है।
संपूर्ण प्राणमय कोश प्रकाश कणों से, प्राण शक्ति की आभा से प्रदीप्त हो उठा है।

अवस्था 3: अभ्यास की समाप्ति

प्राण शक्ति के दर्शन से ध्यान हटा कर सहज श्वास पर ले जाएँ।
श्वास-प्रश्वास की संवेदना का अनुभव करें।
नासिकाओं में श्वास की संवेदना का अनुभव करें, पूरक के साथ श्वास की ठण्ढक और रेचक के साथ गर्माहट का अनुभव करें।
श्वास को थोड़ा गहरा बनायें और वक्ष तथा उदर में श्वास की गति के प्रति सजग हो जाएँ।
पूरक के साथ उदर एवं वक्ष में थोड़े प्रसार का और रेचक के साथ साम्यता का अनुभव करें।
भौतिक शरीर के प्रति सजगता का विस्तार करते हुए उसे हाथों, पैरों, पूरे धड़, गरदन और सिर तक ले जाएँ।
पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
भौतिक शरीर के भार और उसकी स्थूलता का अनुभव करें।
शरीर के नीचे के धरातल की ठोसता का अनुभव करें, जिसने शरीर को शवासन में धारण कर रखा है।
अब शरीर के चारों ओर के स्थान के प्रति सजग हो जाएँ।
उस कमरे को और उसमें अपनी स्थिति को याद करें जिसमें आप लेटे हुए हैं।
कमरे के अंदर और बाहर की ध्वनियों को सुने।
इन ध्वनियों के माध्यम से सजगता को पूर्णत: बहिर्मुखी हो जाने दें।
सजगता को भौतिक शरीर में वापस ले आएँ और शरीर को हिलाने के लिए मानसिक रूप से तैयार हो जाएँ।
हाथों और पैरों की अँगुलियों के प्रति सजग हो जाएँ तथा उन्हें धीरे-धीरे हिलाना आरंभ करें।
सिर को अगल-बगल घुमाएँ, और हाथों को सिर के ऊपर ताने।
जब आप तैयार हों तब उठ कर बैठ जाएँ।
यदि आप चाहें तो हथेलियों को आपस में रगड़ कर आखों पर रखें और धीरे-से आँखों को खोल दें।
अब अभ्यास पूरा हुआ।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास नोट : इस अभ्यास को शरीर के किसी भी भाग से आरंभ किया जा सकता है, हालाँकि सामान्यत: इसे दाएँ हाथ या दाएँ पैर के अँगूठे से आरंभ किया जाता है। यह अभ्यास कुछ दिनों या सप्ताहों में अच्छी तरह होने लगता है। इस अभ्यास को एक-एक चरण में किया जाता है और इन्द्रियातीत अनुभूति को नियंत्रित रखा जाता है। शरीर के प्रत्येक भाग को उत्तरोत्तर विलीन किया जाता है।

अंतत: शरीर में हल्केपन की अनुभूति होती है। ऐसा कभी भी हो सकता है। एक क्षणांश में प्रकाशमान प्राण शक्ति को देखना संभव है। इस पल में सजगता शारीरिक एवं मानसिक आयामों से परे प्राण के आयाम में चली जाती है। प्राण शक्ति का दर्शन कुछ संवेदनशील व्यक्तियों को तभी प्राप्त होता है जब वे पैर के अँगूठे का विलोपन आरंभ करते हैं। विलोपन की प्रक्रिया में दर्शन किसी भी व्यक्ति को किसी भी अवस्था में हो सकता है। जब यह दर्शन सफलतापूर्वक प्राप्त हो जाता है तब प्राण का वितरण अधिक प्रभावकारी हो जाता है।



15

स्व-उपचार

एक उपचारात्मक संकल्प की रचना या उसका सशक्तिकरण

अभ्यास 1: उपचारात्मक संकल्प के लिए योग निद्रा

सामान्य स्वास्थ्य : संपूर्ण शरीर में वितरण

अभ्यास 2: प्रसार एवं साम्यता
अभ्यास 3: प्रसार एवं संकुचन

क्षतिग्रस्त भागों या तंत्रों का उपचार

अभ्यास 4: उपचार के लिए प्राण का जागरण
अभ्यास 5: उपचार के लिए प्राण का जागरण (रूपांतर)

उपचारात्मक अभ्यासों के प्रभावकारी होने के लिए प्राण शक्ति का जाग्रत होना आवश्यक है। अपने या किसी अन्य के शरीर को प्राण से अनुप्राणित करना तभी संभव है जब उपचारक या अभ्यासकर्ता ने जाग्रत प्राण का वास्तविक अनुभव किया हो। उपचार केवल प्राणमय शरीर के माध्यम से हो सकता है; मानसिक स्तर पर मानस-दर्शन करना पर्याप्त नहीं होता है। प्राण का मानस-दर्शन प्रकाश कणों के प्रवाह के रूप में सरलता और स्वेच्छा से होना चाहिए।

इस प्रकार सफल उपचार के लिए प्रत्येक अवस्था को पूर्ण एकाग्रता के साथ सहज रूप से किया जाना चाहिए।

इस अध्याय में ऐसी विशिष्ट योग निद्रा का समावेश किया गया है जो सजगता को रोग या कष्ट का सूक्ष्मता से पता लगाने के लिए निदेशित करती है, और समग्र उपचार के संकल्प की रचना में सहायता करती है। समग्र उपचार का संकल्प, हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ रहने, ऊर्जामय रहने अथवा सम्पूर्ण स्वास्थ्य के अनुभव के लिए एक सकारात्मक संकल्प हो सकता है। यद्यपि इस अभ्यास का उद्‌देश्य उन शारीरिक, मानसिक या भावनात्मक तत्त्वों को भी ढूँढ़ निकालना है जो उपचार में बाधा उत्पन्न करते हैं, और व्यावहारिक संकल्पों की ऐसी शृंखला तैयार करना है जो स्वास्थ्य के लिए व्यावहारिक निर्देश दे सकें। इस अभ्यास को तब तक दुहराया जा सकता है जब तक उपयुक्त संकल्प निर्धारित न हो जाए।

इस अध्याय में स्व-उपचार के अभ्यासों का भी दो खण्डों में बाँटकर समावेश किया गया है। प्रथम खण्ड में सामान्य स्वास्थ्य को बनाए रखने या उसे पुनः प्राप्त करने के लिए अभ्यास हैं। इन अभ्यासों में क्रमबद्ध ढंग से शरीर के विभिन्न भागों में और उसके बाद पूरे शरीर में प्राण का वितरण किया जाता है। दूसरे खण्ड में शारीरिक चोटों के या टूटी हुई हड्‌डी, मोच, स्लिप्ड डिस्क, गठिया, दुर्बल या रोगग्रस्त अंग के उपचार के लिए प्राण के जागरण के अभ्यास हैं। प्राण को सजगता के साथ अंग या क्षेत्र विशेष में बार-बार प्रेषित किया जाता है। शरीर के उस क्षेत्र विशेष को प्राण से परिपूर्ण कर दिया जाता है और उसके बाद प्राण को पूरे शरीर में वितरित किया जाता है।

एक उपचारात्मक संकल्प की रचना या उसका सशक्तिकरण

अभ्यास 1: उपचारात्मक संकल्प के लिए योग निद्रा

अवस्था 1: तैयारी

शवासन में लेट जाएँ और यह सुनिश्चित कर लें कि आपका सिर, गरदन, मेरुदण्ड, धड़ और पैर एक सीध में हों।

दोनों पैर एक-दूसरे से 45 सेन्टीमीटर की दूरी पर हों; दोनों हाथ शरीर से कुछ दूरी पर हों और हथेलियाँ ऊपर की ओर खुली हुई हों।

अँगुलियों स्वाभाविक रूप से अंदर की ओर मुड़ी हुई हों।
आँखों और मुँह को धीरे-से बंद कर लें। पूरे शरीर को पूर्णत: विश्राम की अवस्था में ले आयें; यह जाँच लें कि कहीं कोई तनाव न रहे।
शरीर में होने वाली हलचल को बंद कर दें और शरीर की पूर्ण स्थिरता के प्रति सजग हो जाएँ।
इसे साक्षी-भाव के साथ करें, एक मौन साक्षी जो शरीर की स्थिरता का अवलोकन कर रहा है।
अपने आस-पास की सभी बाहरी ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।
बौद्धिक रूप से ध्वनियों का विश्लेषण किए बिना कुछ क्षणों तक अपनी सजगता को एक से दूसरी ध्वनि पर ले जाएँ।
अब मानसिक रूप से अपने आस-पास के वातावरण का मानस-दर्शन करें और अपने शरीर को इस प्रकार देखें मानो आप इसे बाहर से देख रहे हों।
अपने ध्यान को कुछ मिनटों तक सहज और स्वाभाविक श्वास के प्रवाह पर केन्द्रित कर दें।
सावधानीपूर्वक नासिका छिद्रों, गले से नीचे जाते हुए फेफड़ों तक और पुन: बाहर जाने तक इसके मार्ग का अनुगमन करें।
बिना किसी अंतराल के प्रत्येक श्वास के प्रति सजगता की निरंतरता को बनाए रखें।
अपने प्रयासरहित, सहज श्वसन के साक्षी बने।
कुछ मिनटों के बाद स्वयं से मानसिक रूप से कहें, "मैं सोऊँगा नहीं। मैं पूरे अभ्यास के दौरान जागता रहूँगा।"

अवस्था 2: संकल्प

यदि आपने पहले से ही कोई स्वास्थ्यप्रद संकल्प ले रखा है, तो उसे तीन बार आस्था और विश्वास के साथ दुहराएँ।
यदि आपने अब तक संकल्प का चयन नहीं किया है तो पूरे अभ्यास के दौरान अपने मन को स्वतंत्र रखें ताकि आप अगली बार के लिए एक संकल्प की रचना कर पाएँ।

अवस्था 3: सजगता एवं प्राण को घुमाना

अब अपनी सजगता को पूरे शरीर में घुमाएँ।

जैसे-जैसे शरीर के विभिन्न अंगों के नाम लिए जाते हैं, अपनी सजगता को एक के बाद दूसरे अंग की ओर प्रवाहित होने दें और यह अनुभव करें कि ऊर्जा सजगता के साथ प्रवाहित हो रही है।

अपनी सजगता को शरीर के दाएँ भाग में ले जाएँ– दाएँ हाथ का अँगूठा, पहली अँगुली, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली, हथेली, हथेली के पीछे का भाग, कलाई, भुजा का निचला भाग, केहुनी, भुजा का ऊपरी भाग, कंधा, काँख, कमर, नितंब, दायीं जाँघ, घुटना, पिण्डली, टखना, एड़ी, तलवा, पैर का ऊपरी भाग, दाएँ पैर का अँगूठा, पहली अँगुली, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली।

अब अपनी सजगता को बाएँ भाग की ओर ले जाएँ– बाएँ हाथ का अँगूठा, पहली अँगुली, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली, हथेली, हथेली के पीछे का भाग, कलाई, भुजा का निचला भाग, केहुनी, भुजा का ऊपरी भाग, कंधा, काँख, कमर, नितंब, बायीं जाँघ, घुटना, पिण्डली, टखना, एड़ी, तलवा, पैर का ऊपरी भाग, बाएँ पैर का अँगूठा, पहली अँगुली, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली।

अब अपनी सजगता और ऊर्जा को शरीर के पीछे के भाग में ले जाएँ, एक-एक कर पीठ के विभिन्न भागों पर जाएँ– दायाँ कंधा, बायाँ कंधा, दायाँ पुट्ठा, बायाँ पुट्ठा, दायाँ नितंब, बायाँ नितंब, मेरुदण्ड, पूरी पीठ, गरदन के पीछे का भाग और सिर के पीछे का भाग।

शरीर के सामने का भाग– सिर का ऊपरी भाग, ललाट, दायीं भौंह, बायीं भौंह, भ्रूमध्य, दायीं पलक, बायीं पलक, दायीं आँख, बायीं आँख, दायाँ कान, बायाँ कान, दायाँ गाल, बायाँ गाल, नाक, नासिकाग्र, दायीं नासिका, बायीं नासिका, ऊपर का ओंठ, नीचे का ओंठ, ठुड्ढी, जबड़ा, गला, दायीं हसली, बायीं हसली, दायाँ वक्ष, बायाँ वक्ष, वक्ष के बीच का भाग, नाभि, उदर, उदर का निचला भाग, श्रोणी-प्रदेश।

पूरा दायाँ पैर, पूरा बायाँ पैर, दोनों पैर एक साथ।

पूरा दायाँ हाथ, पूरा बायाँ हाथ, दोनों हाथ एक साथ।

पैर, हाथ, पीठ, सामने का भाग, सिर; पूरा शरीर, पूरा शरीर, पूरा भौतिक शरीर।

स्वयं को अपने सम्पूर्ण शरीर के साक्षी के रूप में देखें।

मैं यह शरीर नहीं हूँ, मैं यह मन नहीं हूँ, मैं साक्षी हूँ।

अवस्था 4: उपचार किए जाने वाले भाग का मानस-दर्शन

अपनी सजगता को ठीक उस अंग विशेष पर, या उन भागों पर केन्द्रित करें जिनका उपचार किया जाना है।

मानसिक रूप से शरीर के अंदर जाएँ और उस क्षेत्र या अंग को देखें। प्रभावित भाग के सही स्वरूप और आकार का मानस-दर्शन करें। जब आप उसकी स्पष्ट छवि देख पाते हैं तब अपनी सजगता को धीरे-धीरे उसके चारों ओर और उसके अंदर घुमाएँ, जितना अधिक संभव हो उसे उतना विस्तार से देखें– उससे सम्बद्ध पेशियों और अस्थियों को, ऊतकों, तंत्रिकाओं, कोशिकाओं और रक्त को देखें; देखें कि वह किस रंग का है। हर संभव कोने से उस अंग या क्षेत्र विशेष की जाँच करें।

अवस्था 5: रोग/विकार की खोज

अब उस दर्द के प्रति सजग हो जाएँ जो आहत या रोगग्रस्त भाग में हो रहा है; दर्द की मात्रा, उसकी गंभीरता और उसके स्वरूप के प्रति अत्यंत सजग हो जाएँ।

इस भाग का मानस-दर्शन करते हुए अपना पूरा ध्यान इस पर केन्द्रित कर दें।

जाँच करें कि दर्द लगातार हो रहा है या रुक-रुक कर, वह मंद है या तीव्र।

क्या दर्द एक स्थान पर है या इधर-उधर भी हो रहा है?

किसी एक विशेष स्थान पर टीस मार रहा है या पूरे शरीर में फैल रहा है?

सभी सम्बद्ध अनुभवों और संवेदनाओं पर सावधानी से ध्यान दें।

साक्षी बन कर सावधानीपूर्वक दर्द का परीक्षण करें।

उसके बाद, दर्द के अंतर्निहित कारण का पता लगाने का प्रयास करें।

तनावमुक्त हो जाएँ और इस कार्य हेतु पर्याप्त समय लें।

शरीर और मन के अंदर गहराई में दबी समस्या के परिमाण का आकलन करें; अंदर की दुर्बलता या रोग के प्रति पूरी तरह सजग हो जाएँ।

इसे उत्पन्न करने वाले कारण के प्रति भी सजग हो जाएँ।

इसके अतिरिक्त आप यह भी सुनिश्चित कर सकते हैं कि पाचन तंत्र, हृदय तंत्र, रक्त वाहिनी तंत्र, श्वसन तंत्र, प्रतिरक्षा प्रणाली, हॉरमोन प्रणाली, स्नायु तंत्र, प्रजनन तंत्र, उत्सर्जन तंत्र, लसीका तंत्र और अस्थि-पेशीय तंत्र में से कौन-कौन से तंत्र प्रभावित हुए हैं।

अपने अंतर्त्राटक या आंतरिक एकाग्रता को बढ़ाते हुए शरीर के उस भाग या अंग पर, दर्द पर और उससे सम्बद्ध किसी बीमारी या क्षति पर केन्द्रित करते जाएँ।

अवस्था 6: उपचार के विषय में विचार करना

जब अंतर्त्राटक अच्छी तरह से होने लग जाए तब आप अपने शरीर में जो परिवर्तन चाहते हैं उस पर ध्यान केन्द्रित करें।
उपचार को प्रभावी बनाने के लिए शरीर के उस तंत्र के प्रति पूर्णत: सजग हो जाएँ जिसमें आप संतुलन लाना चाहते हैं।
यदि आवश्यक हो तो उपचार के लिए एक योजना और कार्यक्रम तैयार कर लें।
स्वस्थ होने की अपनी इच्छा का परीक्षण करना आरंभ करें।
क्या आप सचमुच स्वस्थ होना चाहते हैं?
संभवत: आपकी पीड़ा के कुछ अंश का स्रोत आपकी विचार प्रक्रिया में छिपा है या आपको अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है।
हो सकता है आप स्वयं अपने प्रति नकारात्मक हों या सामान्य रूप से जीवन के प्रति आपका दृष्टिकोण नकारात्मक हो।
अपने साथ पूरी तरह ईमानदार रहें।
कभी-कभी बीमारी या दर्द अत्यंत अप्रिय परिस्थिति से बचने का एक माध्यम होता है। यदि ऐसी बात है तो इसके प्रति सजग हो जाएँ।
यदि ऐसा है तो अपने कष्ट के इस पक्ष को अपने उपचारात्मक संकल्प में सम्मिलित करना होगा।
शारीरिक लक्षणों तक सफलतापूर्वक पहुँचने के पूर्व, पूर्ण उपचार के लिए आपको अपने उस मानसिक या भावनात्मक स्वरूप को स्वीकार करना होगा जो आपको रोगग्रस्त रखता है।
मन जो सोचता है, वही शरीर में परिलक्षित होता है।
परिवर्तन के लिए अपनी तत्परता का मूल्यांकन करने का प्रयास करें।
क्या आपका मन इस समय रोगमुक्त होने के लिए तैयार है, या पहले मानसिक स्तर पर आपका उपचार किया जाना चाहिए?
यह पता लगायें कि रोगमुक्त होने के लिए वास्तव में आपकी इच्छा कितनी प्रबल है।

यदि आप समझते हैं कि आपकी नकारात्मक मनोवैज्ञानिक विचारशैली ने आपके शारीरिक स्वास्थ्य को दुर्बल कर दिया है तो अपनी उपचार प्रणाली में गहराई में दबे इस आयाम के उपचार को भी सम्मिलित कर लें।
मूलत: आपका संकल्प हार्दिक रूप से सकारात्मक एवं निष्छल होना चाहिए, तभी उपचार की प्रक्रिया में उसका गहरा और शीघ्र प्रभाव होगा।

अवस्था 7: उपचार के लिए संकल्प

अपनी उपचार प्रणाली के अनुसार आपको सावधानीपूर्वक संकल्प की रचना के लिए पर्याप्त समय लेना चाहिए।
योग निद्रा में लिया गया संकल्प प्रबल होता है और जीवन में फलीभूत होता है।
यह संकल्प सरल, व्यावहारिक और स्पष्ट होना चाहिए।
यदि आपको लगता है कि कुछ परिवर्तनों की आवश्यकता है तो व्यावहारिक बने और पहले परिवर्तन से आरंभ करें।
उदाहरण के लिए, भोजन, प्रवृत्ति या मित्रों में परिवर्तन।
जब उसमें सफलता मिल जाए तब अगले परिवर्तन की ओर बढ़ें।
इस प्रकार अभ्यास में आपका विश्वास तब तक बढ़ता जाएगा जब तक आपको इस प्रक्रिया की सफलता में पूर्ण विश्वास न हो जाए।
यदि आपने पहले ही संकल्प की रचना कर ली है तो उसे तीन बार दुहराएँ।

अवस्था 8: अभ्यास की समाप्ति

संकल्प लेने के बाद अपनी सजगता को वापस अपने शरीर पर, और कमरे में इसकी स्थिति पर ले आएँ।
शवासन में लेटे हुए संपूर्ण शरीर के प्रति समरूप सजगता को बढ़ाएँ।
भूमि पर लेटे हुए संपूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
भूमि का स्पर्श कर रहे अपने शरीर के सभी भागों का अनुभव करें।
भूमि और शरीर के सभी स्पर्श बिन्दुओं के प्रति सजग हो जाएँ– सिर का पिछला भाग और भूमि, पुट्ठे और भूमि, केहुनियाँ और भूमि, हाथों का पिछला भाग और भूमि, नितंब और भूमि, पिण्डलियाँ और भूमि, एड़ियाँ और भूमि।

भूमि और उसका स्पर्श करने वाले शरीर के सभी भागों के प्रति एक साथ सजग बन जायें, शरीर और भूमि के बीच एक स्पर्श रेखा, एक स्पर्श तल है, भूमि और शरीर के बीच इस स्पर्श तल के प्रति सजग हो जाएँ।
अपनी सजगता का विस्तार कर उसे शरीर से परे ले जायें और आप जिस कमरे में हैं उसे याद करें।
कमरे में रखी सभी वस्तुओं को विस्तार से, और कमरे में अपनी स्थिति को मानसिक रूप से देखें।
वातावरण की सभी ध्वनियों को सुने और उनके सहारे वर्तमान में आ जाएँ।
आप यह स्मरण करें कि आप योग निद्रा का अभ्यास कर रहे थे और अब यह अभ्यास पूरा हुआ। अपने भौतिक शरीर के प्रति पूर्णत: सजग हो जाएँ।
धीरे-धीरे शरीर में हलचल करना आरंभ करें।
हाथ-पैर की अँगुलियों, हाथों और पैरों को हिलाएँ।
सिर को दोनों बगल धीरे-धीरे घुमाएँ।
अपने हाथों को सिर के ऊपर ले जाएँ और पूरे शरीर को अच्छी तरह ताने।
जब आप तैयार हों, तब धीरे से उठ कर बैठ जाएँ और आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

सामान्य स्वास्थ्य: संपूर्ण शरीर में वितरण

अभ्यास 2: प्रसार एवं साम्यता

अवस्था 1: तैयारी

एक आरामदायक आसन में आ जायें।
चूँकि प्राण का आंतरिक वितरण किया जाएगा, इसलिए सुझाव दिया जाता है कि या तो आप पैरों को सामने फैला कर बैठें या शवासन में लेट जाएँ।
यदि आप बैठे हुए हैं तो यह सुनिश्चित कर लें कि आपके शरीर का भार दोनों ओर संतुलित है।
संपूर्ण शरीर को पूरी तरह तनावरहित कर दें।
अपनी श्वसन प्रक्रिया का अवलोकन आरंभ करें।
जब आप श्वास एवं प्रश्वास कर रहे हों तब शरीर को पूरी तरह विश्राम की अवस्था में आने दें।

यह याद रखें कि अभ्यास के दौरान शरीर को बिल्कुल नहीं हिलाना है। सजगता का प्रवाह खण्डित नहीं होना चाहिए, इसलिए दृढ़तापूर्वक स्वयं से कहें, 'मैं तब तक सजग और सावधान रहूँगा जब तक अभ्यास पूरा न हो जाए। मैं सोऊँगा नहीं।'

अवस्था 2: पिंगला नाड़ी का पथ

शरीर को एक रिक्त खोल के रूप में देखते हुए उसके प्रति सजग हो जाएँ और आंतरिक आकाश का अवलोकन करें।
उस रिक्त स्थान के अंदर अतीन्द्रिय पथ एवं चक्रों का मानस-दर्शन करें।
पिंगला नाड़ी के प्रति तीव्र सजगता का विकास करें और उसे मूलाधार से दायीं ओर, स्वाधिष्ठान से बायीं ओर, मणिपुर से दायीं ओर, अनाहत से बायीं ओर, विशुद्धि से दायीं ओर घूमते हुए और आज्ञा में प्रवेश करते हुए देखें।
आज्ञा से अपनी सजगता को सुषुम्ना के द्वारा सीधे मूलाधार में ले जाएँ और अभ्यास का अगला चक्र आरंभ करें।
पिंगला नाड़ी में श्वास को प्राण की गति और सजगता के साथ समन्वित कर दें।
उज्जायी श्वसन करना है और जीभ को धीरे से पीछे की ओर मोड़ कर खेचरी मुद्रा में ले आना है।
जब आप श्वास लेते हैं तब प्राण पिंगला के द्वारा मूलाधार से आरोहण करते हुए आज्ञा तक जाता है।
जब आप श्वास छोड़ते हैं तब प्राण सुषुम्ना के द्वारा सीधे अवरोहण करते हुए आज्ञा से मूलाधार तक जाता है।

अवस्था 3: आज्ञा तक प्राण का उत्थान

अब पिंगला नाड़ी में ऊर्ध्व गमन करते हुए प्राण का अनुभव करें।
विद्युत धारा के समान गतिशील नील-श्वेत प्रकाश के प्रवाह के रूप में प्राण का मानस-दर्शन करें।
उज्जायी पूरक करते समय श्वास एवं सजगता को प्राण के साथ पिंगला के द्वारा मूलाधार से आज्ञा चक्र तक ले जाएँ।

श्वास को आज्ञा पर पाँच सेकण्ड तक रोक कर मानसिक रूप से दुहराएँ, 'आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा'।

उसके बाद, रेचक करते समय केवल सजगता को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा नीचे मूलाधार में ले जाएँ; प्राण आज्ञा पर ही रह जाता है।

अभ्यास को तब तक जारी रखें जब तक प्राण के वास्तविक जागरण का अनुभव न हो जाए।

ऊर्जा की गति का प्रबलता से अनुभव करते हुए, और प्राण का स्पष्ट मानस-दर्शन करते हुए, पिंगला नाड़ी के माध्यम से प्राण को पूरी एकाग्रता के साथ जाग्रत करते रहें।

प्रारंभ में 49 चक्र अभ्यास करें।

बाद में, जब आपको अभ्यास में निपुणता प्राप्त हो जाएगी तब आपको चक्रों की गिनती करने की आवश्यकता नहीं होगी, क्योंकि आपको प्राण के जागरण की अनुभूति होने लगेगी।

अवस्था 4: संपूर्ण शरीर में प्राण का वितरण

अब, जब आप आज्ञा चक्र में पहुँच जाते हैं तब वहाँ बिना किसी तनाव के कुछ क्षणों तक अंतर्कुम्भक करते हुए रुकें।

उसके बाद रेचक करें, किन्तु सुषुम्ना के द्वारा नहीं, बल्कि जिस प्रकार स्पन्ज प्रत्येक छिद्र से पानी निकालता है, उसी प्रकार शरीर के प्रत्येक रोम छिद्र से रेचक करें, और पूरे शरीर को तनावमुक्त हो जाने दें।

पुनः पूरक करें, प्रत्येक रोम छिद्र एवं कोशिका से श्वास लें, और अनुभव करें कि पूरा शरीर एक गुब्बारे की भाँति फैलता जा रहा है।

प्रत्येक रेचक के साथ साम्यता का और प्रत्येक पूरक के साथ प्रसार का अनुभव करते जाएँ।

स्मरण रहे कि आप उज्जायी प्राणायाम करते हुए श्वसन कर रहे हैं।

संपूर्ण शरीर में उज्जायी श्वसन का अनुभव हो रहा है, मानो प्रत्येक रोम छिद्र और कोशिका प्राण को चूस रही हैं।

जब आप पूरक करते हैं, तब प्रत्येक छिद्र और कोशिका श्वास लेती है, और पूरा शरीर एक गुब्बारे के समान फैलता है।

जब आप रेचक करते हैं, तब आपका पूरा शरीर श्वास छोड़ता है और कपड़े की गुड़िया की भाँति शिथिल हो जाता है।

संपूर्ण शरीर के द्वारा श्वसन की, पूरक के साथ पूरे शरीर के फैलने की और रेचक के साथ तनावमुक्त होने की सजगता को बढ़ाते जाएँ।

प्राण के वितरण के लिए अपनी सजगता को उसके भण्डार, आज्ञा चक्र में वापस ले आएँ।

अब आज्ञा संपूर्ण श्वसन प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु है; पूरक और रेचक की प्रक्रिया का प्रारंभ और अंत; तथा प्रसार एवं साम्यता आज्ञा से ही संचालित होती है।

पूरक करने पर प्राण का प्रसार आज्ञा से पूरे शरीर में होता है और रेचक करने पर प्राण आज्ञा में लौट जाता है।

आज्ञा से पूरक करें और सिर से पैर तक पूरे शरीर में प्राण का वितरण करें। अनुभव करें कि पूरा शरीर फुलाने वाले गुब्बारे के समान है।

रेचक के दौरान प्राण को वापस आज्ञा में ले आएँ और पूर्ण साम्यता का अनुभव करें।

पूरक करते हुए प्राण का वितरण और प्रसार करें; रेचक करते हुए प्राण को वापस ले आएँ और साम्यता की अवस्था में आ जाएँ।

अब आपकी सजगता का यही स्वरूप है और वह इसी प्रक्रिया का अनुसरण कर रही है। पूर्णतः सतर्क रहें।

पूर्ण एकाग्रता के साथ इस नियमित लय को जारी रखें; पूरक करें, वितरण और प्रसार करें; रेचक करें, प्राण को लौटायें और साम्यता की अवस्था में आ जाएँ।

उज्जायी श्वसन जारी रखें, समय-समय पर खेचरी मुद्रा को कुछ क्षणों के लिए खोलने की आवश्यकता हो सकती है, लेकिन पुनः इस मुद्रा में लौट आएँ।

आज्ञा चक्र, अर्थात् उस भंडार के प्रति सजगता के साथ अभ्यास जारी रखें जहाँ से उज्जायी की सहायता से पूरे शरीर में प्राण का वितरण किया जाता है, और जहाँ प्राण को पुनः लौटा दिया जाता है।

उज्जायी प्राणायाम सहज और स्वाभाविक रूप से होना चाहिए ताकि प्राण के वितरण एवं उसकी वापसी की प्रक्रिया के दौरान श्वसन बिना प्रयास के सहज रूप से चलता रहे।

आपको अपनी एकाग्रता को पूरी तरह प्राण के मानस-दर्शन, उसकी गति, वितरण और प्रसार, उसकी वापसी और साम्यता के अनुभव में लगा देना

चाहिए। यद्यपि आप श्वास ले रहे और छोड़ रहे हैं, लेकिन सजगता केवल प्राण के वितरण और प्रसार, वापसी और साम्यता के प्रति रहती है। इस अभ्यास को पूर्ण सजगता, पूर्ण मानसिक सतर्कता के साथ जारी रखें।

जब आप पूरक करते हैं तब प्राण को आज्ञा से सभी दिशाओं में इस प्रकार प्रेषित करें कि पूरा शरीर देदीप्यमान प्रकाश रेखाओं से भर जाए और आपको प्रसार का अनुभव हो।

जब आप रेचक करते हैं तब प्राण को शरीर के सभी भागों से वापस आज्ञा में ले आयें और तनावमुक्ति का अनुभव करें।

श्वसन प्रक्रिया स्वाभाविक और सहज है।

आपकी सजगता वितरण और प्रसार, वापसी और साम्यता की लयबद्ध प्रक्रिया का अनुसरण करती है।

पूरक करते हुए प्राण शक्ति को शरीर के सभी भागों में पहुँचा दें।

रेचक करते हुए इसे इसके स्रोत, आज्ञा में वापस ले आयें।

वितरण के समय ऐसा अनुभव करें कि आपका पूरा शरीर अंदर और बाहर से इस गतिशील प्राण शक्ति से भर गया है।

जब आप प्राण को लौटा लेते हैं तब शरीर विश्राम की अवस्था में आने लगता है।

शरीर में पूर्ण शून्य के अनुभव को विकसित करें। इस शून्य के अंदर प्रकाश ऊर्जा को पूरे शरीर में तीव्र गति से प्रवाहित होते हुए देखें।

अवस्था 5: शरीर के प्रत्येक भाग में वितरण

अब शरीर के एक-एक अंग पर ध्यान दें।

जब आप पूरक करते हैं तब प्राण को आज्ञा से दाएँ हाथ की ओर प्रेषित करें और उसमें होने वाले प्रसार का अनुभव करें।

अपनी सजगता का विस्तार केवल दाएँ हाथ में करें।

अनुभव करें कि कंधे से अँगुलियों के छोरों तक दाएँ हाथ की प्रत्येक कोशिका में प्राण प्रवेश कर रहा है और दायें हाथ का प्रत्येक भाग प्राण से भरता जा रहा है।

दाएँ हाथ का देदीप्यमान और उज्जवल रूप में मानस-दर्शन करें; अनुभव करें कि प्रकाश के द्वारा इसका प्रसार हो रहा है।

जब आप रेचक करते हैं तब प्राण को दाएँ हाथ से वापस आज्ञा में ले आएँ।

अनुभव करें कि दायाँ हाथ तनावमुक्त हो गया है।
इस अभ्यास को कुछ देर ऐसे ही जारी रखें; मानसिक रूप से दाएँ हाथ को प्राण से भरना और ऊर्जा का प्रसार करना, उसके बाद प्राण को वापस आज्ञा में ले आना और दाएँ हाथ को विश्राम की अवस्था में लाना।
प्रसार और साम्यता की प्रक्रिया पूर्णत: प्राण पर आधारित है; इसमें भौतिक शरीर की कोई वास्तविक क्रिया नहीं होती है।
आज्ञा से दाएँ हाथ में प्राण के प्रवाह का और पुन: उसके लौटने का प्रबलता से अनुभव करें।
अब अपनी सजगता को बाएँ हाथ में ले जाएँ।
प्राण को पूरे बाएँ हाथ में, कंधे से अँगुलियों के छोरों तक वितरित करें।
जब आप प्राण का वितरण कर रहे हैं तब अनुभव करें कि बाएँ हाथ का विस्तार हो रहा है।
पूरे बाएँ हाथ को अंदर और बाहर से चौंधिया देने वाले प्रकाश से भर दें।
अनुभव करें कि प्रत्येक कोशिका, ऊतक, मांसपेशी और अस्थि प्राण की सजगता से, प्राण के अनुभव से भर गयी है।
जब आप रेचक करते हैं तब ऊर्जा को वापस ले जायें और साम्यता की अवस्था में आ जाएँ।
हर बार प्राण की आपूर्ति और उसकी वापसी से आप बाएँ हाथ में प्राण शक्ति का विस्तार करते हैं और फिर उसे साम्यावस्था में लाते हैं।
अब सजगता को दाएँ पैर में ले आएँ।
पूरे दाएँ पैर में प्राण का वितरण करें, उसे प्राण ऊर्जा से भरता हुआ देखें।
वितरण करें और प्रसार करें; वापस लें और साम्यता लाएँ।
केवल दाएँ पैर के प्रति पूर्णत: सजग हो जाएँ।
प्रसार एवं साम्यता के प्रति सजगता को तीव्र बनाते जाएँ।
अनुभव करें कि दाएँ पैर के प्रत्येक भाग में अंदर और बाहर प्राण व्याप्त हो रहा है। उसके बाद बाएँ पैर के प्रति सजग हो जाएँ।
अपनी सजगता को बाएँ पैर पर केन्द्रित कर दें।
नितंब से पैर की अँगुलियों तक पूरे बाएँ पैर में प्राण का वितरण करें; वितरण करें और प्रसार करें, वापस लें और साम्यता लाएँ।
केवल बाएँ पैर के प्रति सजग हो जाएँ।
प्रसार एवं साम्यता के प्रति सजगता को बढ़ाते जाएँ।

अनुभव करें कि बाएँ पैर के प्रत्येक भाग में अंदर और बाहर प्राण व्याप्त हो रहा है, इसे देदीप्यमान ऊर्जा से प्रकाशित होता हुआ देखें।

कुछ समय तक इस अभ्यास को जारी रखें।

अब अपनी सजगता को उदर के निचले भाग पर– नाभि से मूलाधार के बीच केन्द्रित करें।

धीमी और सहज उज्जायी श्वसन प्रक्रिया चल रही है।

उदर के निचले भाग के सभी अंगों में प्राण की आपूर्ति आरंभ करें– छोटी आँत, बड़ी आँत, मूत्राशय और उत्सर्जन अंग।

उदर के संपूर्ण निचले भाग में प्राण के व्याप्त होने का और उन अंगों के प्रसार का अनुभव करें।

अपनी सजगता को आज्ञा चक्र की ओर लौटाते हुए प्राण को उन अंगों से वापस ले लें और साम्यता की अवस्था में आ जाएँ।

अब अपने ध्यान को उदर के ऊपरी भाग पर केन्द्रित करें, जहाँ अनेक महत्त्वपूर्ण अंग स्थित हैं।

पूरक करें, प्राण की आपूर्ति करें और प्रसार करें; रेचक करें, प्राण को लौटा लें और साम्यता की अवस्था में आ जाएँ।

अपनी सजगता की पूरी शक्ति का प्रयोग करें; अनुभव करें कि प्राण प्रत्येक कोशिका में, ऊतक, स्नायु और अंग में भर रहा है, देखें कि प्राण से आमाशय भरता जा रहा है और उसका विस्तार हो रहा है।

मानसिक रूप से देखें कि प्लीहा, यकृत, अग्न्याशय और वृक्कों में प्राण भर रहा है और उनमें प्रसार हो रहा है।

प्रत्येक रेचक के साथ प्राण को वापस आज्ञा में ले जायें और पूर्णतः साम्यता की अवस्था में आ जाएँ।

अब मध्यपट से गले तक वक्ष के प्रति सजग हो जाएँ और उसी प्रक्रिया को जारी रखें– पूरक करें, आपूर्ति करें और प्रसार करें; रेचक करें, वापस लें और साम्यता की अवस्था में आ जाएँ।

फेफड़ों में प्राण के भरने और उनके प्रसार का मानस-दर्शन करें, किन्तु हृदय में प्राण की प्रत्यक्ष आपूर्ति नहीं करें।

प्राण से पूरे वक्ष का विस्तार करें, देखें कि अंदर और बाहर से वक्ष प्राणिक ऊर्जा के द्वारा प्रकाशमान और प्रदीप्त हो उठा है, उसके बाद रेचक करें और प्राण को वापस आज्ञा में ले जायें।

अंत में प्राण की आपूर्ति सिर में करें।
पूरक करते समय प्राण के आज्ञा चक्र से निकल कर पूरे मस्तिष्क और सिर में फैलने की संवेदना का अनुभव करें।
रेचक के साथ अनुभव करें कि प्राण पुन: आज्ञा चक्र में वापस आ रहा है।
पूरक करें और मस्तिष्क के प्रत्येक भाग में, संवेदी अंगों–आँख, कान, नाक और जिह्वा में; चेहरे और उसकी सभी मांसपेशियों में; सिर की प्रत्येक कोशिका और ऊतक में प्राण का वितरण करें।
वितरण पूरक के समय होता है और साम्यता रेचक के समय आती है।

अवस्था 6: प्रकाशवान शरीर

आज्ञा प्राण का भण्डार है, जिसकी अनुभूति असंख्य प्रकाश रेखाओं के रूप में होती है।
हर बार जब आप पूरक करते हैं, प्रकाश कणों की रेखाएँ तड़ित वेग से उसी प्रकार निकलती हैं जैसे ज्वालामुखी के फटने पर पिघला हुआ लावा निकलता है। इस अनुभव को स्पष्ट और गहन बनाएँ।
अनुभव करें कि वितरण के समय सिर के अंदर आज्ञा से श्वेत प्रकाश विकिरित होता है और रेचक के समय ऊर्जा आज्ञा में वापस जाती है।
इस सजगता को अधिक-से-अधिक बढ़ाते जाएँ।
अब अपने पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
संपूर्ण शरीर में प्राण का वितरण करना आरंभ करें और प्राणमय कोश के विस्तार का अनुभव करें।
मानसिक रूप से देखें कि आतिशबाजी से फूट कर निकलने वाली प्रकाश रेखाओं के समान आज्ञा से निकलने वाला उज्ज्वल प्रकाश पूरे शरीर में व्याप्त हो रहा है।
साम्यता की अवस्था में आ जाएँ और ऊर्जा को वापस ले जायें, पुन: श्वेत प्रकाश के आज्ञा में लौटने का अनुभव करें।
संपूर्ण शरीर में व्याप्त प्राण शक्ति के प्रति सजगता को पूरी तरह बनाए रखें; प्रत्येक अंग, मांसपेशी, अणु और कोशा इसकी ऊर्जा से अनुप्राणित हो रही है।
अनुभव करें कि आज्ञा से श्वेत प्रकाश विकिरित होकर अंदर-बाहर पूरे शरीर में व्याप्त हो रहा है।

अवस्था 7: मूलाधार में प्राण की वापसी

सजगता को आज्ञा चक्र में वापस ले आएँ।

समस्त प्राण ऊर्जा को आज्ञा में वापस ले आएँ और उज्जायी श्वसन के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरक करें और कुछ क्षणों के लिए रुकें, श्वास और सजगता को आज्ञा पर रोक कर रखें।

रेचक करें और श्वास, सजगता और प्राण को सुषुम्ना नाड़ी के माध्यम से नीचे की ओर मूलाधार में ले जाएँ।

अत्यंत सावधानीपूर्वक और पूरी सजगता के साथ प्राण को नीचे मूलाधार में ले जाना जारी रखें।

जब आप मूलाधार में पहुँच जाते हैं तब प्राण को वहाँ संचित कर दें, उसके बाद पूरक करें और सजगता को सुषुम्ना के द्वारा ऊपर आज्ञा में ले जाएँ। श्वास को आज्ञा पर कुछ सेकण्ड तक रोकें, रेचक करें और वहाँ संचित प्राण में से कुछ और प्राण सुषुम्ना के द्वारा नीचे मूलाधार में ले जाएँ। इस अभ्यास को तब तक जारी रखें जब तक यह सुनिश्चित न हो जाए कि सभी प्राण मूलाधार में लौटा दिए गए हैं।

अवस्था 8: अभ्यास की समाप्ति

खेचरी मुद्रा और उज्जायी प्राणायाम को समाप्त कर दें। श्वास को सामान्य हो जाने दें।

उसके बाद, धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक अपनी सजगता को बहिर्मुख करना आरंभ करें।

बाहर की ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।

अपने आस-पास के वातावरण को मानसिक रूप से देखें।

कुछ मिनटों के लिए अपनी श्वास पर ध्यान केन्द्रित करें और अपने भौतिक शरीर में पूरी तरह लौट आएँ।

इस क्षण आपको शरीर में हल्केपन का अनुभव होना चाहिए और सजगता पूरी तरह वर्तमान में, वर्तमान क्षण में स्थित होनी चाहिए।

आप बैठे हों या लेटे, अपने शरीर की स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।

शरीर को तुरंत नहीं हिलाएँ, केवल इसकी स्थिति के प्रति और इस तथ्य के प्रति सजग हो जाएँ कि आप इसे हिलाने वाले हैं या उठ कर बैठने वाले हैं।

कुछ क्षणों तक यह जाँचें कि आपकी सजगता सामान्य हो चुकी है और आप पूरी तरह से चेतन अवस्था में हैं।
गंध, स्वाद, स्पर्श और श्रवण इंद्रियों को जाँच लें। यदि आपको ऐसा लगता है कि आप पूरी तरह शरीर में नहीं लौटे हैं और सामान्य क्रियाशील सजगता की स्थिति में नहीं हैं, तो पुन: अपनी सजगता को आज्ञा में वापस ले जाएँ।
उज्जायी प्राणायाम का प्रयोग करें, अवरोहण करते हुए प्राण को नीचे मूलाधार में ले जाने की प्रक्रिया को कुछ और बार दुहरायें।
जब आपकी सजगता पूरी तरह बहिर्मुखी हो जाए तब धीरे-से उठ कर बैठ जाएँ, या जिस आसन में बैठे हैं उसे बदल लें और आँखों को खोल लें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 3: प्रसार एवं संकुचन

अवस्था 1: तैयारी

किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ या शवासन में लेट जाएँ।
स्वयं को पूरी तरह आराम की स्थिति में ले आएँ।
यदि आप बैठे हुए हैं तो यह सुनिश्चित कर लें कि आपके शरीर का भार दोनों ओर संतुलित है।
यदि आपने अपने शरीर को पूर्णत: व्यवस्थित कर लिया है, तो शरीर को शांत और स्थिर हो जाने दें।
शरीर और मन को शांत हो जाने दें।
अपनी श्वसन प्रक्रिया का अवलोकन करना आरंभ करें।
श्वास लेते और छोड़ते हुए शरीर को और अधिक से अधिक विश्राम की अवस्था में लाते जाएँ।
शरीर और मन में पूर्ण शांति।
मानसिक रूप से स्वयं से कहें, 'मैं पूरे अभ्यास के दौरान नहीं हिलूँगा। मैं सजग और सतर्क रहूँगा।'

अवस्था 2: प्राण का जागरण

शरीर के अंदर के आकाश के प्रति सजग हो जाएँ।

उस आकाश में मेरुदण्ड के अतीन्द्रिय पथ और चक्रों का मानस-दर्शन करें।
पिंगला नाड़ी के प्रति सजगता को गहन बनायें।
सजगता को ऊपर-नीचे ले जाते हुए पिंगला नाड़ी के मार्ग का पता लगायें।
उसके बाद जिह्वा को खेचरी मुद्रा में पीछे मोड़ते हुए, पिंगला नाड़ी के प्रति सजगता को उज्जायी प्राणायाम के साथ समन्वित करें।
प्राण को जाग्रत करना और ऊपर उठाना आरंभ करें।
जब आप श्वास लेते हैं तब प्राण पिंगला मार्ग में मूलाधार से आज्ञा तक आरोहण करता है।
जब आप श्वास छोड़ते हैं तब केवल सजगता सुषुम्ना के द्वारा आज्ञा से सीधे नीचे की ओर मूलाधार तक अवरोहण करती है।
श्वास लेते हुए प्राण और सजगता को पिंगला नाड़ी के द्वारा मूलाधार से आज्ञा तक ले जाएँ।
वेग से प्रवाहित होती हुई प्रकाश की धारा के रूप में इसका मानस-दर्शन करें।
आज्ञा पर श्वास को पाँच सेकण्ड तक रोक कर मानसिक रूप से पाँच बार 'आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा' दुहराएँ।
उसके बाद श्वास छोड़ते हुए केवल सजगता को सुषुम्ना के द्वारा नीचे मूलाधार में ले जाएँ।
पिंगला नाड़ी में प्राण को जाग्रत करना जारी रखें।
49 चक्रों तक अभ्यास करें।
जब आपको अभ्यास में निपुणता प्राप्त हो जाती है तब सहज ही प्राण के वास्तविक जागरण की अनुभूति होगी और चक्रों की गिनती करना अनिवार्य नहीं होगा।

अवस्था 3: संपूर्ण शरीर का प्रसार और संकुचन

जब आप आज्ञा चक्र में पहुँच जाते हैं तब कुंभक लगाकर वहाँ कुछ सेकण्ड तक रुक जाएँ।
उसके बाद शरीर के प्रत्येक रोम छिद्र से रेचक करें और अनुभव करें कि आपका संपूर्ण शरीर मानसिक रूप से संकुचित हो रहा है।
हर बार पूरक करते समय प्रत्येक रोम छिद्र और कोशिका के द्वारा श्वास अंदर लें और पूरे शरीर में प्रसार का अनुभव करें।

प्रत्येक रेचक के साथ संकुचन और प्रत्येक पूरक के साथ प्रसार का इसी प्रकार अनुभव करते जाएँ।
पूरे शरीर में उज्जायी श्वास के अंदर आने का इस प्रकार अनुभव करें, मानो त्वचा का प्रत्येक छिद्र कोमलता के साथ वायु को अंदर खींच रहा है।
जब आप पूरक करते हैं तब शरीर का प्रत्येक रोम छिद्र और कोशिका श्वास अंदर लेती हैं, और पूरा शरीर गुब्बारे के समान फैल जाता है।
जब आप रेचक करते हैं तब आपका पूरा शरीर श्वास छोड़ता है और संकुचित हो जाता है।
शरीर एक क्रियाशील ईकाई के रूप में श्वसन कर रहा है, इसके प्रति सजग हो जाएँ।
पूरा शरीर एक सजीव प्राणी के समान फैलता और सिकुड़ता है।
अपनी सजगता को प्राण के वितरण के भण्डार, आज्ञा में वापस ले जाएँ।
अब संपूर्ण श्वसन प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु आज्ञा है।
पूरक एवं रेचक, प्रसार एवं संकुचन की प्रक्रिया का आरंभ और अंत आज्ञा में होता है।
पूरक आज्ञा से पूरे शरीर में प्राण को फैलाता है, जबकि रेचक प्राण को वापस आज्ञा में ले जाता है।
आज्ञा से पूरक करें और सिर से पैर की अँगुलियों तक पूरे शरीर में प्राण का वितरण करें।
पूरे शरीर में समान रूप से प्रसार का अनुभव करें।
रेचक के दौरान प्राण को आज्ञा में लौटा दें और मानसिक रूप से संकुचन का अनुभव करें; पूरक करें, वितरण करें और विस्तार करें; रेचक करें, वापस लौटाएँ और संकुचन करें।
अब यही आपकी सजगता का स्वरूप है।
जब आप प्राण को पूरे शरीर में प्रेषित करते हैं तब मानसिक रूप से अनुभव करें कि यह सभी दिशाओं में फैल रहा है।
यह प्राणिक और अतीन्द्रिय प्रसार है।
पूरक करने पर संपूर्ण शरीर सिर से पैर तक देदीप्यमान प्राण शक्ति से भर जाता है; गहनता से इसका अनुभव और मानस-दर्शन करें।
इसके साथ ही कल्पना करें कि आपके अतीन्द्रिय शरीर का सभी दिशाओं में व्यापक रूप से विस्तार हो रहा है।

जब आप रेचक करते हैं तब सजगता के साथ शरीर के सभी भागों से प्राण को वापस खींचकर आज्ञा चक्र की ओर प्रेषित कर दें।

जिस प्रकार समुद्र का जल भाटा की उलटी लहरों के कारण पीछे लौटने लगता है, उसी प्रकार प्राण रेचक के दौरान लौटता है जिसके कारण संकुचन होता है।

प्राणिक और अतीन्द्रिय संकुचन के दौरान शरीर की चेतना लुप्त हो जाती है।

शरीर का प्रसार और संकुचन एक समरूप ईकाई के रूप में होता है।

पूरक, वितरण, प्रसार; रेचक, वापसी, संकुचन।

पूरी तरह सतर्क रहें और इस अभ्यास को कुछ देर तक जारी रखें।

अवस्था 4: शरीर के विभिन्न भागों में प्राण का वितरण

अब हम इसी अभ्यास को शरीर के एक-एक भाग पर केन्द्रित करते हुए करेंगे।

पूरक करते हुए प्राण को दाएँ हाथ में प्रेषित करें, अनुभव करें कि ऊर्जा के स्तर पर और मानसिक स्तर पर उसमें फैलाव हो रहा है; अपनी सजगता का विस्तार केवल दाएँ हाथ में ही करें।

अनुभव करें कि कंधे से अँगुलियों के छोरों तक दाएँ हाथ की प्रत्येक कोशिका में प्राण प्रवेश कर रहा है।

दाएँ हाथ को प्रकाश से चमकता हुआ देखें।

रेचक करते हुए प्राण को आज्ञा में लौटा लें और दाएँ हाथ के संकुचन के प्रति सजग हो जाएँ।

कुछ देर तक प्राण के कारण दाएँ हाथ को दीप्तिमान होता हुआ देखते रहें।

पूरक, वितरण और प्रसार; रेचक, आज्ञा में वापसी और संकुचन।

हाथ के अंदर प्राण का वितरण करें और अनुभव करें कि प्राण ताप और प्रकाश की आभा के रूप में हाथ के बाहर भी फैल रहा है।

आज्ञा से दाएँ हाथ में प्राण के प्रवाह का और फिर आज्ञा में उसके लौट जाने का अनुभव करें।

अब अपने बाएँ हाथ में जाएँ, जब आप पूरक करते हैं तब कंधे से अँगुलियों के छोरों तक प्राण का वितरण करें और बाएँ हाथ में ऊर्जा के प्रसार के प्रति सजग हो जाएँ।

प्राणिक प्रकाश को पूरे बाएँ हाथ में अंदर-बाहर व्याप्त होते हुए देखें।

जब आप रेचक करते हैं तब प्राण को आज्ञा में लौटा दें और संकुचन का अनुभव करें।
हर बार प्राण की आपूर्ति और उसकी वापसी के साथ ऊर्जा के क्षेत्र का प्रसार और संकुचन होता है।
सजगता को दाएँ पैर में ले जाएँ।
शरीर के अंदर प्राण का वितरण आरंभ करें; आज्ञा से शरीर के दाएँ भाग में नितंब की ओर अवरोहण करते हुए, पैर की अँगुलियों तक पूरे दाएँ पैर में प्राण को प्रेषित करें।
पूरक, वितरण और प्रसार; रेचक, आज्ञा में वापसी और संकुचन।
शरीर के अन्य भागों को छोड़ केवल दाएँ पैर के प्रति सजग हो जाएँ।
प्रसार और संकुचन के इस अनुभव को गहन बनायें।
अंदर और बाहर से दाएँ पैर का प्रत्येक भाग प्राण से भर उठा है।
दाएँ पैर को प्रकाश से भरा हुआ देखें।
उसके बाद अपनी सजगता को बाएँ पैर पर केन्द्रित कर दें।
नितंब से पैर की अँगुलियों तक, पूरे बाएँ पैर में प्राण का वितरण करें और इसका प्रसार करें।
प्राण को वापस ले जाएँ और बाएँ पैर में संकुचन का अनुभव करें।
प्रसार एवं संकुचन के प्रति अपनी सजगता को बढ़ाते जाएँ।
बाएँ पैर के अंदर और बाहर प्रत्येक अणु में प्राण के व्याप्त होने का अनुभव करें।
अब नाभि से मूलाधार तक उदर के निचले भाग पर सजगता को केन्द्रित करें।
वहाँ प्राण की आपूर्ति करें और प्रसार करें; प्राण को वापस ले जाएँ और संकुचन करें।
याद रखें कि यह संपूर्ण प्रक्रिया अतीन्द्रिय एवं प्राणिक है।
सहज उज्जायी प्राणायाम के द्वारा श्वसन हो रहा है।
उदर के निचले भाग में स्थित सभी अंगों–बड़ी आँत, छोटी आँत, मूत्राशय, मूत्र नलिकाओं और उत्सर्जन अंगों में प्राणिक ऊर्जा की आपूर्ति करें।
अनुभव करें कि उदर का पूरा निचला भाग प्राणिक प्रकाश से स्पंदित हो रहा है और उसका प्रसार हो रहा है; फिर अपनी सजगता को आज्ञा चक्र में वापस ले जाते हुए प्राण को लौटा लें और संकुचन होने दें।

नाभि और पसलियों के बीच उदर के ऊपरी भाग का मानस-दर्शन करें, और उसे प्राण से आपूरित होता हुआ देखें।

पूरक, प्राण की आपूर्ति और प्रसार; रेचक, प्राण की वापसी और संकुचन। इस सजगता को बढ़ाते जायें।

अनुभव करें कि प्रत्येक कोशिका, ऊतक, स्नायु और अंग प्राण के द्वारा ऊर्जान्वित हो रहे हैं।

देखें कि आमाशय, प्लीहा, अग्न्याशय, यकृत, वृक्क–सभी प्राण की स्फूर्त शक्ति से दीप्तिमान हो उठे हैं।

रेचक के साथ संकुचन करें; प्राण को आज्ञा में वापस ले जायें।

अब मध्यपट से कण्ठ तक वक्ष प्रदेश पर ध्यान केंद्रित करें।

पूरक, प्राण की आपूर्ति और प्रसार; रेचक, प्राण की वापसी और संकुचन।

हृदय में प्राण की प्रत्यक्ष आपूर्ति नहीं करें।

मानसिक रूप से देखें कि फेफड़े प्राण से देदीप्यमान हो रहे हैं और उनमें प्रसार हो रहा है।

हृदय को छोड़ कर, सम्पूर्ण वक्ष प्रदेश का प्राण के द्वारा प्रसार करें।

देखें कि पूरा वक्ष अंदर और बाहर से दीप्तिमान और उज्जवल हो उठा है।

रेचक करें और प्राण को आज्ञा में लौटा दें, किन्तु वक्ष को भौतिक रूप से संकुचित नहीं करें।

अंत में अपनी सजगता को सिर में ले जाएँ।

जब आप पूरक करते हैं तब अनुभव करें कि प्राण आज्ञा चक्र से निकल कर पूरे मस्तिष्क और सिर में फैल रहा है और पूरे सिर का प्रसार हो रहा है।

रेचक के साथ अनुभव करें कि प्राण पुनः आज्ञा चक्र में वापस जा रहा है।

पूरक करें और सिर के अन्दर मस्तिष्क के प्रत्येक भाग एवं ज्ञानेन्द्रियों– आँख, कान, नाक और जिह्वा, चेहरे और चेहरे की मांसपेशियों, सिर के अंदर की प्रत्येक कोशिका और ऊतक में प्राण का वितरण करें।

पूरक करते समय प्रसार का और रेचक करते समय संकुचन का अनुभव करें।

अवस्था 5: प्रकाशवान शरीर

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरे शरीर में प्राण का वितरण आरंभ करें और प्राणमय कोश में विस्तार का अनुभव करें।

मानसिक रूप से देखें कि आतिशबाजी से छूटने वाली चिंगारियों के समान प्रकाश रेखाओं के पूरे शरीर में व्याप्त हो रही हैं।

रेचक करते हुए अनुभव करें श्वेत प्रकाश पुन: आज्ञा में लौट रहा है।

पूरे शरीर में व्याप्त प्राण शक्ति के प्रति पूर्ण सजगता बनाए रखें; शरीर का प्रत्येक भाग उज्जवल प्रकाश की धारा से ओत-प्रोत हो रहा है।

अवस्था 6: मूलाधार में प्राण को लौटाना

सजगता को आज्ञा चक्र में वापस ले आएँ।

सभी प्राणिक ऊर्जाओं को लौटा कर आज्ञा में ले आएँ और पुन: उज्जायी प्राणायाम के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरक करें और सजगता को आज्ञा पर केन्द्रित करते हुए श्वास को कुछ क्षणों तक रोक कर रखें।

रेचक करें और सुषुम्ना के द्वारा प्राण को नीचे मूलाधार में ले जाएँ।

प्राण को अत्यंत सावधानीपूर्वक और पूर्ण सजगता के साथ नीचे मूलाधार में ले जाएँ।

जब आप मूलाधार में पहुँच जाते हैं तब प्राण को वहाँ संचित कर दें, उसके बाद रेचक करें और सजगता को सुषुम्ना के द्वारा सीधे आज्ञा में ले जाएँ।

श्वास को कुछ क्षणों तक आज्ञा पर रोक कर रखें, फिर रेचक करें और वहाँ से कुछ और प्राणों को सुषुम्ना के द्वारा मूलाधार में ले जाएँ।

इस अभ्यास को तब तक जारी रखें जब तक आप यह सुनिश्चित न कर लें कि सभी प्राण मूलाधार में लौटाए जा चुके हैं।

अवस्था 7: अभ्यास की समाप्ति

सजगता को श्वास पर ले जाएँ।

खेचरी मुद्रा और उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास समाप्त कर दें; पुन: सामान्य श्वसन आरम्भ करें।

पूरक और रेचक के लयबद्ध प्रवाह का अनुभव करें।

शरीर के भीतर सहज रूप से चलने वाली श्वसन प्रक्रिया के प्रति सजग बन जायें।

पूरक करते हुए अनुभव करें कि श्वास नासिकाओं से प्रवेश करती है और फेफड़ों को हवा से भर देती है।

रेचक के समय अनुभव करें कि फेफड़ों से हवा निकल जाती है और श्वास नासिकाओं से बाहर निकल रही है।
जब आप श्वास का अवलोकन कर रहे हों तब सजगता को धीरे-धीरे बहिर्मुखी हो जाने दें।
अपने चयनित आसन में पूरे शरीर का अनुभव करें।
शरीर के भार और उसकी स्थूलता के प्रति सजग हो जाएँ।
कमरे में अपनी स्थिति को याद करें और यह भी याद करें कि आप प्राण निद्रा का अभ्यास कर रहे हैं।
यह जाँच कर लें कि आपकी इन्द्रियाँ– नाक, जिह्वा, कान और त्वचा– सामान्य रूप से कार्य कर रही हैं।
यदि आवश्यक हो तो प्राण को मूलाधार में लौटाने की प्रक्रिया को दुहराएँ। इस प्रक्रिया को अनेक बार दुहराएँ और एक बार पुन: अपनी इन्द्रियों को जाँच लें।
जब इन्द्रियाँ सामान्य रूप से कार्य करने लगें, तब धीरे-धीरे शरीर को हिलाएँ और ताने। जब आप तैयार हों तब धीरे-से अपनी आँखें खोल दें।
अब अभ्यास पूरा हुआ।

हरि ॐ तत्सत्

क्षतिग्रस्त भागों या तंत्रों का उपचार

अभ्यास 4: उपचार के लिए प्राण का जागरण

अभ्यास 1: तैयारी

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ।
पाँच मिनट तक काया स्थैर्यम् का अभ्यास करें।
उसके बाद, अपने शरीर के अंदर जाएँ और संपूर्ण अंतराकाश के प्रति एकीकृत सजगता का इस प्रकार विकास करें मानो आप अंदर से बिल्कुल खाली हैं; अंदर खाली स्थान के अतिरिक्त कुछ भी नहीं, आपकी त्वचा आपके भौतिक शरीर का एकमात्र अंग है, अन्यथा आप रबर के एक खोखले गुब्बारे के समान हैं।
अंतराकाश की अनुभूति को तीव्र बनाते जाएँ।

अभ्यास 2: प्राण एवं अपान का मानस-दर्शन

अंतराकाश के अंदर प्राण के प्रति सजग हो जाएँ; इस ऊर्जा की गति ऊर्ध्वगामी होती है और यह कण्ठ और मध्यपट के बीच के क्षेत्र में स्थित होती है।

इस प्राणिक क्षेत्र पर अपनी सजगता को कुछ देर के लिए केन्द्रित कर दें।

अब अपान के प्रति सजग हो जाएँ।

अपान का अधोगामी प्रवाह नाभि से मूलाधार के बीच होता है।

अपान के प्रति अपनी सजगता को बनाए रखें।

अब प्राण एवं अपान, दोनों के प्रति सजग बन जायें।

ध्यान दें कि प्राण और अपान दो विपरीत दिशाओं में प्रवाहित होते हैं।

भौतिक रूप से प्राण और अपान के विपरीत दिशाओं में सहज प्रवाह के प्रति सजग हो जाएँ।

कुछ देर इस प्रकार प्रवाहित होते प्राण की सजगता और उसके अनुभव को विकसित करते जाएँ।

प्राण एवं अपान की लय और गति के साथ एकरूप होने के लिए कुछ समय लें।

अवस्था 3: मणिपुर में प्राण एवं अपान का विलय

अब इस प्रक्रिया में श्वास को भी जोड़ लें।

पूरक के साथ अपान के आरोहण और प्राण के अवरोहण का मानस-दर्शन करें। रेचक करने पर प्रवाह विपरीत हो जाता है।

जब आप रेचक करते हैं तब मणिपुर में प्राण और अपान के मिलन का मानस-दर्शन करें।

कुछ देर इसका अनुभव करें– पूरक करने पर प्राण और अपान एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं तथा रेचक करने पर मणिपुर में उन दोनों का विलय हो जाता है।

इसी प्रकार 27 श्वास तक गिनती करें।

अवस्था 4: पिंगला नाड़ी

प्राण और अपान का मानस-दर्शन बन्द कर दें तथा पिंगला नाड़ी का मानस-दर्शन आरम्भ करें।

पिंगला के घुमावदार मार्ग पर मणियों के समान चमकते हुए चक्रों को देखें। इस सजगता को गहन बनायें और श्वास तथा सजगता को पिंगला नाड़ी के साथ ऊपर-नीचे प्रवाहित करना आरंभ करें।

पूरक करने पर श्वास और सजगता आरोहण करते हैं, तथा रेचक करने पर श्वास और सजगता अवरोहण करते हैं।

नाड़ी के घुमावदार मार्ग पर अपनी श्वास और सजगता को कुछ देर ऊपर-नीचे ले जाना जारी रखें।

अवस्था 5: प्राण का उत्थान

अब प्राण को मूलाधार से आज्ञा तक ले जाने के लिए तैयार हो जाएँ।

पूरक करें, पिंगला के साथ सर्पिल आकार में ऊपर जाती हुई प्रकाश की पतली रेखाओं का मानस-दर्शन करें और उनका अनुभव करें।

साथ ही श्वास और आरोहण करती हुई सजगता को उनके साथ समन्वित करें।

पूरक के अंत में कुछ देर रुक जाएँ, और आज्ञा पर संचित होने वाले प्राण के प्रकाश का मानस-दर्शन करें।

रेचक करते हुए सुषुम्ना के द्वारा केवल सजगता को मूलाधार में लौटाना है।

जाग्रत प्राण को इसी प्रकार ऊपर उठा कर आज्ञा में संचित करते जाएँ।

जब पर्याप्त ऊर्जा संचित हो जाए तब आज्ञा पर सजगता बनाए रखें।

अवस्था 6: प्राणमय कोश के अनुभव को गहन बनाना

आज्ञा को प्रकाश रेखाओं के रूप में दीप्तिमान प्राण के भण्डार के रूप में देखें।

प्रकाश की ये रेखायें असंख्य उल्काओं या पुच्छल तारे के समान गतिमान हैं।

मानसिक रूप से देखें कि जब आप आज्ञा पर गहनता से ध्यान केन्द्रित करते हैं तब वहाँ से प्रकाश या प्रकाश कणों की रेखाएँ आकाश में चमकने वाली बिजली की सी गति से प्रस्फुटित होती हैं।

इस सजगता को बढ़ाएँ।

पूरक और प्राण के वितरण के समय अनुभव करें कि श्वेत प्रकाश की रेखायें आज्ञा से निकल कर पूरे सिर में फैल रही हैं।

इन्हीं प्रकाश रेखाओं को रेचक और प्राण की वापसी के समय आज्ञा में वापस जाते हुए देखें।

यह प्राण का प्रत्यक्ष अनुभव है।

सम्पूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

जब आप पूरक करते हैं तब आज्ञा से श्वेत प्रकाश के विकिरित होने और पूरे शरीर में व्याप्त होने का, उसके बाद रेचक करते हुए आज्ञा में प्राण की वापसी का मानस-दर्शन करें।

जब आप पूरक करते हैं तब आज्ञा से तरल प्राण शक्ति निकल कर प्रत्येक कोशिका, ऊतक और अंग में व्याप्त होती और पूरे शरीर को अंदर तथा बाहर से प्रकाशित करती है, इस प्रक्रिया के प्रति पूर्ण सजगता का विकास करें।

यह बात समझ लें कि यह प्रकाश-शरीर आपके भौतिक शरीर में व्याप्त होता है, परन्तु इससे बिल्कुल भिन्न है।

यह सूक्ष्म शक्तिशाली आवरण या ऊर्जा का कोश प्राणमय कोश कहलाता है। यह आपके भौतिक शरीर को जीवन प्रदान करता है, किन्तु इसका विस्तार उससे परे भी होता है और इसका अनुभव दूसरे आयाम में होता है।

अनुभव करें कि प्रत्येक रेचक के साथ श्वेत प्रकाश आज्ञा में लौटता है, और उसके बाद प्रत्येक पूरक के साथ बाहर की ओर बार-बार उसका प्रसार होता है।

अवस्था 7: प्राण का वितरण

शरीर के दुर्बल, पीड़ायुक्त या क्षतिग्रस्त भाग को प्राण से परिपूर्ण कर दें। यह अनुभूति गरम पानी में उस भाग को डुबाने के समान है, जिसमें ऐसा प्रतीत होता है मानो प्रत्येक अणु को गर्मी मिल रही हो।

प्राण को बार-बार उस भाग की प्रत्येक कोशिका और ऊतक में ले जाएँ।

उस भाग को आज्ञा से सीधे निकलने वाली प्रकाश ऊर्जा से भर दें।

प्रसार एवं संकुचन की विधि का प्रयोग करते हुए अभ्यास को गहन बनाते जायें।

प्राण को वापस लें और 27 बार अथवा तब तक उसका वितरण करें जब तक आपको इस सत्र में उपचार के लिए प्राण की मात्रा पर्याप्त न लगने लगे।

यदि रोग व्यापक रूप से फैला हुआ हो, तो जिस भाग में रोग के लक्षण हों उसे पहले 27 चक्र के समय, और उसके बाद 27 बार पूरे शरीर को प्राण से भर सकते हैं।

अभ्यास को प्रभावकारी बनाने के लिए उपचार किए जाने वाले भाग पर तीव्रता के साथ ध्यान केन्द्रित करें, उस भाग या उन भागों का अधिक-से-अधिक स्पष्ट रूप से मानस-दर्शन करें।

अवस्था 8: प्राण को मूलाधार में लौटाना

अभ्यास को समाप्त करने के लिए अपनी सजगता को आज्ञा पर ले आएँ और सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे सारी प्राण ऊर्जा को उस चक्र में लौटा दें। उज्जायी श्वसन के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरक करें और आज्ञा पर ध्यान केन्द्रित करते हुए श्वास को कुछ सेकण्ड तक वहाँ पर रोक लें।

रेचक करें और श्वास तथा सजगता को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा मूलाधार में ले जाएँ और प्राण को मूलाधार में लौटाएँ।

पूरक करें और श्वास एवं सजगता को पिंगला के द्वारा ऊपर ले जाएँ, लेकिन ध्यान रहे कि केवल सजगता ऊपर जाएगी, उसके साथ थोड़ा भी प्राण नहीं जाना चाहिए।

रेचक करें और श्वास, सजगता एवं प्राण को सुषुम्ना के द्वारा आज्ञा से मूलाधार में ले जाएँ।

यह क्रम तब तक जारी रखें जब तक समस्त प्राण ऊर्जा मूलाधार में लौट नहीं जाती।

अवस्था 9: अभ्यास की समाप्ति

इस अवस्था में शरीर में बहुत अधिक हलकेपन की अनुभूति होनी चाहिए, चेतना अक्षुण्ण रहनी चाहिए और समझ होनी चाहिए।

खेचरी मुद्रा खोल दें एवं उज्जायी प्राणायाम को समाप्त कर दें; पुनः सामान्य श्वसन आरम्भ करें।

अपनी सजगता को धीरे-धीरे बहिर्मुख बनाएँ। अपने भौतिक शरीर, इसके आकार, स्वरूप और कमरे में इसकी स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।

अपनी इन्द्रियों को जाँच लें; शरीर के नीचे की भूमि, त्वचा के ऊपर वस्त्र, चेहरे का स्पर्श करने वाली वायु की अनुभूति।

गंध और स्वाद के प्रति सजग हो जाएँ।

ध्वनियाँ, कमरे के अंदर की ध्वनियाँ, बाहर की ध्वनियाँ, सबके प्रति सजग हो जाएँ।

यह सुनिश्चित कर लें कि आप पूर्ण रूप से सचेत हैं और आप अपने बाहरी वातावरण के प्रति पूरी तरह सजग हैं।

शरीर को ताने और सिर को अगल-बगल घुमाएँ।

अभ्यास अब पूरा हुआ।

यदि आप ज़रा भी असंतुलित अनुभव कर रहे हैं तो सजगता को पुनः बतलायी गयी विधि से बहिर्मुख करने से पूर्व, प्राण को आज्ञा से मूलाधार में ले जाने वाले अभ्यास को कुछ और चक्रों तक दुहराएँ।

जब आप तैयार हों तब धीरे से उठ कर बैठ जाएँ और आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 5: उपचार के लिए प्राण का जागरण (रूपांतरण)

अवस्था 1: तैयारी

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ या शवासन में लेट जाएँ।

लगभग पाँच मिनट तक काया स्थैर्यम् का अभ्यास करें।

उज्जायी प्राणायाम आरंभ करें और खेचरी मुद्रा लगा लें तथा स्थिरता को दृढ़ करते जाएँ। शरीर और मन की पूर्ण शांति और स्थिरता का अनुभव करें।

सजगता को आंतरिक आकाश में, वह आकाश जो भौतिक शरीर की संरचना के अंदर है, ले जाएँ।

आंतरिक आकाश की अनुभूति को तीव्र बनाएँ।

अवस्था 2: पिंगला नाड़ी

अब, रुपहली-सफेद सुषुम्ना नाड़ी और उस पर चमक रही चक्र मणियों का मानस-दर्शन करें।

मूलाधार से आज्ञा चक्र तक सभी चक्रों को काटती हुई आगे बढ़ने वाली दीप्तिमान पिंगला नाड़ी को मन की आँखों के सामने स्पष्ट रूप से देखें।

अपनी सजगता को पिंगला नाड़ी में ऊपर-नीचे ले जाएँ।

पिंगला नाड़ी में सर्पिलाकार होकर चलने वाली प्रकाश रेखाओं को मानसिक रूप से ऊपर जाते हुए देखें और साथ-ही आरोहण-अवरोहण कर रही सजगता के साथ श्वास को समन्वित करें।

अपनी श्वास और सजगता को नाड़ी के घुमावदार मार्ग पर ऊपर-नीचे संचालित करना जारी रखें।

अवस्था 3: पिंगला के मार्ग से प्राण का जागरण और उत्थान

अब पिंगला नाड़ी की सजगता छोड़ दें और इड़ा नाड़ी का मानस-दर्शन करें, जो पिंगला नाड़ी की विपरीत दिशा में घूम कर जा रही है।

उसके बाद दोनों नाड़ियों को एक साथ देखें।

पूरक करते हुए प्राण की गति की चेतना के साथ अपनी सजगता एवं प्राण को पिंगला नाड़ी के द्वारा ऊपर आज्ञा की ओर ले जायें।

सजगता को कुछ क्षणों के लिए आज्ञा पर रोकें और वहाँ पर प्राण की चमक को देखें।

रेचक करते हुए केवल सजगता को इड़ा के द्वारा नीचे मूलाधार में ले आएँ।

कुछ देर तक यूँ ही अभ्यास करते रहें, आज्ञा पर प्राण की मात्रा बढ़ने के साथ उसकी चमक में भी वृद्धि होते हुए देखें।

इस प्रकार अधिक-से-अधिक 27 चक्रों तक अभ्यास जारी रखें।

अवस्था 4: सुषुम्ना के द्वारा प्राण का जागरण एवं उत्थान

अब अपने ध्यान को सुषुम्ना पर केन्द्रित करें।

सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा मूलाधार से आज्ञा तक श्वेत प्रकाश के रूप में प्राण ऊर्जा के आरोहण का अनुभव और मानस-दर्शन करें।

श्वास के साथ इस प्राण प्रवाह को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा मूलाधार से आज्ञा तक ले जायें।

अबाध एकाग्रता के साथ श्वास को कुछ क्षणों तक आज्ञा पर रोक कर रखें।

प्राण को आज्ञा पर संचित कर केवल श्वास को सुषुम्ना के द्वारा मूलाधार में वापस ले जायें।

इसी प्रकार अधिकतम 27 चक्रों तक अभ्यास जारी रखें।

अवस्था 5: प्राण का वितरण

कुछ क्षणों तक सजगता को आज्ञा पर केन्द्रित करें।

प्राण के इस भण्डार को एक दीप्तिमान प्रकाश के रूप में चमकते हुए देखें।

मानसिक रूप से देखें कि जब आप पूरक करते हैं तब प्रकाश रेखाएँ आज्ञा से निकल कर पूरे शरीर में व्याप्त होती हैं, और उसके बाद जब आप रेचक करते हैं तब वे आज्ञा में लौट जाती हैं।

जब आप पूरक करते हैं, प्राण शरीर की प्रत्येक कोशिका में व्याप्त हो जाता है।

प्रत्येक रेचक के साथ श्वेत प्रकाश के आज्ञा में वापस आने का और उसके बाद प्रत्येक पूरक के साथ बार-बार उसके प्रसार का अनुभव करें।

जब वितरण की क्रिया लयबद्ध हो जाए तब प्राण को शरीर के विशेष क्षेत्र में भेजना आरंभ करें, जहाँ उपचार की आवश्यकता हो।

पूरक के साथ शरीर के उस भाग को उपचारात्मक ऊर्जा से भर दें, ऊष्मा और प्रकाश से उसे ओतप्रोत कर दें।

रेचक के साथ ऊर्जा को आज्ञा में वापस ले जायें।

यदि रोग शरीर के किसी विशेष तंत्र, जैसे, स्नायु-तंत्र या रक्त परिसंचरण तंत्र में फैला हुआ हो तो प्राण को पहले प्रभावित अंगों में और उसके बाद पूरे शरीर में संचालित करें।

ऐसा करना तब तक जारी रखें जब तक आपको यह प्रतीत न हो कि इस सत्र में प्रभावित क्षेत्र के उपचार के लिए प्राण की पर्याप्त मात्रा दी जा चुकी है, या 27 चक्रों तक अभ्यास जारी रखें।

अवस्था 6: मूलाधार में प्राण को लौटाना

अभ्यास को समाप्त करने के लिए सजगता को आज्ञा पर ले आएँ और धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक सारी प्राण ऊर्जा को इस चक्र में लौटा दें।

निरंतर चल रहे उज्जायी प्राणायाम के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरक करें और कुछ क्षणों तक एकाग्रता के साथ आज्ञा पर अपनी श्वास को रोकें।

रेचक करें और सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा प्राण को मूलाधार में लौटाते हुए सजगता को नीचे मूलाधार में ले जाएँ।

पूरक करें और सजगता को पिंगला नाड़ी के द्वारा ऊपर ले जाएँ, लेकिन केवल श्वास एवं सजगता को ले जाएँ, उसके साथ प्राण के अंशमात्र को भी न ले जाएँ।

रेचक करें और श्वास, सजगता एवं प्राण को सुषुम्ना के द्वारा आज्ञा से मूलाधार में ले जाएँ।

यह क्रम तब तक जारी रखें जब तक समस्त प्राण ऊर्जा मूलाधार में न लौट जाएँ।

अवस्था 7: अभ्यास की समाप्ति

जब सारी प्राण ऊर्जा मूलाधार में लौट गयी हो तब खेचरी एवं उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास बंद कर दें; शरीर में गतिमान सहज श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।

श्वास और प्रश्वास, दोनों के प्रति सजग रहें।

श्वास के साथ गतिमान अंगों–उदर, वक्ष और पीठ के विभिन्न भागों पर ध्यान दें।

अपने पूरे शरीर को अपने चयनित आसन में स्थित देखें।

भूमि का स्पर्श कर रहे अपने शरीर के विभिन्न भागों के प्रति सजग हो जाएँ।

इस स्पर्श से जो संवेदना उत्पन्न हो रही है उसका अनुभव करें।

चेहरे का स्पर्श करने वाली वायु और त्वचा पर वस्त्र के स्पर्श की अनुभूति के प्रति सजग हो जायें।

शरीर के चारों ओर से आने वाली किसी गंध, मुँह में किसी प्रकार के स्वाद के प्रति सजग हो जायें।

शरीर के चारों ओर के स्थान, कमरे के अंदर के स्थान के प्रति सजग हो जाएँ।

कमरे को विस्तार से देखें और कमरे में अपनी स्थिति को अपने मन की आँखों के सामने लाएँ।

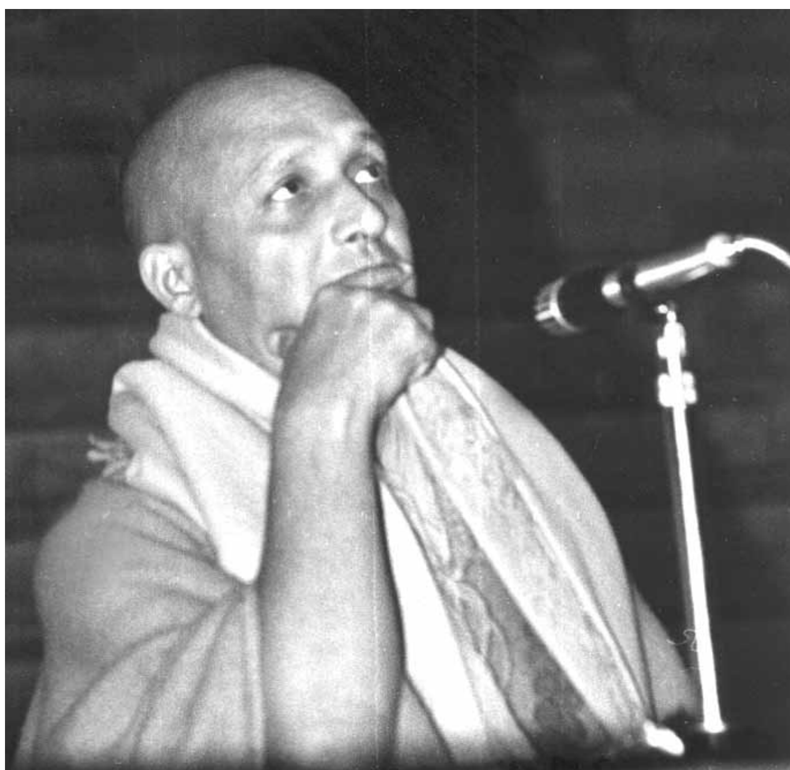
बाह्य वातावरण में निकट और दूर से आने वाली ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।

सजगता को पूर्णत: बहिर्मुखी हो जाने दें।

दिन के समय को याद करें और इसके प्रति अवगत हो जाएँ कि अब अभ्यास पूरा हो चुका है।

यह जाँच लें कि सभी इन्द्रियाँ सामान्य रूप से कार्य कर रही हैं।
यदि ऐसा नहीं है तो एक बार पुन: आज्ञा के प्रति सजग हो जाएँ और प्राण को मूलाधार में वापस ले जाने के अभ्यास को तीन बार दुहरायें और तत्पश्चात् इन्द्रियों को उसी प्रकार जाँच लें।
जब आप इस बात से संतुष्ट हो गए हों कि सजगता पूर्णत: बहिर्मुख हो गयी है तब हाथ-पैर की अँगुलियों को हिलाना आरंभ करें, और उसके बाद पूरे शरीर को धीरे-धीरे हिलाएँ।
यदि आप शवासन में हैं तो आँखों को बंद ही रखें और उठ कर बैठ जाएँ।
दोनों हथेलियों को आपस में रगड़ कर आँखों पर रखें और आँखों को धीरे से खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्



16

दूसरों का उपचार

अवस्था 1: आत्म-शुद्धिकरण
अवस्था 2: मानसिक छवि का उपयोग करते हुए उपचार
अवस्था 3: चित्र का उपयोग करते हुए उपचार
अवस्था 4: एक वस्तु का उपयोग करते हुए उपचार
अवस्था 5: स्पर्श के द्वारा सम्पूर्ण शरीर का उपचार
अवस्था 6: स्पर्श के द्वारा उपचार– विशेष रोगों के लिए

इस अध्याय में दूसरों के उपचार की विविध विधियाँ प्रस्तुत की गयी हैं और दूर-उपचार को भी सम्मिलित किया गया है। उपचार के अभ्यासों की मौलिक अवस्थाएँ एक जैसी रहती हैं–

1. शरीर को स्थिर करना
2. एक सुरक्षात्मक यंत्र का मानस-दर्शन
3. प्राण का उत्थान और आज्ञा में उसका संचय
4. उपचारात्मक प्रकाश के रूप में आज्ञा से प्राण का संचार करना और उपचार को समाप्त करना
5. प्राण को वापस लेना और पहले आज्ञा में तथा अंत में मूलाधार में लौटाना

अभ्यास 1: आत्म-शुद्धिकरण

अवस्था 1: तैयारी

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ, सम्भव हो तो सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठें।

लगभग पाँच मिनट तक काया स्थैर्यम् का अभ्यास करें।
उज्जायी प्राणायाम आरंभ करें और खेचरी मुद्रा लगा लें।

अवस्था 2: प्राण का जागरण और उत्थान

अब अंतराकाश के प्रति सजग हो जाएँ।
मेरुदण्ड के अतीन्द्रिय पथ, सुषुम्ना का और उसमें चक्रों का मानस-दर्शन करें।
पिंगला नाड़ी के प्रति गहन सजगता का विकास करें।
उज्जायी श्वसन को पिंगला नाड़ी के प्रति सजगता के साथ समन्वित करें।
जब आप श्वास लेते हैं, प्राण पिंगला के द्वारा मूलाधार से आरोहण कर आज्ञा तक जाते हैं, और जब आप श्वास छोड़ते हैं, सुषुम्ना के द्वारा केवल श्वास और सजगता आज्ञा से अवरोहण कर मूलाधार तक जाती है।
पूरक करते समय पिंगला के द्वारा प्राण की ऊर्ध्व गति का अनुभव करें; दीप्त प्रकाश की तीव्र धारा के रूप में इसका मानस-दर्शन करें।
आज्ञा पर श्वास को पाँच सेकण्ड तक रोक कर मानसिक रूप से दुहराएँ, 'आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा'। उसके बाद रेचक करते हुए श्वास और सजगता को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा मूलाधार में ले आएँ।
पूरक करें और प्राण को श्वास एवं सजगता के साथ पिंगला नाड़ी के द्वारा मूलाधार से आज्ञा में ले जाएँ।
ऊर्जा की गति का तीव्र अनुभव करते हुए पूरी एकाग्रता के साथ पिंगला नाड़ी के द्वारा प्राण का जागरण जारी रखें। यह अभ्यास तब तक करते जाएँ जब तक प्राण के वास्तविक जागरण का अनुभव न हो जाए।

अवस्था 3: प्राणमय कोश की सजगता को गहरा करते जाना

अब आज्ञा को असंख्य प्रकाश रेखाओं के भण्डार के रूप में देखें।
ये प्रकाश रेखाएँ आतिशबाजी या फुलझड़ी से निकलने वाली प्रकाश किरणों के समान गतिमान हैं।
जब आज्ञा पर अपने ध्यान को पूरी तरह केन्द्रित करते हैं तब उल्का या पुच्छल तारों के रूप में असंख्य प्रकाश रेखाओं का मानस-दर्शन करें।
इस सजगता को बढ़ाते जायें। संपूर्ण शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

मानसिक रूप से देखें कि जब आप पूरक करते हैं तब श्वेत प्रकाश आज्ञा से निकल कर पूरे शरीर में व्याप्त हो रहा है, उसके बाद रेचक करते हुए प्राणों को वापस आज्ञा में ले जाएँ।
प्राणों के वितरण के समय अनुभव करें कि प्रकाश कण आकाश में चमकने वाली बिजली के वेग से आज्ञा से निकलते हैं।
वापसी के समय प्रकाश की इस धारा को आज्ञा में लौटते हुए देखें।
यह प्राण का प्रत्यक्ष अनुभव है।
जब आप पूरक करते हैं तब प्रत्येक कोशिका, ऊतक और अंग में व्याप्त होने वाली प्राणिक ऊर्जा की तरल गति के प्रति पूर्ण सजगता का विकास करें।
यह प्राणिक ऊर्जा आज्ञा से निकल कर शरीर को अंदर से प्रकाशित करती हुई, त्वचा से बाहर कुछ दूर तक प्रभामण्डल के रूप में दिखायी देती है।
इस बात के प्रति सजग रहें कि यह प्रकाशमय शरीर आपके भौतिक शरीर में व्याप्त हो जाता है, किन्तु यह उससे बिल्कुल भिन्न है।
यह सूक्ष्म, शक्तिशाली ऊर्जा कोश या शरीर, प्राणमय कोश है।
यह आपके भौतिक शरीर के लिए जीवनी शक्ति है, फिर भी यह उससे परे है और एक भिन्न आयाम में इसका अनुभव किया जाता है।
पूरक करने पर पूरे शरीर में प्राण का वितरण होता है और यह शरीर की कोशिकाओं को शुद्ध करता है।
प्रत्येक रेचक के साथ श्वेत प्रकाश के आज्ञा में वापस आने, उसके बाद प्रत्येक पूरक के साथ बार-बार विस्फोट के रूप में उसके शरीर से बाहर निकलने का अनुभव करें।
अनुभव करें कि पूरा शरीर प्राण से आपूरित हो रहा है, और यदि किसी प्रकार का रोग है तो वह प्राण के श्वेत प्रकाश में विलीन होता जा रहा है।

अवस्था 4: प्राण को मूलाधार में लौटाना

जब आप अपने को पूर्ण रूप से स्वच्छ अनुभव करें तब सबसे पहले प्राण को आज्ञा में लौटाते हुए अभ्यास को समाप्त करें।
एक बार पुनः सजगता को आज्ञा में ले आएँ, उसके बाद धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक प्राणिक ऊर्जा को मूलाधार चक्र में लौटाना आरंभ करें।
अपने उज्जायी श्वसन के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरक करें और कुछ क्षणों तक अपनी श्वास को एकाग्रता के साथ आज्ञा पर रोक कर रखें।

रेचक करें और सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा श्वास, सजगता एवं प्राण को मूलाधार में ले जाएँ, प्राण को उसके मूल स्रोत में लौटा दें।

पूरक करें और श्वास एवं सजगता को पिंगला के द्वारा ऊपर ले जाएँ, परन्तु प्राण की थोड़ी मात्रा भी साथ नहीं ले जानी है।

रेचक करें और श्वास, सजगता एवं शेष प्राण को सुषुम्ना के द्वारा आज्ञा से मूलाधार में ले जाएँ।

यह क्रम तब तक जारी रखें जब तक समस्त प्राण मूलाधार में लौट न जाएँ।

अवस्था 5: अभ्यास की समाप्ति

अभ्यास समाप्त करने के लिए खेचरी मुद्रा खोल दें एवं उज्जायी प्राणायाम बन्द कर दें।

सजगता को सहज श्वास पर ले जाएँ।

नासिकाओं में श्वास पर ध्यान केन्द्रित करें और वहाँ पर श्वास के आवागमन से होने वाली अनुभूति के प्रति सजग हो जाएँ।

श्वास के अंदर आते समय वहाँ पर ठण्ढक और श्वास के बाहर जाते समय गर्माहट का अनुभव करें।

श्वास की लय और उसकी सम्वेदना के साथ एकाकार हो जाएँ।

अब श्वास के प्रवाह के प्रति और उससे उदर एवं वक्ष में उत्पन्न होने वाली गति के प्रति सजग हो जाएँ।

एक बार पुन: चयनित आसन में अपने पूरे शरीर, कमरे में उसकी स्थिति और कमरे को विस्तार से देखते हुए स्वयं को उनसे जोड़ें।

इन्द्रियों–त्वचा, जिह्वा, नाक और कान के प्रति सजग हो जाएँ।

वातावरण की सभी ध्वनियों के प्रति सजग हो जाएँ।

यह सुनिश्चित कर लें कि आप पूर्ण रूप से सचेत हैं।

धीरे-धीरे अपनी सजगता को बहिर्मुख करें।

जब आपको लगे कि आप पूरी तरह जमीन पर अपने शरीर में वापस आ गये हैं तब धीरे से अपनी आँखें खोल दें।

यदि आपको जरा भी असंतुलन का अनुभव हो तो अपनी आँखें बंद कर लें और प्राण को आज्ञा से मूलाधार में लौटाने के अभ्यास को कुछ और

देर तक दुहराते रहें, उसके बाद बतलायी गयी विधि से अपनी सजगता को बहिर्मुख कर लें।

जब आप तैयार हों तब धीरे-धीरे शरीर को हिलाना आरंभ करें और आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास नोट : इस आत्मशुद्धि को किसी भी उपचारात्मक अभ्यास के अंत में सम्मिलित किया जा सकता है।

अभ्यास 2: मानसिक छवि का उपयोग करते हुए उपचार

अवस्था 1: तैयारी

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ, सम्भव हो तो सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठें।

सिर और मेरुदण्ड एक सीध में हों, दोनों हाथ घुटनों पर चिन् या ज्ञान मुद्रा में हों।

खेचरी मुद्रा लगा लें और उज्जायी प्राणायाम आरंभ करें।

शरीर को पूर्णत: तनावमुक्त और स्थिर करने के लिए 5-10 मिनट तक कायास्थैर्यम् का अभ्यास करें।

अपने चयनित प्रतीक– त्रिकोण, क्रॉस या वृत्त का मानस-दर्शन करें।

यह सुरक्षात्मक एवं आधार प्रदान करने वाला यंत्र आपके शरीर को घेरे रहता है।

अवस्था 2: छवि की रचना

अपनी सजगता को आज्ञा चक्र पर ले आएँ और कुछ मिनट वहाँ ध्यान केन्द्रित करें।

उसके बाद आप जिस व्यक्ति की सहायता करना चाहते हैं, उसका अधिक-से-अधिक स्पष्ट रूप से मानस-दर्शन करें और उस पर कुछ देर ध्यान करें।

अवस्था 3: सहज रूप से प्राण का मानस-दर्शन

आज्ञा पर उस व्यक्ति की स्पष्ट छवि को धारण करें।

साथ ही तेजी के साथ स्वयं अपने शरीर के अंदर पाँचों प्राणों का अनुभव करें–पूरे शरीर में व्याप्त व्यान; पैरों, हाथों और सिर में कुण्डलित होता हुआ उदान; उदर में एक ओर से दूसरी ओर गतिमान समान; नाभि और मूलाधार के बीच अधोगामी अपान; और मध्यपट तथा कण्ठ के बीच ऊर्ध्वगामी प्राण।

अवस्था 4: पिंगला/सुषुम्ना में परिक्रमण

आज्ञा पर व्यक्ति की छवि को धारण करते हुए प्राणों की सजगता को छोड़ दें और रुपहली-श्वेत सुषुम्ना नाड़ी के साथ, उसे दोनों ओर से काटती हुई इड़ा एवं पिंगला का मानस-दर्शन करें।

उज्जायी पूरक करें और श्वास, सजगता एवं प्राणिक प्रकाश को पिंगला नाड़ी के साथ ऊपर आज्ञा की ओर प्रेषित करें।

रेचक के साथ सुषुम्ना के द्वारा केवल श्वास और सजगता को नीचे ले जाएँ।

प्रत्येक पूरक के अंत में आज्ञा पर श्वास और सजगता को रोक कर रखें; हर बार प्राण को अधिक-से-अधिक उज्जवल होता हुआ देखें।

पूर्णत: सतर्क रहें और पूरे अभ्यास के दौरान अपनी अबाधित सजगता को बनाए रखें।

अधिकतम 49 चक्र अभ्यास करें।

अवस्था 5: छवि में प्राण का संचार करना

जिस व्यक्ति का उपचार किया जाना है, अब अपनी सजगता को उसकी मानसिक छवि पर केन्द्रित कर दें।

जब आप उज्जायी पूरक करते हैं तब आज्ञा से निकलती हुई प्रकाश किरणों का और उस छवि के पूरे शरीर में उनके प्रवेश करने का मानस-दर्शन करें।

उसके बाद, रेचक के साथ प्राण संकुचित हो कर अपने भण्डार, आज्ञा में वापस चले जाते हैं।

प्रत्येक संकुचन के साथ प्राण का प्रसार प्रबल होता जाता है।

अब अपनी सजगता को उस भाग पर केन्द्रित करें जिसका उपचार किया जाना है।

जिस व्यक्ति का मानस-दर्शन किया जा रहा है, उसके रोगग्रस्त या क्षतिग्रस्त भाग को उपचारात्मक प्राणिक प्रकाश से ओतप्रोत कर दें।
प्राण को बार-बार इस प्रकार प्रेषित करें कि वह उपचार किये जाने वाले भाग की प्रत्येक कोशिका और ऊतक में प्रवेश कर जाए।
इसे उस प्रकाश ऊर्जा से भर दें, जिसे आप मानसिक रूप से आज्ञा से सीधे प्रवाहित होता हुआ देख रहे हैं।
प्रसार एवं संकुचन की विधि का उपयोग करते हुए अभ्यास को गहन बनाते जायें।
प्राण को वापस ले लें और 27 बार या तब तक वितरण करते रहें जब तक आपको यह न लगने लगे कि इस सत्र के लिए उपचारात्मक प्राण की दी गयी मात्रा पर्याप्त है।
व्यक्ति की छवि को लुप्त हो जाने दें।

अवस्था 6: प्राण को मूलाधार में लौटाना

अभ्यास समाप्त करने के लिए एक बार पुनः सजगता को आज्ञा पर ले आएँ, उसके बाद सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे प्राणिक ऊर्जा को आज्ञा पर वापस लाना आरंभ करें।
प्रतीक से ध्यान हटा लें और शरीर तथा इसके अंदर चलने वाले श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।
अविरत चल रहे उज्जायी प्राणायाम के प्रति सजग हो जाएँ।
पूरक करें और कुछ क्षणों तक एकाग्रता के साथ श्वास को आज्ञा पर रोक कर रखें।
रेचक करें और श्वास, सजगता एवं प्राण को सुषुम्ना के द्वारा नीचे की ओर मूलाधार में ले जाएँ, प्राण को उसके मूल स्रोत मूलाधार में लौटा दें।
पूरक करें और पिंगला के द्वारा श्वास एवं सजगता को ऊपर ले आएँ, याद रखें कि केवल श्वास और सजगता को ही ऊपर ले जाना है, प्राण को उनके साथ बिल्कुल नहीं ले जाना है।
रेचक करें और आज्ञा से श्वास, सजगता और शेष प्राण को सुषुम्ना के द्वारा मूलाधार में वापस ले जाएँ।
जब तक समस्त प्राण मूलाधार में लौटा न दिए गए हों तब तक इसी प्रकार अभ्यास जारी रखें।

अवस्था 7: अभ्यास की समाप्ति

खेचरी मुद्रा खोल दें, उज्जायी का अभ्यास समाप्त कर दें तथा सामान्य श्वसन के प्रति सजग बन जायें।

भौतिक शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

अपने चयनित आसन में स्थित शरीर– हाथ, पैर, सिर, गरदन और धड़ के प्रति सजग हो जाएँ।

शरीर की स्थूलता और उसकी आकृति के प्रति सजग हो जाएँ।

शरीर के नीचे भूमि या कुर्सी का अनुभव करें।

शरीर के चारों ओर के वातावरण के प्रति सजग हो जाएँ और कमरे तथा उसमें अपनी स्थिति का स्मरण करें।

वातावरण की ध्वनियों को सुने और सजगता को पूरी तरह बहिर्मुख कर लें।

सजगता को पूरी तरह शरीर में वापस ले आएँ।

जब आपको लगे कि आप पूरी तरह जमीन पर स्थित अपने शरीर में वापस आ गये हैं तब धीरे से आँखों को खोल दें।

यदि आप जरा भी असंतुलित अनुभव करें तो आँखों को पुन: बंद कर लें और प्राण को आज्ञा से मूलाधार में लौटाने वाले अभ्यास को उज्जायी के साथ कुछ एक बार और दुहराएँ, उसके बाद पुन: बतलायी गयी विधि से अपनी सजगता को बहिर्मुख करें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास नोट : यदि मानसिक छवि को पूरे अभ्यास के दौरान कायम रखना अत्यंत कठिन हो, तो आप उसे प्रारम्भिक मानस-दर्शन के बाद धूमिल हो जाने दे सकते हैं और वितरण के समय पुन: उसे मानस पटल पर ला सकते हैं। यदि रोग विस्तृत रूप से फैला हुआ हो, जिसके कारण शरीर की एक से अधिक प्रणालियाँ प्रभावित हों तो प्रभावित अंग या अंगों में 27 बार प्राण के प्रारम्भिक वितरण के बाद पूरे शरीर में 27 बार प्राण का संचार किया जाना चाहिए। जिस व्यक्ति की मदद की जा रही है उसके उपचार के लिए उसकी छवि पर गहन और अबाधित एकाग्रता अनिवार्य है।

अभ्यास 3: चित्र का उपयोग करते हुए उपचार

अभ्यास नोट : इस अभ्यास के लिए यदि आप शरीर के रोगग्रस्त भाग या भागों के चित्र का उपयोग करें तो वह सुविधाजनक होगा।

अवस्था 1: तैयारी और त्राटक

ध्यान के किसी आरामदायक आसन में बैठ जाएँ।
जिस व्यक्ति का उपचार करना है उसके चित्र को एक हाथ की दूरी पर रखें और उसके भ्रूमध्य को अपने भ्रूमध्य की सीध में रखें।
अपने हाथों को घुटनों पर चिन् या ज्ञान मुद्रा में रखें।
शरीर को पूर्णतः तनावमुक्त और स्थिर करने के लिए पाँच से दस मिनट तक कायास्थैर्यम् का अभ्यास करें।
मानसिक रूप से अपने चारों ओर एक सुरक्षात्मक वृत्त, त्रिकोण, क्रॉस या किसी व्यक्तिगत प्रतीक की रचना कर लें।
इसे ऊर्जा से प्रकाशित करें।
इसे चारों ओर बना रहने दें, लेकिन मन से धूमिल हो जाने दें।
अब अपनी आँखें खोल लें और चित्र में व्यक्ति के भ्रूमध्य पर अपलक देखते हुए कम-से-कम दस मिनट तक त्राटक करें।

अवस्था 2: पंच प्राणों का मानस-दर्शन

अब आकाश में चमकने वाली बिजली की रेखाओं के समान पूरे शरीर में तेजी से गतिशील व्यान को देखें और उसका अनुभव करें।
इस मानस-दर्शन को छोड़ दें और नीचे पैरों एवं हाथों में तथा ऊपर सिर में कुण्डलित होते उदान का मानस-दर्शन करें।
इस मानस-दर्शन को छोड़ दें और मध्यपट तथा नाभि के बीच के क्षेत्र में एक ओर से दूसरी ओर जाती हुई बिजली की धारा के रूप में समान का अनुभव करें।
इस मानस-दर्शन को छोड़ दें और नाभि तथा मूलाधार के बीच नीचे की ओर प्रकाश तरंगों के रूप में जाते हुए अपान के प्रति सजग हो जाएँ।
इस मानस-दर्शन को छोड़ दें और अंत में मध्यपट से कण्ठ के बीच ऊपर की ओर प्रकाश तरंगों के रूप में प्रवाहित प्राण पर ध्यान केन्द्रित करें।
शरीर में धीरे-धीरे बढ़ती हुई ऊर्जा के प्रति सजग हो जाएँ।

अवस्था 3: पिंगला/सुषुम्ना में परिक्रमण

प्राणों की सजगता छोड़ दें और आज्ञा पर व्यक्ति की छवि की सजगता को ताज़ा करें।

मन की आँखों के सामने दीप्तिमान सुषुम्ना नाड़ी के साथ उसके दोनों ओर से निकल कर बीच में एक-दूसरे काटती हुई इड़ा एवं पिंगला नाड़ियों को लाएँ।

पिंगला नाड़ी पर अपनी सजगता को केन्द्रित कर दें और खेचरी मुद्रा लगाकर उज्जायी प्राणायाम आरंभ करें।

अगले पूरक के साथ अपनी सजगता एवं प्राणिक प्रकाश को पिंगला नाड़ी के द्वारा ऊपर आज्ञा में प्रेषित करें।

वहाँ पर श्वास को कुछ क्षणों के लिए रोक लें ताकि प्राण आज्ञा में संचित हो सकें।

रेचक के साथ केवल श्वास और सजगता को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा नीचे मूलाधार में वापस ले जाएँ।

आज्ञा में इसी प्रकार प्राण के भण्डार में वृद्धि करना जारी रखें।

प्रत्येक पूरक के साथ प्राणों को अधिक-से-अधिक चमकते हुए देखें जब तक आज्ञा चक्र ऊर्जा से परिपूर्ण न हो जाए, या अधिक-से-अधिक 49 चक्र अभ्यास करें।

अवस्था 4: चित्र के माध्यम से व्यक्ति में प्राण का संचार

चित्र पर पुन: त्राटक करें। इस बार अपना पूरा ध्यान व्यक्ति के उस भाग पर केन्द्रित करें जिसका उपचार किया जाना है।

उसके बाद, जब आप खेचरी लगाकर उज्जायी पूरक करते हैं तब मानसिक रूप से देखें कि प्रकाश रेखाएँ आज्ञा चक्र से निकल कर चित्र में प्रवेश कर रही हैं।

रेचक के साथ प्राण संकुचित होकर वापस अपने भण्डार, आज्ञा में चले जाते हैं।

चित्र पर त्राटक करते रहें; गहन अबाधित एकाग्रता बनाए रखें।

प्राण को निरंतर प्रेषित करते रहें ताकि यह चित्र वाले व्यक्ति के अंग विशेष या उसके प्रत्येक अणु में प्रवेश करता रहे।

प्रसार एवं संकुचन की विधि का उपयोग करते हुए अभ्यास को गहन बनाएँ।

कुछ देर बाद आप देखेंगे कि चित्र नीले उपचारक प्रकाश से घिर गया है।

इसी प्रकार 27 बार प्राण को वापस लें और उसका वितरण करें।
जब इतना अभ्यास पूरा हो जाए तब आँखों को बंद कर लें और चिदाकाश से चित्र की छाया को लुप्त हो जाने दें।

अवस्था 5: प्राण को मूलाधार में लौटाना

अभ्यास को समाप्त करने के लिए सजगता को एक बार पुन: आज्ञा पर ले आएँ।
यह जाँच लें कि आप सजग हैं, तब सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे प्राणिक ऊर्जा को आज्ञा पर वापस लाना आरंभ करें।
अपने भौतिक शरीर और निरंतर चल रहे उज्जायी प्राणायाम के प्रति सजग हो जाएँ।
अनुभव करें कि आप अपने शरीर में वापस आ गये हैं।
सुरक्षात्मक यंत्र को लुप्त हो जाने दें।
पूरक करें और कुछ सेकण्ड तक अपनी एकाग्रता को आज्ञा पर रखते हुए श्वास को रोकें।
रेचक करें और श्वास, सजगता तथा प्राण को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा मूलाधार में ले जाएँ, प्राण को उसके मूल स्रोत मूलाधार में लौटा दें।
पूरक करें और श्वास एवं सजगता को पिंगला के द्वारा ऊपर ले आएँ; प्राण को इनके साथ नहीं ले जाना है।
रेचक करें और श्वास, सजगता एवं शेष प्राण को सुषुम्ना के द्वारा आज्ञा से मूलाधार में ले जाएँ।
यह क्रम तब तक जारी रखें जब तक समस्त प्राण मूलाधार में न लौट जाएँ।

अवस्था 6: अभ्यास की समाप्ति

अभ्यास को समाप्त करने के लिए तैयार हो जाएँ।
खेचरी मुद्रा खोल दें और उज्जायी प्राणायाम बन्द कर दें।
सजगता को भौतिक शरीर पर ले आएँ।
शरीर में होने वाली सभी संवेदनाओं के प्रति सजग हो जाएँ।
श्वास की गति के प्रति, एक-दूसरे का स्पर्श करने वाले शरीर के विभिन्न अंगों के प्रति, जमीन या कुर्सी का स्पर्श करने वाले शरीर के भागों के प्रति सजग हो जाएँ।

अपने चयनित आसन में स्थित पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
शरीर के भार एवं उसकी स्थूलता का अनुभव करें।
श्वास को गहरा होने दें और श्वास के साथ शरीर में होने वाली गति का अनुभव करें। सजगता को बहिर्मुख करें और वातावरण की ध्वनियों के प्रति सजग हो जायें।
अन्य इन्द्रियों– स्वाद और गंध की जाँच करें।
जब आपको लगे कि आप जमीन पर स्थित अपने शरीर में पूरी तरह वापस आ गये हैं और आपकी इन्द्रियाँ काम कर रही हैं तब धीरे-धीरे अपने शरीर को हिलाएँ और धीरे से अपनी आँखों को खोल लें।
यदि आपको ज़रा भी असंतुलन का अनुभव हो तो अपनी सजगता को पुनः बहिर्मुख करने से पहले अपनी आँखों को बंद कर लें और प्राण को मूलाधार में लौटाने के अभ्यास को तब तक करें जब तक भौतिक शरीर पूर्णतः संतुलित न हो जाए और इन्द्रियाँ सामान्य रूप से कार्य न करने लगें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 4: एक वस्तु का उपयोग करते हुए उपचार

अवस्था 1: तैयारी

बीमार व्यक्ति की एक ऐसी वस्तु को लें जिसका उसने उपयोग किया हो या ऐसा वस्त्र लें जिसे उसने हाल में पहना हो, और अच्छा यह होगा कि ऐसे वस्त्र को लिया जाए जो उस व्यक्ति के अधिक संपर्क में रहता हो।
यदि वस्त्र को लेते हैं तो उसे धुला हुआ नहीं होना चाहिए।
कमरे में तेज हवा नहीं होनी चाहिए।
एक मोमबत्ती जला लें और उसे वस्तु के उत्तर की ओर रख दें।
एक जलती हुई अगरबत्ती पूरब की ओर और एक प्याले में पानी भर कर पश्चिम की ओर रख दें।
इसके बाद मोमबत्ती की ओर मुँह करके दक्षिण में किसी आसन में बैठ जाएँ, सम्भव हो तो सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठें।
बाएँ हाथ को बाएँ घुटने पर रखें।

वस्तु को दाएँ हाथ में ले लें या उसका स्पर्श करें।
पाँच से दस मिनट तक या जब तक शरीर और मन शान्त और स्थिर न हो जाएँ तब तक काया स्थैर्यम् का अभ्यास करें।
अपने चारों ओर दीप्तिमान वृत्त, त्रिकोण, क्रॉस या अपने पसंद के सुरक्षात्मक प्रतीक का घेरा बना लें।
पूरे अभ्यास के दौरान वस्तु से दाएँ हाथ का संपर्क बना रहना चाहिए।

अवस्था 2: पंच प्राणों का मानस-दर्शन

उज्जायी प्राणायाम आरंभ करें और जीभ को खेचरी मुद्रा में पीछे मोड़ लें।
उज्जायी प्राणायाम की मन्द ध्वनि का अनुसरण करें और प्राणमय कोश के अंदर प्राण की गति के प्रति संवेदनशील बन जाएँ।
अब पंच प्राणों का मानस-दर्शन और उनका अनुभव करना आरंभ करें।
पंच प्राणों में से प्रत्येक की स्थिति और उसकी विशिष्ट गति के प्रति क्रमश: सजग बनते जाएँ।
व्यान...उदान... समान....अपान... प्राण...का अनुभव करें।

अवस्था 3: पिंगला नाड़ी

इस अनुभव का त्याग कर दें और सुषुम्ना से आर-पार जाती हुई पिंगला नाड़ी के वक्राकार मार्ग का मानस-दर्शन करें।
सजगता के साथ पिंगला नाड़ी के मार्ग का अनुसरण करें।
उज्जायी श्वास की लय के साथ पिंगला नाड़ी में सजगता को ऊपर-नीचे ले जाएँ।
पिंगला के अनुभव को गहन बनाएँ और प्रकाश की धारा के रूप में श्वास के साथ प्रवाहित होते प्राण का मानस-दर्शन करें।
श्वास, सजगता एवं प्राण अतीन्द्रिय मार्ग में आरोहण तथा अवरोहण करते हैं।
अगले पूरक के साथ प्राण को मूलाधार से आज्ञा तक ले जाना आरंभ करें।
आज्ञा पर श्वास को कुछ क्षणों के लिए रोक लें ताकि प्राण को आज्ञा में संचित किया जा सके।
केवल श्वास और सजगता को मूलाधार में लौटाएँ।
इसी प्रकार कुछ देर तक प्राण का उत्थान करते जाएँ।

जब पर्याप्त प्राण जाग्रत हो गये हों और उनका उत्थान हो गया हो तब सजगता को कुछ क्षणों तक आज्ञा पर बनाए रखें और वहाँ संचित प्राण के उज्जवल प्रकाश का अनुभव करें।

अवस्था 4: वस्तु को प्राण से आपूरित करना

आँखों को अभी भी बंद रखते हुए अपना पूरा ध्यान वस्त्र या वस्तु पर केन्द्रित कर दें और अगले उज्जायी पूरक के साथ प्राण को आज्ञा से दाएँ हाथ के द्वारा वस्तु की ओर भेजें।

जब आप उज्जायी रेचक करते हैं तब अपनी सजगता को वस्तु से दाएँ हाथ के द्वारा आज्ञा में ले आएँ।

उसके बाद पुन: पूरक करें, प्राण को दाएँ हाथ के द्वारा वस्तु में भेजें और मानसिक रूप से देखें कि वह आज्ञा चक्र से प्रवाहित होने वाले शुद्ध श्वेत प्रकाश से ओतप्रोत हो रही है।

जब आप रेचक करते हैं तब एक बार पुन: केवल अपनी श्वास और सजगता को आज्ञा में वापस ले आएँ; प्राण वस्तु में ही रह जाते हैं।

49 चक्रों या श्वासों तक यह अभ्यास करें। मानसिक रूप से देखें कि प्राण से आपूरित हो रही वस्तु अधिक-से-अधिक प्रकाशित होती जा रही है।

अवस्था 5: संक्षिप्त ध्यान

जब आपने 49 चक्र पूरे कर लिए हों तब वस्तु को हाथ में लिए हुए शांतिपूर्वक बैठे रहें, और जिस व्यक्ति की आप मदद करना चाहते हैं उसके स्वास्थ्य पर कम-से-कम दस मिनट तक ध्यान करें।

इस समय मानसिक रूप से अपने गुरु मंत्र का जप करें या यदि गुरु मंत्र नहीं हो तो महामृत्युंजय मंत्र का जप करें।

अवस्था 6: मूलाधार में प्राण को लौटाना

अभ्यास की समाप्ति के लिए सजगता को एक बार और आज्ञा पर ले जाएँ।

सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे प्राण शक्ति को उस चक्र से लौटाना आरंभ करें।

सुरक्षात्मक प्रतीक के अंदर अपने भौतिक शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

सुरक्षात्मक प्रतीक को लुप्त हो जाने दें।

शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।

निरंतर चल रहे अपने उज्जायी श्वसन के प्रति सजग हो जाएँ।
पूरक करें और कुछ क्षणों तक आज्ञा पर एकाग्रता के साथ श्वास को रोक कर रखें। रेचक करें और श्वास, सजगता एवं प्राण को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा प्राण के मूल स्रोत मूलाधार में ले जाएँ।
पूरक करें और प्राण को बिना साथ लिए हुए, श्वास एवं सजगता को पिंगला के द्वारा ऊपर ले जाएँ।
रेचक करें और श्वास, सजगता एवं शेष प्राण को लौटा कर सुषुम्ना के द्वारा आज्ञा से मूलाधार में ले जाएँ। यह क्रम तब तक जारी रखें जब तक समस्त प्राण मूलाधार में न लौटा दिए गए हों।

अवस्था 7: अभ्यास की समाप्ति

जब प्राण को अपने स्रोत में लौटा दिया गया हो तब अपनी सजगता को शरीर और श्वास पर ले जाएँ।
खेचरी मुद्रा खोल दें और उज्जायी प्राणायाम बन्द कर दें।
सहज श्वसन प्रक्रिया और अपने चयनित आसन में स्थित शांत एवं स्थिर शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
सिर से पैर तक पूरे शरीर के प्रति सजग हो जाएँ।
भौतिक शरीर के स्वरूप और उसकी संरचना के प्रति सजग हो जाएँ।
अपनी सजगता को बहिर्मुख कर लें और उस कमरे का मानस-दर्शन करें जिसमें आप बैठे हुए हैं।
अन्य इन्द्रियों को भी एक-एक कर जाँच लें– कोई गंध आ रही हो, मुँह में किसी स्वाद का अनुभव हो रहा हो तो उस पर ध्यान दें, त्वचा पर वस्त्र के और मुँह पर वायु के स्पर्श का अनुभव करें।
यह सुनिश्चित कर लें कि आप पूर्ण रूप से सचेत हैं, सभी इन्द्रियाँ कार्य कर रही हैं, और धीरे-धीरे अपनी सजगता को बहिर्मुख कर लें।
सजगता को शरीर में वापस ले आयें।
अभ्यास अब पूरा हुआ।
यदि आप चाहें तो दोनों हथेलियों को आपस में रगड़ कर अपनी आँखों पर रखें, उसके बाद धीरे-से अपनी आँखें खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 5: स्पर्श के द्वारा सम्पूर्ण शरीर का उपचार

अभ्यास नोट: उपचार को अधिक प्रभावकारी बनाने के लिए उसके पूर्व या बाद में लघु योग निद्रा करायी जा सकती है। मानस-दर्शन में उनके पूरे शरीर को पूर्ण स्वास्थ्य और स्फूर्ति से दमकते हुए देखना सम्मिलित किया जा सकता है। यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह उपयुक्त नहीं भी हो सकता है, इसलिए सावधानीपूर्वक इस पर विचार किया जाना चाहिए।

अवस्था 1: तैयारी

जिस व्यक्ति का उपचार किया जाना है, उसे शवासन में लेट कर योग निद्रा के लिए तैयार हो जाना चाहिए ताकि वह मानसिक और शारीरिक रूप से तनावमुक्त हो जाए।

उसके सिर के पीछे सिद्धासन, सिद्धयोनि आसन या पद्मासन में बैठ जाएँ। अपने भौतिक शरीर के चारों ओर एक दीप्तिमान वृत्त, त्रिकोण, क्रॉस या अपनी पसंद के किसी अन्य प्रतीक का मानस-दर्शन करें। अपने भौतिक शरीर को उस सुरक्षात्मक यंत्र के अंदर देखें।

अब अपनी दोनों हथेलियों को व्यक्ति की कनपटियों पर इस प्रकार रखें कि आपकी अँगुलियाँ कोमलता से उसके गालों और जबड़ों का स्पर्श करें।

जब व्यक्ति तनावमुक्त हो रहा हो और अपनी श्वास के अवागमन को देख रहा हो, तब आपको निम्नलिखित दूसरी से चौथी अवस्थाओं का अभ्यास करते जाना है।

अवस्था 2: पंच प्राणों का मानस-दर्शन

उज्जायी प्राणायाम आरंभ करें और खेचरी मुद्रा लगा लें।

उज्जायी की मन्द, सूक्ष्म ध्वनि पर ध्यान केन्द्रित करें।

उज्जायी के द्वारा सजगता को सूक्ष्म बनाते जाएँ और उसे प्राणमय कोश के साथ समन्वित करें।

व्यान...उदान...समान... अपान...प्राण के प्रति सजग हो जाएँ।

अवस्था 3: पिंगला नाड़ी

पंच प्राणों की सजगता का त्याग कर दें और मानसिक रूप से देखें कि इड़ा एवं पिंगला नाड़ियाँ सुषुम्ना नाड़ी पर एक-दूसरे को पार करते हुए आगे बढ़ रही हैं।
सुषुम्ना नाड़ी में उभरे हुए चक्रों को देखें, जिनसे ऊर्जा निकल रही है और प्रकाश बिखर रहा है।
सजगता को पिंगला पर केन्द्रित कर दें और उसे पिंगला में ऊपर-नीचे ले जाना आरंभ करें।
आरोहण और अवरोहण को पूरक एवं रेचक के साथ समन्वित करें।
सूक्ष्म उज्जायी श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।
श्वास एवं सजगता को मिलाकर लयबद्ध कर दें।

अवस्था 4: आज्ञा पर प्राण में वृद्धि

श्वास एवं एकाग्र सजगता का उपयोग करते हुए पिंगला के द्वारा प्राण को ऊपर ले जाने के लिए तैयार हो जाएँ।
पूरक करते हुए, प्राण की गति की चेतना के साथ अपनी सजगता को पिंगला नाड़ी के द्वारा आज्ञा की ओर प्रेषित करें।
श्वास, सजगता एवं प्राण को कुछ क्षणों तक आज्ञा पर रोक कर रखें और प्राण को प्रकाशित होते हुए देखें।
उसके बाद जब आप रेचक करते हैं तब केवल श्वास और सजगता को वापस मूलाधार में ले आएँ।
आज्ञा चक्र में प्राण के संचित होते जाने पर उसकी बढ़ती हुई चमक को देखते हुए इसी प्रकार कुछ मिनट तक अभ्यास जारी रखें।

अवस्था 5: प्राणमय कोश का शुद्धिकरण

जब आपको निश्चित रूप से प्रतीत हो कि आपके प्राण जाग्रत हो चुके हैं तब अपनी आँखें खोल दें और बीमार व्यक्ति की बगल में या तो घुटनों के बल बैठ जाएँ या खड़े हो जाएँ।
हाथों को रोगी के शरीर से तीन इंच की दूरी पर रखें और हथेलियों को नीचे की ओर रखते हुए झाड़ने की क्रिया आरंभ करें।
यह क्रिया सिर से पैर तक की जानी चाहिए और इसे ग्यारह बार दुहराना चाहिए।

अवस्था 6: शरीर के सामान्य रोगों या बीमारियों का उपचार

रोगी के शरीर के दाहिनी ओर उसकी कमर के पास खड़े हो जायें।

झाड़ने की क्रिया करने के बाद अपने बाएँ हाथ को व्यक्ति के ललाट पर, आज्ञा चक्र पर रखें।

उसके बाद अपने दाएँ हाथ को व्यक्ति के मणिपुर चक्र, अर्थात् नाभि के ठीक ऊपर रखें।

आज्ञा चक्र में संचित प्राण की पूर्ण सजगता के साथ अपनी सजगता को आज्ञा चक्र पर कुछ क्षणों के लिए रोक कर रखें।

पूरक करें और उज्जायी एवं खेचरी करते हुए प्राण को बाएँ हाथ के द्वारा प्रेषित करें, तथा देखें कि आपके आज्ञा चक्र में संचित उज्जवल प्रकाश रोगी के आज्ञा चक्र में भर रहा है।

इसके साथ ही, दाएँ हाथ से प्रवाहित होने वाली ऊर्जा को भेजें और देखें कि व्यक्ति का मणिपुर चक्र श्वेत उपचारक प्रकाश से आपूरित हो रहा है।

रेचक करें और अपनी सजगता को अपने आज्ञा चक्र पर वापस ले आएँ।

पूरक करें और दोनों हाथों से प्राण का वितरण करें; रेचक करें और अपनी सजगता को अपने आज्ञा चक्र पर वापस ले आएँ।

इसे अधिकतम 49 बार किया जाना चाहिए।

अवस्था 7: आत्मशुद्धि

अपनी सजगता को आज्ञा चक्र में वापस ले जायें और कुछ श्वासों तक वहाँ रुक कर विश्राम करें।

अपने गुरु के प्रति या अपने अंदर प्रकाश के स्रोत के प्रति सजग हो जाएँ।

हर प्रकार के कर्त्तापन के भाव को मन से निकाल दें और आंतरिक स्रोत से जुड़ जाएँ।

इस बात के प्रति सजग हो जाएँ कि प्राणमय कोश आपके भौतिक शरीर में व्याप्त है, लेकिन इससे एकदम भिन्न है।

यह सूक्ष्म, शक्तिशाली प्राणमय कोश प्राण से बना हुआ है।

यह आपके भौतिक शरीर को जीवन्त बनाता है; हालाँकि इसका विस्तार भौतिक शरीर के परे भी होता है और इसका अनुभव दूसरे आयाम में होता है।

अनुभव करें कि आपका पूरा शरीर प्राण का बना हुआ है और हर प्रकार की दुर्बलता या रोग प्राण के श्वेत प्रकाश से दूर हो रहा है।

अवस्था 8: प्राण को मूलाधार में लौटाना

जब आप स्वयं को पूर्णत: शुद्ध अनुभव करें, तब प्राण को लौटाने के साथ अपना अभ्यास समाप्त करें।

एक बार पुन: सजगता को आज्ञा में ले आएँ, उसके बाद सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे प्राण को आज्ञा में लौटाना आरंभ करें।

जब आपने प्राण को आज्ञा में लौटाना समाप्त कर लिया हो तब व्यक्ति के ऊपर से अपने हाथों को हटा लें।

अपने भौतिक शरीर को घेरे हुए सुरक्षात्मक प्रतीक के प्रति सजग हो जाएँ और उसे लुप्त हो जाने दें।

अपने शरीर और उज्जायी श्वसन के प्रति सजग हो जाएँ।

पूरक करें और श्वास को सजगता के साथ आज्ञा पर कुछ क्षणों तक रोक कर रखें।

रेचक करें और श्वास, सजगता एवं प्राण को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा मूलाधार में वापस ले जाएँ, जो प्राण का मूल स्रोत है।

पूरक करें और प्राण को मूलाधार में छोड़ कर केवल श्वास एवं सजगता को पिंगला के सहारे ऊपर ले जाएँ।

रेचक करें और श्वास, सजगता एवं बचे हुए प्राण को आज्ञा से सुषुम्ना के द्वारा मूलाधार में वापस ले जाएँ।

यह क्रम तब तक जारी रखें जब तक समस्त प्राण मूलाधार में वापस न आ जाएँ।

अवस्था 9: अभ्यास की समाप्ति

जब समस्त प्राण अपने स्रोत में लौट जाएँ, तब खेचरी मुद्रा खोल दें और उज्जायी प्राणायाम को समाप्त कर दें।

सहज श्वास के प्रति सजग हो जाएँ।

स्वाभाविक रूप से अंदर-बाहर आने-जाने वाली श्वास पर ध्यान केन्द्रित करें।

भौतिक शरीर के अंदर गतिमान श्वास की लय और उसके प्रवाह पर ध्यान दें।

अब पूरे शरीर और उसकी स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।
हाथों, पैरों, सिर, गरदन और धड़ की स्थिति के प्रति सजग हो जाएँ।
शरीर के नीचे जमीन का अनुभव करें और अपने आस-पास के वातावरण के प्रति सजग हो जाएँ।
यह सुनिश्चित कर लें कि आप पूरी तरह से सचेत हैं और सभी इन्द्रियाँ सामान्य रूप से कार्य कर रही हैं।
यह जाँच लें कि सजगता पूर्णत: बहिर्मुख हो चुकी है।
जब आपको लगे कि आप जमीन पर स्थित अपने शरीर में पूरी तरह वापस आ गये हैं, तब धीरे से अपनी आँखें खोल लें।
यदि आपको ज़रा भी असंतुलन का अनुभव हो, तो अपनी आँखें पुन: बंद कर लें और प्राण को आज्ञा से मूलाधार में लौटाने की क्रिया को तीन बार और दुहरायें और बतलायी गयी विधि से पुन: सजगता के बहिर्मुख होने की जाँच करें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास नोट: जिस व्यक्ति का उपचार किया जा रहा है उसके ऊपर से जब आपने अपने हाथों को हटा लिया हो तब उस व्यक्ति को आँखें बंद करके शवासन में लेटे रहना चाहिए। जब आपने स्वयं को पूरी तरह बहिर्मुख कर लिया हो तब उस व्यक्ति की सजगता को बहिर्मुख करने के लिए उसका मार्गदर्शन करें।

अभ्यास 6: स्पर्श के द्वारा उपचार– विशेष रोग के लिए

अभ्यास नोट: अभ्यास 5 में सामान्य उपचार की विधि की अवस्था 6 के निम्नलिखित रूपांतरण का पूरक अभ्यास के रूप में या उसके बदले में प्रयोग किया जा सकता है। उस अभ्यास में रोगी के पूरे शरीर का उपचार करने के लिए आज्ञा और मणिपुर चक्रों में प्राण का वितरण किया जा रहा था। उपचार को सुगम बनाने के लिए निम्नलिखित विधि के द्वारा शरीर के क्षेत्र विशेष का उपचार किया जाता है।

अवस्था 6: क्षेत्र विशेष के रोगों का उपचार

शुद्धिकरण और झाड़ने की प्रक्रियाओं के बाद दाएँ हाथ को उपचार किए जाने वाले स्थान पर या उसके ऊपर रखें, हथेली नीचे की ओर रहे।

वहाँ पर अपने ध्यान को केन्द्रित करें, उज्जायी प्राणायाम के साथ पूरक करें और मानसिक रूप से देखें कि आज्ञा चक्र से श्वेत प्रकाश निकल कर आपके दाएँ हाथ के द्वारा उस प्रभावित क्षेत्र तक जा रहा है।

रेचक करें और सजगता को आज्ञा पर लौट जाने दें, लेकिन प्राण को उसी क्षेत्र में छोड़ दें जिसका उपचार किया जा रहा है।

यह अभ्यास 49 चक्रों या श्वासों तक करें, और मानसिक रूप से देखें कि व्यक्ति के शरीर का प्रभावित भाग प्राणिक प्रकाश से दीप्तिमान हो रहा है।



17

उच्च प्राण विद्या गुरुओं के साथ

अभ्यास 1: स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के साथ प्राण विद्या (आंतरिक वितरण)

अवस्था 1: तैयारी

जितना संभव हो उतने हल्के से आँखें बंद कर लें और प्राण विद्या के अभ्यास के लिए तैयार हो जाएँ।

ध्यान को भटकने से बचाने के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि आँखें बंद रहें।

आप किसी आरामदायक आसन में बैठ सकते हैं, आराम कुर्सी पर बैठ सकते हैं या बिस्तर पर लेट भी सकते हैं, लेकिन यह याद रखें कि आपकी शारीरिक स्थिति से कोई असुविधा उत्पन्न नहीं होनी चाहिए।

अवस्था 2: प्राण का जागरण

जहाँ तक प्राण के जागरण का सम्बन्ध है, (पिंगला नाड़ी में) मूलाधार से आज्ञा तक प्राण की वक्राकार गति को स्पष्ट रूप से याद रखें।

दायीं ओर से आरंभ करें और श्वास की गति के साथ सावधानीपूर्वक आगे बढ़ें।

मूलाधार से दायीं ओर घूम जाएँ, फिर अंदर की ओर मुड़ते हुए स्वाधिष्ठान में पहुँच जाएँ।

बायीं ओर के वक्र का अनुसरण करते हुए ऊपर मणिपुर की ओर बढ़ें।
मणिपुर से अनाहत के लिए दायीं ओर के वक्र द्वारा आगे बढ़ें।
बायीं ओर के वक्र का अनुसरण करते हुए अनाहत से विशुद्धि की ओर ऊपर जाएँ।
विशुद्धि से आज्ञा तक जाने के लिए दायीं ओर के वक्र का अनुसरण करें।
मूलाधार से आज्ञा तक (पिंगला में) इस प्रकार वक्राकार गति होती है और प्राण का जागरण होता है।
इसी प्रकार अभ्यास जारी रखें।
प्रारंभ में आपको 49 चक्र पूरे करने होते हैं, लेकिन जब आप अभ्यस्त हो जाते हैं तब आपको चक्रों की गिनती करना आवश्यक नहीं होता, क्योंकि आप सहज रूप से प्राण के जागरण का अनुभव करने लगते हैं।
जब मूलाधार से आज्ञा तक प्राण का जागरण आरंभ हो चुका हो, और आपको उस प्राणिक ऊर्जा की गति का अनुभव होने लगे, तभी आप आगे की यात्रा आरंभ कर सकते हैं।

अवस्था 3: प्राण का उत्थान

प्राण को मूलाधार से आज्ञा तक उसी प्रकार ले जाएँ, जिस प्रकार आप ले जाते रहे हैं, किन्तु प्राण को आज्ञा में ही छोड़ दें, उसे मूलाधार में वापस नहीं ले जाएँ।
मूलाधार से आज्ञा तक की अपनी यात्रा को सतर्क सजगता के साथ आरंभ करें। अपने मन और चेतना को अतीन्द्रिय एवं प्राणिक ऊजाओं के साथ मेरुदण्ड द्वारा ऊपर ले जाते रहें।
अपने अभ्यास को प्रयासपूर्वक जारी रखें।
कुण्डलिनी का जागरण मूलाधार में करना है।
इसे धीरे-धीरे आज्ञा की ओर आरोहण करने दें, उसके बाद कुम्भक के रूप में आज्ञा पर कुछ क्षणों तक रुकें।
दूसरे चक्र में प्रवेश करने के लिए यहाँ हमारा पहला चक्र समाप्त होता है।
अपनी यात्रा को पुनः मूलाधार से आरंभ करें; आज्ञा पर कुछ क्षण रुक कर कुम्भक करें।
पूर्ण एकाग्रता के साथ अभ्यास जारी रखते हुए प्राण की गति का गहनता से अनुभव करें।

प्राण शक्ति को पिंगला के द्वारा मूलाधार से आज्ञा तक जाग्रत करना जारी रखें।
याद रखें कि जब आप आज्ञा चक्र पर पहुँचते हैं तब वहाँ कुछ देर कुम्भक करते हुए रुकना है।

अवस्था 4: प्रसार एवं शिथिलीकरण

आज्ञा पर कुम्भक लगाने के बाद रेचक करते हुए अपने पूरे शरीर को शिथिल करें।
आप मेरुदण्ड के द्वारा रेचक नहीं कर रहे हैं; आप शरीर से उसी प्रकार श्वास निकाल रहे हैं जिस प्रकार गुब्बारे से हवा निकलती है।
पूरक करने पर त्वचा के प्रत्येक रोम छिद्र से शरीर श्वास लेता है और उसका प्रसार होता है।
प्रत्येक रेचक के साथ शिथिलता आती है और पूरक के साथ प्रसार होता है।
उज्जायी प्राणायाम करते हुए श्वसन करना है।
इसका अनुभव मेरुदण्ड में नहीं, बल्कि पूरे शरीर में करना है।
अब यह उज्जायी पूरे शरीर में व्याप्त हो गया है, मानो शरीर का प्रत्येक रोम छिद्र उज्जायी कर रहा हो।
जब आप पूरक करते हैं तब शरीर का प्रत्येक रोम छिद्र आपको श्वास लेने में सहायता करता है और शरीर एक गुब्बारे के समान फैल जाता है।
जब आप रेचक करते हैं तब आपका पूरा शरीर श्वास छोड़ता है और रूई के समान हल्का हो जाता है; यह शिथिलीकरण का समय है।
सम्पूर्ण शरीर की सजगता; शरीर की चेतना के साथ श्वास की चेतना का समन्वय।
सम्पूर्ण शरीर की पूर्ण सजगता।
अब पूरक करें, पूरक के साथ पूरा शरीर रोम छिद्रों के द्वारा, त्वचा के द्वारा, शरीर के प्रत्येक भाग के द्वारा श्वास ले रहा है।
पूरक के साथ आपके पूरे शरीर में प्रसार हो रहा है।
रेचक करें; रेचक करने के साथ ही शरीर का प्रत्येक रोम छिद्र श्वास छोड़ रहा है।
अब शरीर शिथिल हो रहा है।

याद रखें कि पूरक और रेचक की सम्पूर्ण प्रक्रिया भ्रूमध्य के पीछे स्थित आज्ञा चक्र के माध्यम से हो रही है।
आज्ञा केन्द्र बिन्दु है; यह सम्पूर्ण श्वसन तंत्र का मुख्य वितरण केन्द्र है। श्वास के साथ अंदर लिया गया प्राण आज्ञा चक्र के द्वारा ही पूरे शरीर में संचारित होता है; बाहर निकाला जाने वाला प्राण पहले आज्ञा चक्र में लौटता है, और फिर आज्ञा से प्राण को बाहर छोड़ा जाता है।
पूरक के दौरान शरीर का प्रसार होता है।
रेचक के दौरान शरीर शिथिल होता है।
जब आप आज्ञा चक्र से पूरक करते हैं और पूरे शरीर का प्रसार होता है तब अनुभव करें कि प्राण के भण्डार, आज्ञा चक्र से यह प्रक्रिया हो रही है, और प्राण पूरे शरीर में वितरित हो रहा है।
रेचक के दौरान प्राण को आज्ञा चक्र में लौटा दिया जाता है, यह प्राण किसी अतीन्द्रिय पथ के द्वारा नहीं, बल्कि सीधे आज्ञा चक्र में वापस आता है।
उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास निम्नलिखित ढंग से किया जाना चाहिए– आज्ञा से पूरक करें और प्राण को पूरे शरीर में, पैरों की अँगुलियों तक वितरित करें।
रेचक के दौरान प्राण को आज्ञा में वापस ले जायें और शिथिल हो जाएँ। श्वास छोड़ने पर शिथिल होना स्वाभाविक है।
पहले के अभ्यास से इस अभ्यास को करना अधिक आसान है।
पहले के अभ्यास में आप शरीर के रोम छिद्रों से श्वास ले रहे थे और उन्हीं रोम छिद्रों से श्वास छोड़ भी रहे थे, लेकिन इसमें सम्पूर्ण श्वसन प्रक्रिया आज्ञा चक्र के माध्यम से की जानी है।
आज्ञा चक्र को प्राण का भण्डार माना जा सकता है जहाँ से उज्जायी प्राणायाम की सहायता से पूरे शरीर तंत्र में प्राण का वितरण किया जाता है। रेचक के दौरान सभी दिशाओं से प्राण को वापस आज्ञा चक्र में लाया जाता है।
याद रखें कि श्वास छोड़ने के साथ शिथिलीकरण होता है।
शिथिलीकरण के समय चेतना और प्राण, दोनों स्वयं को पूरे शरीर से वापस आज्ञा चक्र में ले आते हैं।
उस समय शिथिलीकरण होता है, शरीर का संकुचन नहीं।

आपको उज्जायी का इतना अभ्यस्त हो जाना चाहिए कि प्राण विद्या की सम्पूर्ण प्रक्रिया के दौरान श्वास लेने पर आपकी पूरी चेतना, कल्पना, अनुभव, विचार और शरीर तंत्र का प्रसार हो तथा श्वास छोड़ने पर वे शिथिल हो जाएँ।

श्वसन प्रक्रिया आपके लिए इतनी सामान्य क्रिया होनी चाहिए कि इस पर आपका ध्यान ही नहीं जाए, आप इसके प्रति सजग ही नहीं रहें।

पूरक के समय प्राण आपके सूक्ष्म शरीर का प्रसार करता है और रेचक के दौरान आपका सूक्ष्म शरीर शिथिल होता है।

आपका ध्यान श्वसन प्रक्रिया से हट कर प्रसार एवं शिथिलीकरण की प्रक्रियाओं पर चले जाना चाहिए। संक्षेप में कहा जा सकता है कि आपको श्वसन की सजगता के परे चले जाना होगा।

अवस्था 5: प्रसार एवं संकुचन

अब हम अगली अवस्था की ओर बढ़ेंगे, जिसमें थोड़ा अंतर है।

पहले की अवस्था के समान पूरक के प्रत्येक चक्र के साथ प्रसार होगा, किन्तु रेचक के दौरान शिथिलीकरण के स्थान पर संकुचन होगा।

पूरक के साथ प्रसार करें और आज्ञा चक्र से पूरे शरीर में प्राण का वितरण करें।

अर्थात्, पूरक के दौरान प्राण आज्ञा चक्र से निकल कर पूरे शरीर में फैल जाता है और साथ ही शरीर का प्रसार भी होता है।

जब आप रेचक करते हैं तब प्राण आज्ञा चक्र में लौट आता है, जिससे सूक्ष्म शरीर का संकुचन होता है।

यदि आप दो नियमों को याद रखें तो आप पूरे अभ्यास को समझ सकते हैं।

पूरक करने पर प्राण का वितरण होता है और शरीर का प्रसार होता है।

रेचक करने पर प्राण वापस आता है और शरीर का संकुचन होता है।

शरीर के प्रसार एवं संकुचन की प्रक्रिया भौतिक शरीर के स्तर पर नहीं, बल्कि मानसिक स्तर पर होती है।

आपको अपनी कल्पना का अधिकतम प्रयोग करना है।

जब आप अपने प्राण को शरीर के किसी भाग में प्रेषित करते हैं, जैसे कि पैर, तो मानसिक रूप से अनुभव करें कि आपका पैर सभी दिशाओं में फैल रहा है।

यह भौतिक स्तर का प्रसार नहीं है, बल्कि मानसिक एवं प्राणिक स्तर का प्रसार है।

इस प्रकार, जब आप श्वास लेते हैं तब अपने प्राण को सभी दिशाओं में वितरित करें, ताकि प्राण जो आज्ञा से निकला है वह संपूर्ण शरीर में फैल जाए।

सिर से पैर तक आपका सम्पूर्ण शरीर प्राण शक्ति से आपूरित हो गया है। गहनता से इसका अनुभव करें।

इसके साथ ही आपको यह कल्पना करनी चाहिए कि आपका अतीन्द्रिय शरीर व्यापक रूप से सभी दिशाओं में फैल रहा है और इसने ब्रह्माण्ड का रूप धारण कर लिया है।

इसी प्रकार, जब आप श्वास छोड़ते हैं तब चेतन रूप से प्राण को शरीर के सभी भागों से वापस आज्ञा चक्र में ले आयें।

जिस प्रकार समुद्र में भाटा के दौरान जल पीछे की ओर लौटता है, उसी प्रकार रेचक के दौरान प्राण वापस आता है और संकुचन होता है।

संकुचन होने पर अभ्यासी शारीरिक चेतना के परे चला जाता है।

किन्तु यह स्मरण रखना है कि संकुचन एवं प्रसार विभाजित रूप में नहीं, बल्कि एक संयुक्त प्रक्रिया के रूप में होता है।

एक समरूप ईकाई के रूप में शरीर में पूरक के साथ प्रसार और रेचक के साथ संकुचन होना चाहिए।

जब आप श्वास लेते हैं तब प्राण को आज्ञा से शरीर के सभी भागों में वितरित करें और जब श्वास छोड़ते हैं तब फैली हुई प्राण शक्ति को वापस उसके स्रोत आज्ञा में ले आयें।

अवस्था 6: शरीर के अलग-अलग भागों में प्राण का वितरण : प्रसार/शिथिलीकरण

इस बार हम लोग विभिन्न भागों में अभ्यास करेंगे।

हम लोग दाएँ हाथ से आरंभ करेंगे; पूरक करें और दाएँ हाथ में आज्ञा से प्राण शक्ति की आपूर्ति करें।

अपने दाएँ हाथ का प्रसार करें, भौतिक रूप से नहीं, बल्कि मानसिक रूप से।

अब रेचक करें, प्राण को दाएँ हाथ से वापस आज्ञा में ले आयें और दाएँ हाथ को शिथिल करें।

जब आप दाएँ हाथ में प्राण का वितरण करते हैं तब अनुभव करें कि प्राण उस अंग के अंतिम छोर तक प्रत्येक रोम छिद्र में व्याप्त हो रहा है।
प्राण की गति का अनुभव करें।
आज्ञा में लौट आएँ; अपनी श्वास को वहाँ कुछ क्षणों तक रोक कर रखें।
बाएँ हाथ में जाएँ; बाएँ हाथ की अँगुलियों के अंतिम छोर तक प्राण की आपूर्ति करें।
अब प्राण को आज्ञा में वापस ले जायें।
प्राण आज्ञा से बाएँ हाथ में जाता है और बाएँ हाथ से लौट कर आज्ञा में ही आ जाता है।
आप एक-एक कर अपने हाथों में प्राण की आपूर्ति करके और उसे वापस लेकर उनका प्रसार कर रहे हैं और उन्हें शिथिल कर रहे हैं।
आज्ञा में लौट आएँ; वहाँ श्वास को रोक कर रखें।
रेचक करें और शिथिल हो जाएँ।
अब पूरक करें, और पूरक के साथ पीठ की दायीं ओर से दाएँ पैर में प्राण की आपूर्ति करें। मानसिक रूप से दाएँ पैर के प्रसार का अनुभव करें।
अब रेचक करें, प्राण को दाएँ पैर से आज्ञा में वापस ले जायें।
प्राण को वापस लेने के बाद दाएँ पैर को शिथिल कर लें।
अब बाएँ पैर की अंगुलियों तक प्राण की आपूर्ति करें; हर बार आपूर्ति के साथ प्रसार होता है।
प्राण को बाएँ पैर से वापस आज्ञा में ले जायें और विश्राम का अनुभव करें।
अब दुहराएँ–
आपूर्ति–प्रसार; वापस लेना–शिथिल होना।
आपूर्ति–प्रसार; वापस लेना–शिथिल होना।
प्राण को आज्ञा में वापस ले आएँ और सुने।
दायीं छाती में आज्ञा से प्राण की आपूर्ति करें, और रेचक के समय प्राण को पुन: आज्ञा में वापस ले जायें।
पूरक–आपूर्ति–प्रसार; रेचक–वापस लेना–शिथिल होना।
अब अपने प्राण को आज्ञा में वापस ले जायें और श्वास को कुछ देर रोक कर रखें।
पूरक करें, बायीं छाती में प्राण की आपूर्ति करें और हृदय की पेशियों को बचाते हुए मानसिक रूप से अपनी छाती का प्रसार करें।

रेचक करें, प्राण को बायीं छाती से वापस ले जायें और अपनी छाती को शिथिल कर लें।

आपूर्ति–प्रसार; वापस लेना–शिथिल होना।

अवस्था 7: शरीर के विभिन्न भागों में प्राण को वितरित करना: प्रसार/संकुचन

अब आज्ञा में लौट आएँ, श्वास को रोक कर रखें और निर्देशों को सुने। इस बार प्राण को वापस लेते समय शिथिलीकरण के स्थान पर आपको संकुचन करना है।

सबसे पहले दाएँ हाथ में प्राण की आपूर्ति करें और प्रसार करें।

प्राण को वापस आज्ञा चक्र में ले जाएँ और संकुचन करें।

आज्ञा में वापस आ जाएँ और आज्ञा में प्राण की सजगता बनाए रखें।

पूरक करें, बाएँ हाथ में प्राण की आपूर्ति करें और इसका प्रसार करें।

रेचक करें, प्राण को वापस लाएँ और संकुचन करें।

प्रसार एवं संकुचन की प्रक्रियाओं को मानसिक रूप से करना है।

अपने प्राण को आज्ञा में वापस ले आएँ; इसे आज्ञा में कुछ देर रोक कर रखें।

मानसिक रूप से अपने बाएँ हाथ को शिथिल करें, उसके बाद दाएँ पैर में जाएँ।

आज्ञा से पीठ की दायीं ओर से होते हुए पूरे दाएँ पैर की अंगुलियों तक प्राण की आपूर्ति करें और अब प्रसार करें।

प्राण को वापस ले जायें, रेचक करें और अपने दाएँ पैर को मानसिक रूप से संकुचित करें।

आज्ञा में लौट आएँ, अपनी श्वास को कुछ देर तक रोकें, मानसिक रूप से अपने दाएँ पैर के संकुचन को ढीला कर दें।

प्रसार के साथ बाएँ पैर में प्राण की आपूर्ति करें।

बाएँ पैर का संकुचन करते हुए वहाँ से प्राण को वापस आज्ञा में ले जायें।

आज्ञा पर प्राण को रोक कर रखें और मानसिक रूप से अपने बाएँ पैर के संकुचन को ढीला कर दें।

छाती के दाएँ भाग में प्राण की आपूर्ति करते हुए उसका प्रसार करें, संकुचन करते हुए प्राण को वापस ले जायें, आज्ञा में लौट आएँ।

छाती के दाएँ भाग को शिथिल कर दें।
अब छाती के बाएँ भाग में प्राण की आपूर्ति करें और हृदय को बचाते हुए मानसिक रूप से उसका प्रसार करें।
संकुचन के साथ प्राण को वापस ले जायें; आज्ञा में लौट आएँ और प्राण को कुछ देर रोक कर रखें।

अवस्था 8: प्राण शक्ति का दर्शन

अब आपको प्राण शक्ति का दर्शन होना चाहिए।
प्राण को सीधे अपने शरीर में प्रेषित करें।
उसके बाद प्राण को आज्ञा में वापस ले जायें; कोई संकुचन नहीं, कोई प्रसार नहीं, उसे रोकना भी नहीं।
यदि यह सब स्वयं होता है तो कोई बात नहीं, लेकिन यदि प्राण की आपूर्ति और उसकी वापसी के साथ ये प्रक्रियाएँ नहीं होती हैं तो इसके लिए चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।
आज्ञा से शरीर में प्राण की आपूर्ति के दौरान प्रकाश रेखाओं का दर्शन होना सबसे महत्त्वपूर्ण बात है।
प्राण की वापसी के दौरान आज्ञा पर प्रकाश रेखाओं का लौटना आवश्यक है।
जिस प्रकार कोयले की आग से हिस्स की ध्वनि के साथ छोटी चिंगारियाँ उड़ती हैं, या पटाखों से चिंगारियाँ छूटती हैं, या वेल्डिंग करते समय चिंगारियाँ उड़ती हैं, उसी प्रकार जब शरीर के विभिन्न अंगों में प्राण की आपूर्ति की जाती है तब आज्ञा से निकल कर अंगों की ओर जाने वाली प्राणिक ऊर्जा का प्रकाश कणों के रूप में मानस-दर्शन करें।
असंख्य प्रकाश रेखाओं के भण्डार के रूप में आज्ञा की कल्पना करें, मानो वह ज्वालामुखी हो और ज्यों ही वह फूटता है, उसमें से प्रकाश कणों की रेखाएँ विद्युत वेग से दौड़ती हैं।
ये प्रकाश रेखाएँ सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो जाती हैं और जब विस्फोट बंद हो जाता है तब वह ऊर्जा प्रकाश रेखाओं के रूप में अपने स्रोत में लौट जाती है और अगले विस्फोट के समय पुन: प्रकट होती है।

अवस्था 9: मूलाधार में प्राण की वापसी

अब अपने प्राण को आज्ञा में वापस ले जायें।

पूरक करें और आज्ञा पर ध्यान केन्द्रित करते हुए श्वास को वहाँ रोक लें। रेचक करें और सुषुम्ना के द्वारा प्राण को आज्ञा से मूलाधार की ओर अवरोहण करने दें। इस अभ्यास को तब तक जारी रखें जब तक यह सुनिश्चित न हो जाए कि समस्त प्राण मूलाधार में लौटा दिए गए हैं।
उसके बाद सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे अपने बाह्य वातावरण के प्रति सजग हो जाएँ।
जब आपकी सजगता पूरी तरह बहिर्मुखी हो जाए तब धीरे से अपने शरीर को हिलाएँ और अपनी आँखों को खोल दें।

हरि ॐ तत्सत्

अभ्यास 2: स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती के साथ प्राण विद्या (बाह्य वितरण)

अवस्था 1: तैयारी

इस अभ्यास में प्राण का बाह्य वितरण होता है।
इसलिए यह सुझाव दिया जाता है कि आप आराम से बैठें या शवासन में लेट जाएँ ताकि आप स्थिर रह सकें।
शरीर और मन को शान्त कर लें।
यदि आप बैठे हुए हैं तो यह सुनिश्चित कर लें कि शरीर का भार दोनों ओर संतुलित है।
अपनी श्वसन प्रक्रिया का अवलोकन आरंभ करें।
श्वास लेते और छोड़ते हुए शरीर को पूर्णतया तनावमुक्त कर दें।
पूर्णत: अचल हो जाएँ।
स्वयं को मानसिक रूप से कहें, 'मैं पूरे अभ्यास के दौरान नहीं हिलूँगा। मैं सजग और सतर्क रहूँगा।'
यह स्मरण रखें कि सजगता का प्रवाह अबाधित रहे; आपकी एकाग्रता भंग नहीं होनी चाहिए।

अवस्था 2: प्राण का जागरण

शरीर के आंतरिक आकाश के प्रति सजग हो जाएँ।

आंतरिक आकाश के अंदर अतीन्द्रिय पथ और चक्रों का मानस-दर्शन करें।
पिंगला नाड़ी के प्रति गहन सजगता का विकास करें।
उसके बाद उज्जायी श्वास को पिंगला की सजगता के साथ समन्वित करें और जीभ को पीछे की ओर मोड़ कर खेचरी मुद्रा लगा लें।
जब आप श्वास लेते हैं तो श्वास पिंगला के सहारे मूलाधार से आज्ञा की ओर आरोहण करती है।
जब आप श्वास छोड़ते हैं तब श्वास सुषुम्ना के सहारे आज्ञा से सीधे मूलाधार की ओर अवरोहण करती है।
पिंगला नाड़ी में श्वास की गति का अनुभव करें।
प्रकाश की त्वरित धारा के रूप में इसका मानस-दर्शन करें।
प्राण को अपनी सजगता और श्वास के साथ पिंगला नाड़ी के द्वारा मूलाधार से आज्ञा में ले जाएँ।
आज्ञा पर श्वास को पाँच सेकण्ड तक रोकें और मानसिक रूप से दुहराएँ, 'आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा, आज्ञा'।
उसके बाद श्वास छोड़ते हुए सजगता को सुषुम्ना के द्वारा मूलाधार में ले जाएँ, प्राण को आज्ञा में ही छोड़ दें।
पूर्ण एकाग्रता के साथ पिंगला नाड़ी के सहारे प्राण का जागरण जारी रखें, ऊर्जा के संचरण का गहनता से अनुभव करें।
इस अभ्यास को तब तक जारी रखें जब तक प्राण के वास्तविक जागरण का अनुभव न हो जाए।
प्रारंभ में 49 चक्रों का अभ्यास करें।
जब आप अभ्यास में निपुण हो जाएँगे तो आपको प्राण के जागरण की अनुभूति सहज रूप से होगी।

अवस्था 3: प्राण का वितरण

आज्ञा चक्र तक प्राण का उत्थान करने के पश्चात् अपनी सजगता को वहाँ केन्द्रित कर दें और संचित प्राण का गत्यात्मक, उज्जवल प्रकाश के रूप में मानस-दर्शन करें।
इस संचित शक्ति के स्पंदन का अनुभव करें।

उसके बाद मानसिक रूप से देखें कि एक दीप्तिमान वृत्त या ऊर्ध्वमुखी त्रिकोण ने आपके शरीर के चारों ओर से घेर रखा है या एक क्रॉस आपके शरीर के आर-पार जा रहा है।
जब इन आकृतियों में से कोई एक आकृति स्पष्ट रूप से दिखायी देने लगे और आप इसे चमकता हुआ देखें तब प्राण का बाहर की ओर एक या सभी दिशाओं में विस्तार करें।
मानसिक रूप से देखें कि प्राणिक प्रकाश आपके भौतिक शरीर से बाहर की ओर फैल रहा है।
यदि आप अब तक इस विधि में कल्पना से आगे नहीं बढ़ पाए हैं तो उसका अनुभव केवल मानसिक स्तर पर होगा।
यदि आपने प्राण का वास्तविक जागरण कर लिया है तो शरीर से तेज, स्पष्ट और चौंधिया देने वाली प्रकाश रेखाएँ निकलेंगी।
अब उज्जायी पूरक करें और अपनी इच्छाशक्ति का प्रयोग करते हुए आज्ञा चक्र से प्राण का प्रसार करें।
यह मानस-दर्शन करें कि प्रकाश ऊर्जा सभी दिशाओं में प्रसारित होकर पूरे शरीर में व्याप्त हो रही है और उसके बाद शरीर के बाहर भी फैल रही है।
उसके बाद रेचक के साथ प्राण को वापस उसके भण्डार, आज्ञा में ले जायें और शिथिल हो जाएँ।
मानसिक रूप से देखें कि प्राण के केन्द्रित होते जाने से उसकी चमक बढ़ती जा रही है।
उज्जायी पूरक एवं रेचक करना जारी रखें, आप देखेंगे कि प्रत्येक पूरक के साथ प्राण का अधिक-से-अधिक विस्तार होता जा रहा है। पहले यह आपके शरीर के चारों ओर के वृत्त, त्रिकोण या क्रॉस को आपूरित कर देता है।
इस प्रक्रिया को कुछ देर तक देखते रहें।
उसके बाद देखें कि यह उस कमरे को आपूरित कर रहा है जिसमें आप अभ्यास कर रहे हैं।
देखें कि हर बार जब आप श्वास लेते हैं तब पूरा कमरा उज्जवल प्रकाश की किरणों से भर जाता है। उसके बाद श्वास छोड़ने पर यह प्रकाश वापस आज्ञा चक्र पर केन्द्रित हो जाता है।

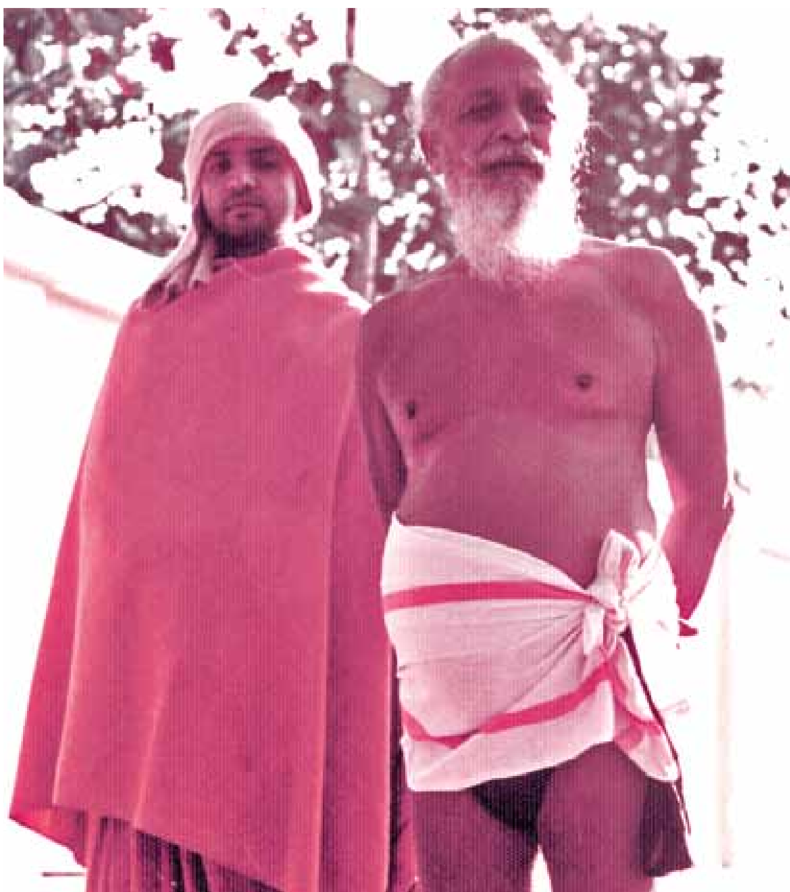
उसके बाद प्राण और आगे फैल कर आपके चारों ओर के वातावरण और पूरे पड़ोस को आवृत्त कर लेता है।
इसका अनुभव करते जाएँ।
प्रयास करते रहने से यह वास्तविक अनुभव बन सकता है।
प्राण के अधिक-से-अधिक क्षेत्रों में; शहर, प्रदेश, पूरे देश में फैलते जाने की सजगता का विकास करना जारी रखें, और प्रत्येक रेचक के साथ प्राण को आज्ञा पर वापस ले आयें।
महत् प्राण शक्ति को पूरे महाद्वीप में फैलता हुआ देखें, प्रत्येक व्यक्ति और वस्तु को उसके आरोग्यकर प्रकाश से ओतप्रोत होता हुआ देखें।
इस आरोग्यकर शक्ति के विस्तार की कोई सीमा नहीं है।
कल्पना करें कि प्राण पूरे संसार को और फिर ब्रह्माण्ड को आच्छादित करने जा रहा है।
इस प्रकार आप अपने प्राण को ब्रह्माण्डीय प्राण में विलीन कर दें।

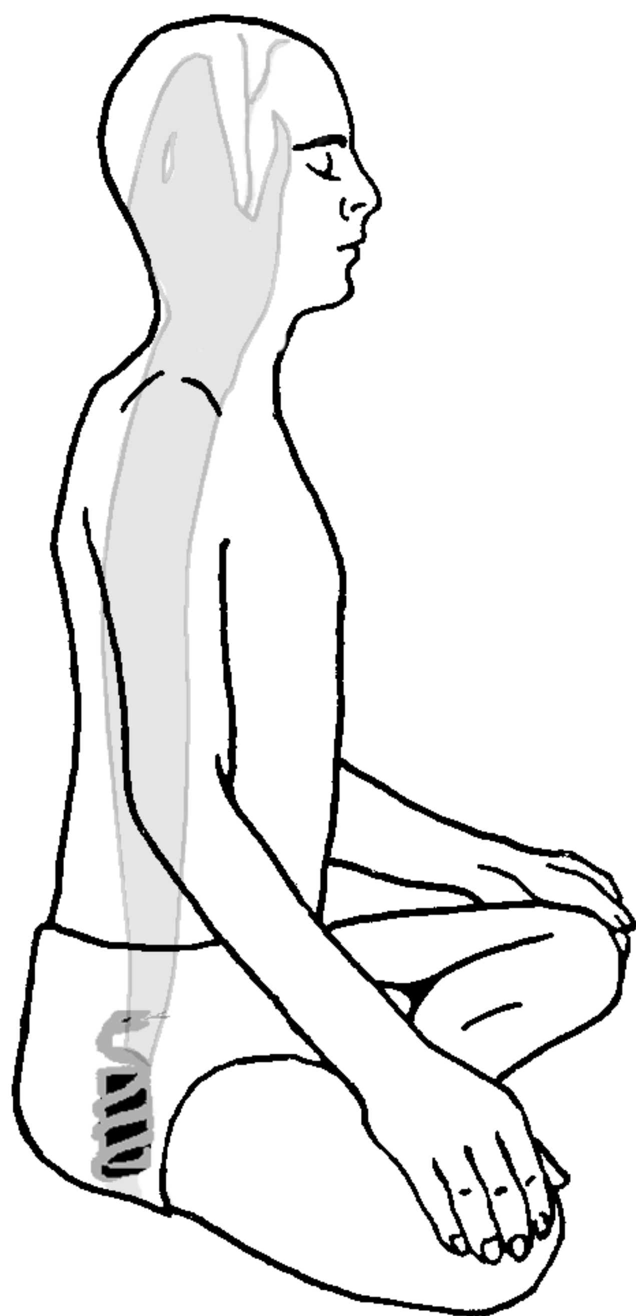
अवस्था 4: अभ्यास की समाप्ति

अभ्यास को समाप्त करने के लिए प्राण को आज्ञा में वापस ले आयें, सजगता को इस चक्र पर रखें और उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास करें।
यह जाँच लें कि आपने समस्त प्राण आज्ञा में लौटा दिए हैं।
आपने अपने भौतिक शरीर के चारों ओर जिस दीप्तिमान वृत्त, त्रिकोण या क्रॉस का घेरा डाला है उसके प्रति सजग हो जाएँ।
इस दीप्तिमान आकृति से घिरे हुए अपने शरीर का मानस-दर्शन करें।
जब यह सजगता बिल्कुल स्पष्ट हो जाए तब इस दीप्तिमान आकृति का विलोपन आरंभ करें।
पुनः आज्ञा पर ध्यान केन्द्रित करें और रेचक करते हुए सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा प्राण को मूलाधार में तब तक लौटाना जारी रखें जब तक समस्त प्राण अपने स्रोत में वापस न आ जाएँ।
धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक सामान्य शारीरिक चेतना में लौट आएँ।
भौतिक वातावरण और अपनी इन्द्रियों की अनुभूति के प्रति सजग हो जाएँ।
जमीन से शरीर के सम्पर्क का अनुभव करें, चेहरे, हाथों और पैरों पर वायु के स्पर्श का अनुभव करें, मुँह के अंदर किसी प्रकार के स्वाद की अनुभूति और वायु में फैली किसी भीनी सुगंध के प्रति सजग हो जाएँ।

आस-पास के वातावरण के प्रति सजग हो जाएँ और सभी दिशाओं से आने वाली ध्वनियों को सुने।
इन ध्वनियों के माध्यम से सजगता को पूर्ण रूप से बहिर्मुख कर लें।
दिन के प्रहर को, कमरे में अपनी स्थिति को याद करें।
अभ्यास अब पूरा हुआ।
धीरे-धीरे अपने शरीर को हिलाएँ और जब आप तैयार हों तब अपनी आँखों को खोल दें।

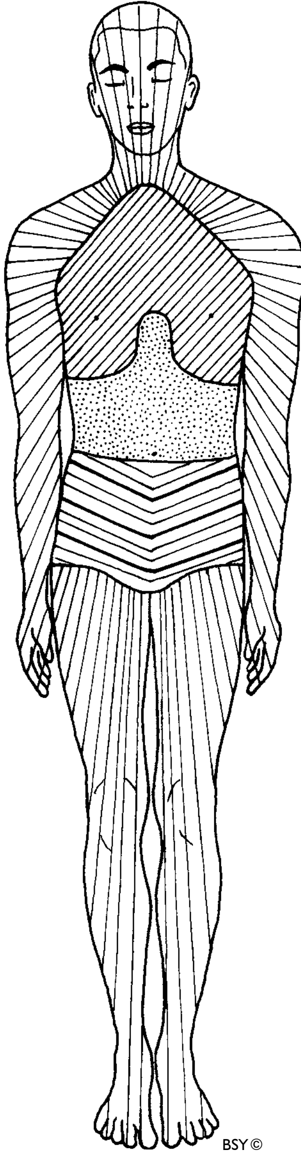
हरि ॐ तत्सत्





परिशिष्ट

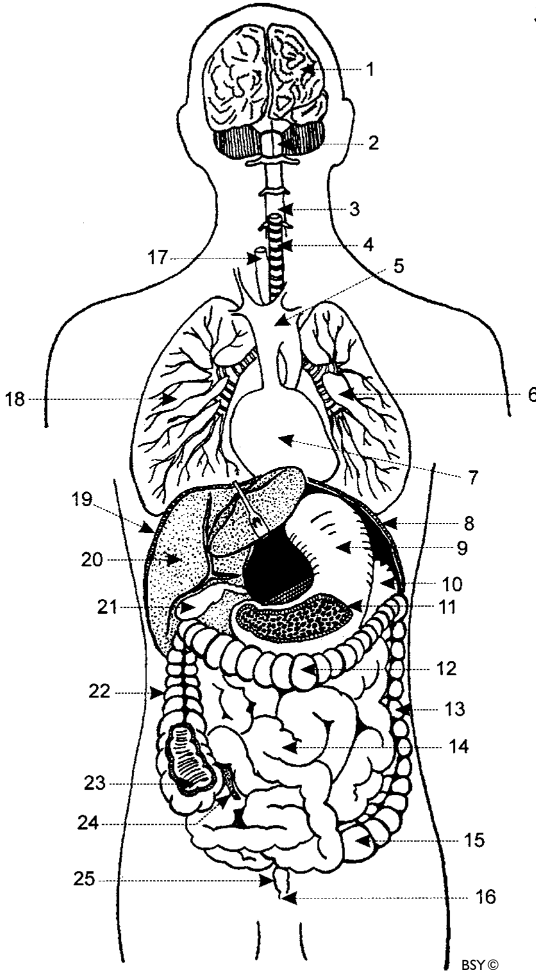
प्राणिक शरीर





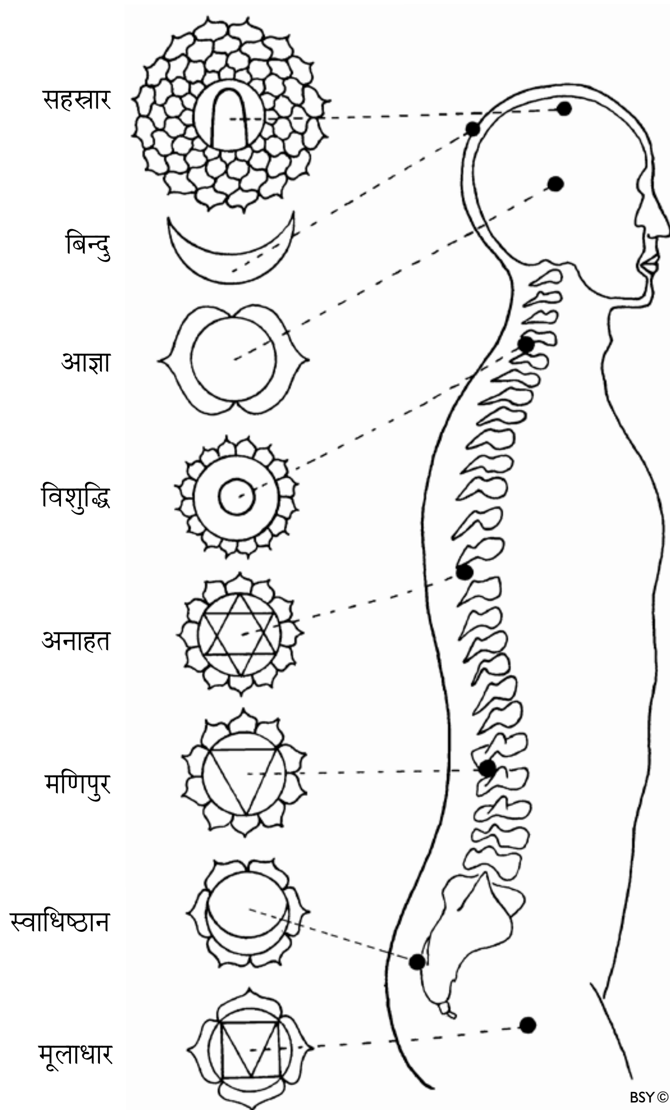
उदान
प्राण
समान
अपान
व्यान (पूरे शरीर में व्याप्त रहता है)

आतंरिक अंग



1. मस्तिष्क	2. रीढ़ की हड्डी	3. कशेरुका दण्ड	4. श्वास-प्रणाली
5. महाधमनी	6. बायाँ फेफड़ा	7. हृदय	8. मध्य-पटल
9. आमाशय	10. प्लीहा	11. अग्न्याशय	12. अनुप्रस्थ स्तम्भ (बड़ी आँत)
13. अवरोही स्तम्भ	14. छोटी आँत	15. अवग्रह स्तम्भ	16. गुदा
17. ग्रासनली	18. दायाँ फेफड़ा	19. मध्य पटल	20. यकृत
21 पित्ताशय	22. आरोही स्तम्भ	23. सीकम	24. पुच्छ
25. मलाशय			

चक्रों की स्थिति



अभ्यासों की सूची

अध्याय 9: आधारों का विकास

अध्याय 10: प्राण निद्रा

अध्याय 11: प्राण का जागरण एवं संचार

अध्याय 12: प्राण का उत्थान एवं संचय

अध्याय 13: प्राण का प्रसार, साम्यता एवं संकुचन

अध्याय 14: प्राण का वितरण

अध्याय 15: स्व-उपचार

अध्याय 16: दूसरों का उपचार

अध्याय 17: उच्च प्राण विद्या गुरुओं के साथ



नोट

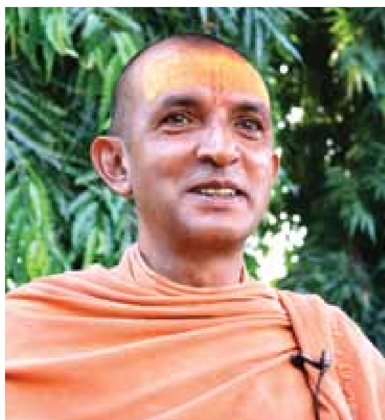


स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का जन्म उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा ग्राम (उत्तरांचल) में सन् 1923 की मार्गशीर्ष पूर्णिमा को हुआ। उनमें बाल्यावस्था से ही आध्यात्मिक जीवन के प्रति झुकाव था और विलक्षण प्रतिभाएँ परिलक्षित होती थीं। 18 वर्ष की अवस्था में उन्होंने गुरु की खोज में घर छोड़ दिया। 1943 में उन्हें ऋषिकेश में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द के दर्शन हुए। 12 सितम्बर 1947 को गुरु ने उन्हें परमहंस संन्यास में दीक्षित किया। वे 12 वर्ष गुरु की सेवा में रहे और आध्यात्मिक जीवन के हर आयाम में दक्षता प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होंने परिव्राजक संन्यासी के रूप में आठ वर्षों तक सम्पूर्ण भारत, अफगानिस्तान, बर्मा, नेपाल एवं श्रीलंका का भ्रमण किया। इस अवधि का उपयोग उन्होंने यौगिक तकनीकों को प्रतिपादित एवं परिष्कृत करने में किया, ताकि मानवता को कष्टों से त्राण मिल सके।

योग की प्राचीन पद्धति को आधुनिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की आवश्यकता का अनुभव होने पर उन्होंने 1956 में अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल एवं 1963 में बिहार योग विद्यालय की स्थापना की। अगले 20 वर्षों तक विश्व भ्रमण करते हुए उन्होंने योग की पताका विश्व के कोने-कोने में फहरा दी और बिहार योग विद्यालय को योग की एक अग्रगण्य संस्था के रूप में ख्याति दिलायी। उन्होंने योग, तंत्र एवं आध्यात्मिक जीवन पर अस्सी से अधिक ग्रन्थों का प्रणयन किया।

'सत्यानन्द योग' एक ऐसी परम्परा बन गयी, जिसमें शास्त्रीय और अनुभवात्मक ज्ञान तथा आधुनिक दृष्टिकोण का सुन्दर समन्वय है। ग्राम्य-विकास की भावना से 1984 में उन्होंने दातव्य संस्था 'शिवानन्द मठ' की एवं योग पर वैज्ञानिक शोध की दृष्टि से 'योग शोध संस्थान' की स्थापना की। सन् 1988 में उपलब्धियों के शिखर पर पहुँचकर उन्होंने सबकुछ त्याग दिया और क्षेत्र संन्यास लेकर परमहंस संन्यासी की जीवन पद्धति अपना ली। सन् 1989 में उन्हें रिखिया आने का दैवी आदेश हुआ, यहाँ उन्होंने एकान्तवास करते हुए उच्च वैदिक साधनाएँ कीं। सन् 1991 में अपने पड़ोसियों को सुविधाएँ उपलब्ध कराने का आदेश मिलने पर उन्होंने आश्रम को उस क्षेत्र के अभावग्रस्त ग्रामीणों की सहायता करने की अनुमति दी। सन् 1995 में उन्होंने वैश्विक सुख, शान्ति एवं समृद्धि का संकल्प लेकर बारह वर्षीय राजसूय यज्ञ आरम्भ किया और सन् 2007 में 'सेवा, प्रेम और दान' को अपनी मुख्य गतिविधि बनाने का आदेश देकर रिखियापीठ की स्थापना की घोषणा की।

स्वामी सत्यानन्द 5 दिसम्बर 2009 की मध्यरात्रि में अपने शिष्यों की उपस्थिति में महासमाधि में लीन हो गये।



स्वामी निरंजनानन्द का जन्म छत्तीसगढ़ के राजनाँदगाँव में सन् 1960 में हुआ। जन्म से ही उनकी जीवन-दिशा उनके गुरु, स्वामी सत्यानन्द सरस्वती द्वारा निर्देशित रही। चार वर्ष की अवस्था में वे गुरु-सान्निध्य में रहने बिहार योग विद्यालय आये, जहाँ उनके गुरु ने योग निद्रा के माध्यम से उन्हें योग एवं अध्यात्म का गहन प्रशिक्षण प्रदान किया। सन् 1971 में वे दशनामी संन्यास परम्परा में दीक्षित हुए, तत्पश्चात् 12 वर्षों तक विभिन्न देशों की यात्राएँ कर विभिन्न संस्कृतियों की गहरी समझ प्राप्त की और सब जगह अपने गुरु के योग-प्रचार कार्य को आगे बढ़ाया।

सन् 1983 में गुरु-आज्ञानुसार भारत लौटकर वे बिहार योग विद्यालय, शिवानन्द मठ तथा योग शोध संस्थान की गतिविधियों के संचालन में संलग्न हो गए। सन् 1990 में वे परमहंस-परम्परा में दीक्षित हुए और 1993 में स्वामी सत्यानन्द के उत्तराधिकारी के रूप में उनका अभिषेक किया गया। सन् 1994 में उन्होंने विश्व के प्रथम योग विश्वविद्यालय, बिहार योग भारती; सन् 2000 में योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा सन् 1995 में बच्चों के एक बृहत् योग आन्दोलन, बाल योग मित्र मण्डल का शुभारम्भ किया। मुंगेर में विभिन्न गतिविधियों का संचालन करने के साथ उन्होंने दुनियाभर के साधकों का मार्गदर्शन करने हेतु व्यापक रूप से यात्राएँ कीं। सन् 2009 में उन्हें अपने गुरु से संन्यास जीवन का एक नया अध्याय शुरू करने का आदेश प्राप्त हुआ।

सन् 2010 में उन्होंने साधकों को भारत की आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं के मौलिक स्वरूप का अनुभव कराने के प्रयोजन से संन्यास पीठ की स्थापना की। इसी वर्ष से उनके जीवन में उच्च साधनाओं एवं तीर्थयात्राओं का दौर शुरू हुआ।

सन् 2013 में उन्होंने मुंगेर में बिहार योग विद्यालय की स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में विश्व योग सम्मेलन आयोजित किया और यौगिक पुनर्जागरण का शंखनाद किया। इसी वर्ष से उन्होंने दु:साध्य पंचाग्नि तपस्या प्रारम्भ की। सन् 2014 में उन्होंने देशभर में योग का प्रसाद वितरित करने हेतु योगयात्राओं का सिलसिला प्रारम्भ किया। तब से वे यौगिक शिक्षण के उस नए अध्याय को विकसित करने में संलग्न हैं, जिसके माध्यम से लोग अपने यौगिक अनुभव को गहन कर सकेंगे। साथ ही वे भारत की अनेक प्राचीन विद्याओं एवं परम्पराओं की पुनर्प्रतिष्ठा हेतु प्रयासरत हैं।

स्वामी निरंजनानन्द योग दर्शन, अभ्यास एवं जीवनशैली की गहन जानकारी और समझ रखते हैं तथा योग, तंत्र एवं उपनिषदों पर अनेक प्रमाणिक पुस्तकों के प्रणेता भी हैं। प्राचीन तथा अर्वाचीन परम्पराओं का सुन्दर सम्मिश्रण करते हुए वे इस समय मुंगेर में अपने गुरु के मिशन को आगे बढ़ाने के कार्य में संलग्न हैं।



प्राण विद्या शास्त्रीय परम्परा का एक उच्च यौगिक अभ्यास है, जिसे बिहार योग पद्धति के अनुरूप व्यावहारिक स्वरूप दिया गया है। इसमें प्राण का गहन अन्वेषण करना और अस्तित्व के इस मूल तत्त्व को उपयुक्त दिशा प्रदान करने की क्षमता का विकास करना सम्मिलित है। इसका अभ्यास न केवल चेतना के सूक्ष्म स्तरों तक ले जाता है, बल्कि यह उपचार की प्रभावकारी विधि भी है।

इस पुस्तक में दो खण्ड हैं। पहला खण्ड यौगिक, अंतर्-सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोणों से प्राण विद्या के सैद्धान्तिक पक्ष पर प्रकाश डालता है। दूसरे खण्ड में प्रारम्भिक एवं मूल विधियों से आरम्भ कर क्रमश: उच्च विधियों के अभ्यासों को सम्मिलित किया गया है। इसके विस्तृत अभ्यास साधक में प्राण की सूक्ष्म सजगता उत्पन्न कर, उसे नियन्त्रित करने की क्षमता प्रदान करते हैं, जिसके फलस्वरूप प्राण को उपयुक्त दिशा में प्रेषित करने की दक्षता प्राप्त होती है।

'प्राण विद्या' का पूर्वभाग 'प्राण एवं प्राणायाम' पुस्तक प्राण विद्या के अभ्यासों के लिए प्राण की मौलिक समझ, सजगता और नियंत्रण का आधार प्रदान करती है।



ISBN bar code:
978-81-949328-0-2